₹60

हिन्दी भाषियों की मासिक पत्रिका

क्रान्ति

जनवरी 2020



सहिष्णुता

इस्लाम का स्वभाव

विशेषांक

Sweets

Shabana's



Tingle's your taste buds...

Delicious Sweets

Sweets Cake Cookies
Snacks Bread Toast
and others bakery Products

Our Branches :

Shabana M Bakery
Chhaoni

Afzal Bakery
Near Friends Colony

Shabana's Bakery
Sadar

Shabana's
Near Futala Lake

New Shabana Bakery
Godhni Road

Shabana Bakery
Officer's Club



Sweets

Shabana's





SHABANA MODERN BAKERY Chhindwara Road, Chhaoni, Nagpur - 440013.
Call + 91 7122594571 / + 91 9766580395

LIKE US ON
www.facebook.com/shabanabakery

BUY ONLINE
www./shabanabakery.in

fssai
FSSI. 11511054001880

KEEP YOUR CITY
CLEAN & GREEN


اللہ کے رسول ﷺ نے ارشاد فرمایا۔
میں اچھے اخلاق کو مکمل کرنے کے لئے بھیجا گیا ہوں
(مؤطہ اِما مالک:705)
sagar
With best compliment from
SAGAR FEEDS & FOODS
PROCESSING INDUSTRIES
PLOT NO.L -21,GIDC CONCOLIM INDUSTRIAL STATE
CONCOLIM, 403 703, GOA,Email: sagarffpi@gmail.com

ADAM'S HOME ENGLISH MISSION SCHOOL

Noornagar,Near Waris Colony Mango,Jamshedpur



Providing :Value based Education,
Personalised Care and Individual Attention,
Experrienced,Dedicated, and Committed Staff.

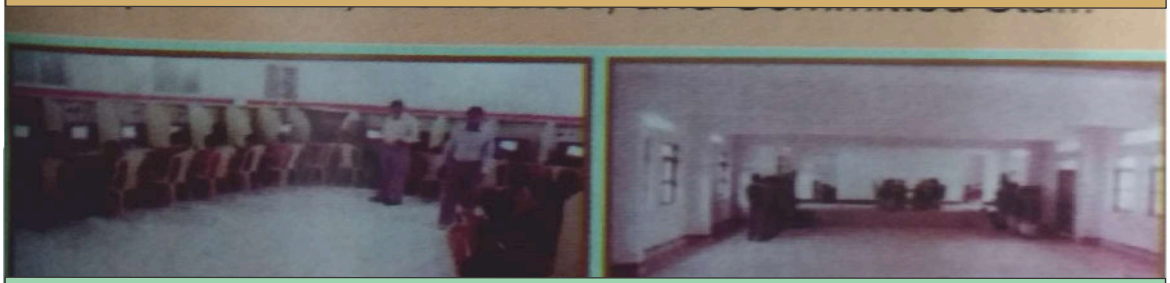

No Objection Certificate (NOC) granted by Govt.Of Jharkhand for affiliation to ICSE board New Delhi

Choudhary Hasibur Rahman
Secretary
Mob.:9934176679

Prof. Susanna Hansdak
Director
Mob.:9431154812

Run & Managed By:
Noorun Nisa Education & Welfare Society(Regd.)
Ph:0657 6419169

رسول اللہ ﷺ نے فرمایا: وہ شخص جنت میں داخل نہیں ہوسکتا جس کی برائیوں سے اس کا پڑوسی محفوظ نہ ہو۔ (صحیح مسلم حدیث:۴۶)

With Best Compliments from

QUALITY EXPORTS

Seafood processors & Exporters



For More detail contact:
Factory: Plot Nos.SB.64 to 71,Cuncolim Industrial Estate,
Cuncolim - Goa 4030703
Tel:9183202865610,11,12 Fax:91 83202865609
Email:qualityexportsgpa@gmail.com

افضل جہاد • رسول اللہ ﷺ نے فرمایا: ''سب سے افضل جہاد، ایک ظالم بادشاہ کے سامنے حق بات کہنا ہے''۔ (سنن ابوداؤد، حدیث نمبر ۴۳۸)



55, Maruti Lane, Near Handloom House,
Fort, Mumbai-400 001, Ph.: 22661438,22675328

نبی کریم ﷺ نے فرمایا: ''جس گھر میں اللہ کا ذکر کیا جاتا ہے اور جس گھر میں اللہ کا ذکر نہیں ہوتا ان کی مثال زندہ اور مردہ شخص کی ہے۔ (صحیح مسلم: ۷۷)

HINDUSTAN
Paver & Blocks
Group
Established Since 1977

Anwar Khan
+91-9822427700

Akbar Khan
+91-9822497700

HINDUSTAN INDUSTRIES
HINDUSTAN INDUSTRIES

Dealing in All type of Empty Gunny / Plastic/ PVC bags, M.S Scrap, Rubber Products like tyres, tubes, flaps, compound, butyl, bladder, Containers, Paper, Wooden & Cartoon Scrap .



Manufacturers Of Solid Concrete Blocks



Colvale IDC,Colvale,Mapusa-Goa
Phone : 0832 2257700, 0832 2257900
Email : hindustanindustriesgoa@gmail.com

www.hindustangroupgoa.com

RASHTRIYA TECHNICAL INSTITUTE

AN ISO 9001:2008 CERTIFIED INSTITUTE

ملک اور بیرون ملک میں نوکری اور تعلیم کے لئے

E-mail:rtijsr@gmail.com



JCB.Operator



Mobile Crane



Auto Cad Draftsman



Councelling



Pipe Fitters



NDT Level.11

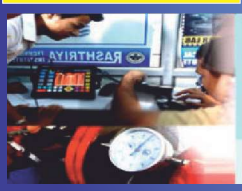



SPECIALITY

.1-We have divided our course into three parts, theoretical, practical, and then knowledge sharing part.
.2-The student can avail the benefit of different fee structure.
.3-The lab of the different courses is well equipped with the latest equipments.
.4-Regular / Alternate Classes 100% Theory and Practical classes.
.5-There is a provision of Plant Visit and on site job practical.Preparation to face interview.
.6-Teaching language and note (Hindi/English) Well-researched course material for all the courses.
.7-Hostel facility.
.8-Optional classes for the support of all category of trade.
.9-Special attention for non-matric student.

- Are 6G Welding
- Tig (Argon) 6G Welding
- Store Keeper
- Material Management
- Civil Fore man
- Plant Air Condition
- Piping QC
- English Spoken

Near Hanuman Mandir,Opp. Gandhi Maidan, Azadnagar,Jamshedpur
Jharkhand, Phone:0652-2364067,9334858068,9334617411,www.rtijsr.com

आपकी आशाओं का सुन्दर प्रतिबिम्ब

हिन्दी भाषियों की मासिक पत्रिका

कान्ति

वर्ष 29 अंक 07 जनवरी 2020

अगर तेरे रब की इच्छा यह होती (कि ज़मीन में सब ईमान वाले और आज्ञाकारी ही हों), तो ज़मीन के सारे वासी ईमान ले आये होते। फिर क्या तू लोगों को मजबूर करेगा कि वे ईमान वाले हो जाएं ? **–क़ुरआन**

संपादक

डॉ० मुहम्मद अहमद

अपने विचार, लेख, रचनाएं भेजने एवं संपादकीय मामलों के लिए लिखें–

संपादक, 'कान्ति' मासिक

डी-314, दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव

जामिया नगर, नयी दिल्ली–110025

ई मेल editorkanti@yahoo.com

* * *

ख़रीदार बनने, एजेंसी लेने, प्रचार-प्रसार एवं प्रबंधकीय मामलों के लिए लिखें–

प्रबंधक, 'कान्ति' मासिक

डी-314, दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव

जामिया नगर, नयी दिल्ली–110025

ई मेल managerkantidelhi@gmail.com

* * *

फ़ोन संपादकीय एवं प्रबंधकीय

011-26949430, 09818799223

सहयोग राशि

एक प्रति रु० 25/- विशेषांक रु० 60/-

वार्षिक रु० 270/-, दो वर्ष 500/-

पांच वर्ष 1100/-, आजीवन रु० 6000/-

सऊदी अरब और खाड़ी के देशों से–110 रियाल

यूरोप व अमेरिका से–40 US डॉलर

वेब : **www.kanti.in**

चेक / ड्राफ्ट **'कान्ति'** के नाम से बनवाएं

कुछ इस विशेषांक के बारे में

मानवों की मूल-रचना में प्राकृतिक रूप से जो सकारात्मक गुण स्रष्टा ने रख दिये हैं, उनमें एक प्रमुख गुण 'सहिष्णुता'' है । व्यक्ति-व्यक्ति, समाज-समाज और क़ौम-क़ौम के बीच इसी सहिष्णुता, सद्भावना एवं सौहार्द्र के आधार पर सहअस्तित्व एक ऐतिहासिक तथ्य है ।

परन्तु उपरोक्त के ठीक विपरीत, असहिष्णुता का भी अतीत साक्षी रहा है और वर्तमान भी इससे जूझ रहा है । विडम्बना यह है कि असहिष्णुता में अग्रसर रहने वाले कुछ तत्व, असहिष्णुता का लांक्षण इस्लाम-धर्म तथा उसके अनुयायियों पर मढ़ देते हैं ।

हमारे प्रिय देश में गत कुछ वर्षों से सहिष्णुता (Tolerance) और असहिष्णुता (Intolerance) पर काफ़ी वाद-विवाद हुए हैं । इस समय काल में असहिष्णुता की, बड़े जघन्य अपराधों तथा अत्यंत शोचनीय दुर्घटनाओं की अनुभूति होती रही है । जो तत्व जितने ही अधिक असहिष्णु रहे हैं वे उतना ही इस्लाम तथा उसके अनुपालकों पर असहिष्णु होने का आक्षेप करते हैं । इस परिस्थिति में देश के अधिकतर निवासी जो सामाजिक सद्भाव, सौहार्द्र, शांतिमय रहन-सहन तथा उदारता के इच्छुक हैं, अहिष्णुता की आक्रामक भूमिका के आगे उन्हें कुछ प्रभावकारी विकल्प नहीं सूझ रहा है । वे इस्लाम की तथाकथित असहिष्णुता के नाम पर काफ़ी भ्रमित से रहते हैं ।

इस विशषांक में इसी कमी को दूर करने तथा इसी ज़रूरत को पूरा करने का प्रयास किया गया है । प्रकाशित सामग्री के निष्ठापूर्ण अध्ययन से यह तथ्य सहज रूप से विदित होगा कि 'धम'–विशेषत: वह धर्म जो मूल रूप से तथा पूर्णरूपेण ईश-निर्मित, ईश-केन्द्रित, ईशोन्मुखी तथा ईश-संचालित हो–विभिन्न समुदायों, जातियों-प्रजातियों, क़ौमों और राष्ट्रों के बीच उदार एवं सहिष्णु समाज बनाने में सक्षम है, क्योंकि विश्व में मात्र 'एक ही' हस्ती है जो हर मनुष्य की, आधारभूत स्तर पर हितैषी है और वह 'ईश्वर' है । इस्लाम ऐसा ही धर्म है और उस के अनुयायी अपनी अधि काधिक कमियों-कमज़ोरियों के बावजूद थोड़े अपवाद के साथ, इस धर्म के उच्च मूल्यों के अनुपालक हैं ।



कहां क्या है ?

कुछ इस विशेषांक के बारे में		9
संदेश	–सैयद सआदतुल्लाह हुसैनी	11
नबियों की शिक्षा में सहिष्णुता (संपादकीय)		13
सहिष्णुता : इस्लाम का स्वभाव	–मुशर्रफ़ अली	15
सहअस्तित्व और सौहार्द्र	–मुहम्मद ज़ैनुल आबिदीन मंसूरी	19
ईश्वर द्वारा निर्धारित जीवन व्यवस्था	–मुहम्मद शकील शम्सी	23
इस्लाम में सहिष्णुता एवं उदारता	–नुज़हत यासमीन	25
आदर्श समाज के निर्माण में इस्लाम की शिक्षाएं	–जुनैद अली	27
इस्लामी शासन में ग़ैर-मुस्लिमों के अधिकार	–वारिस हुसैन	31
इस्लाम में मानवाधिकार	–गुलज़ार सहराई	37
अधिकारों की प्राप्ति का आधार धर्म नहीं, मानवता!	–एम॰ आई॰ शेख़	41
माल ख़र्च करने में अक़ीदे का हस्तक्षेप?	–डॉ॰ वक़ार अनवर	45
आर्थिक क्षेत्र में सहिष्णुता	–डॉ॰ फ़रहत हुसैन	47
इस्लाम और विश्वबंधुत्व	–ख़ान शाहीन	50
धार्मिक सहिष्णुता और इस्लाम	–सफ़ात आलम मदनी	67
छुआछूत के भेदभाव के बिना जनसेवा	–संपादन प्रभाग	70
इस्लाम, मुसलमान और उदारता	–मुहम्मद अहमद फ़लाही	71
शासन-प्रशासन में मानवाधिकार और दयालुता	–डॉ॰ फ़रहत हुसैन	73
युद्ध में उदारता की शिक्षाएं	–वारिस हुसैन	77
आदेश हुआ कि मस्जिद गिरा दी जाए...	–ख़ान यासिर	81
भारत के मुस्लिम बादशाहों की उदारता	–मुहम्मद अहमद फ़लाही	83
अंग्रेज़ी शासनकाल में हिन्दू-मुस्लिम एकता	–मुहम्मद अहमद फ़लाही	85
''इस्लाम ही सत्य धर्म है'' क्या यह कहना...	–मुहम्मद ज़ैनुल आबिदीन मंसूरी	87
इस्लाम पर असहिष्णुता का आरोप कितना सच ?	–जुनैद अली	91
बुर्क़ा : अनुचित और तर्कहीन विरोध क्यों?	–सुफ़ियान अहमद	95
'फ़त्वा' और 'काफ़िर' जैसे शब्दों की वास्तविकता	–मुहम्मद ज़ैनुल आबिदीन मंसूरी	97
धरती पर ये विभिन्न धर्म क्यों ?	–नीलोफ़र शम्सी	101
इस्लाम ने सहिष्णुता और सार्वभौमिक स्वीकृति का पाठ पढ़ाया	–नक़ीबुल हसन	103
इस्लाम और धार्मिक सहिष्णुता	–शुऐब आलम क़ासिमी	105
इबादत की आज़ादी	–अबुल फ़हम वहीद अली ख़ां	107

संदेश

सहिष्णुता के विषय पर 'कान्ति' मासिक के इस विशेषांक को प्रस्तुत करते हुए बहुत ख़ुशी हो रही है ।

धर्मों और उनके अनुयायियों के बीच क्या संबंध हो? यह सवाल आज पूरी दुनिया में बहस का विषय बना हुआ है और यह उन महत्वपूर्ण सवालों में से एक है, जिस पर दुनिया की शान्ति-व्यवस्था निर्भर करती है । एक ओर वे लोग हैं जो धर्म का उपयोग इन्सानों के बीच नफ़रत, बिगाड़ और युद्ध के लिए करते हैं, और दूसरी ओर वे हैं जो परेशान होकर धर्म की रचनात्मक भूमिका को समाप्त करना चाहते हैं या सीमित करना चाहते हैं ।

इस्लाम ने धर्मों के बीच संबंध के मुद्दे को बहुत बुनियादी स्तर पर, अर्थात आस्था के स्तर पर संबोधित किया है । धर्म के मामले में ज़बरदस्ती, इस्लाम के किसी सिद्धांत का ही उल्लंघन नहीं है, बल्कि यह इसकी मूल मान्यताओं के विरुद्ध है । इस्लाम के अनुसार, यह दुनिया एक परीक्षा स्थल है और अल्लाह मनुष्य को आज्ञानुपालन और उल्लंघन की स्वतंत्रता देकर उसकी परीक्षा लेना चाहता है । अगर कोई किसी को इस्लाम स्वीकार करने के लिए मजबूर करता है, तो वह अल्लाह की योजना में हस्तक्षेप करता है । धार्मिक स्वतंत्रता का इस्लाम की पूरी योजना में और विश्व दृष्टिकोण में मौलिक स्थान है ।



इस्लाम सभी धर्मों के मानने वालों को अपने धर्म पर बने रहने की स्वतंत्रता देता है । स्वयं अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के समय में, मदीना में ईसाई, यहूदी और मूर्तिपूजक मौजूद थे । अल्लाह के रसूल ने उनके साथ अच्छा व्यवहार करने की शिक्षा दी । इस्लाम चाहता है कि विभिन्न धर्मों के मानने वालों के बीच बातचीत और संवाद का एक स्वस्थ संबंध स्थापित हो । ईमानदारी के साथ सत्य की खोज इन संवादों का वास्तविक उद्देश्य हो । दुनिया में ज्ञान के हरेक विभाग में ऐसे कई मुद्दों पर गंभीर मतभेद हैं, लेकिन उन सभी विरोधाभासी विचारों के विद्वान अपनी-अपनी विचारधारा पर क़ायम रहते हुए और एक-दूसरे के साथ बौद्धिक संवाद करते हुए भी जब एक ही अकादमिक समुदाय के सदस्य बने रह सकते हैं, तो आख़िर क्या वजह है कि यही अपेक्षा धर्मावलंबियों से न रखी जाए ?

जिस तरह उपरोक्त विचारों के धारकों से यह अपेक्षा नहीं की जाती कि वे इन विचारों के समर्थन और विरोध दोनों को एक साथ सही ठहराएं, उसी तरह यह अपेक्षा धर्मावलंबियों से भी नहीं रखनी चाहिए कि वे एक साथ विरोधाभासी विचारों को सही ठहराएंगे । जिस तरह विभिन्न विचारों पर चर्चा और संवाद करते हुए भी प्रत्येक विभाग के विद्वान एक-दूसरे के साथ सुखद मानवीय संबंध रख सकते हैं, वही संबंध धर्मावलंबी भी रख सकते हैं ।

धर्मों के मानने वालों के बीच संबंध का जो मॉडल इस्लाम पेश करता है वह अत्यधिक उचित और मानवीय भी है और पूर्ण रूप से व्यावहारिक भी । अल्लाह तआला इस दस्तावेज़ी विशेषांक को हमारे देश में, विशेष रूप से और सारी दुनिया में विभिन्न धर्मों के अनुयायियों के बीच मधुर संबंधों के विकास का माध्यम बनाए ।

–सैयद सआदतुल्लाह हुसैनी
चेयरमैन
दावत ट्रस्ट

''पूरब और पश्चिम सब अल्लाह के हैं । जिस ओर भी तुम रुख़ करोगे, उसी ओर अल्लाह का रुख़ है । अल्लाह सर्वव्यापी और सब कुछ जानने वाला है ।''

(क़ुरआन, 2:115)



A WELL WISHER

PATNA

संपादकीय

नबियों की शिक्षा में सहिष्णुता

आज के इस ग्लोबल विलेज के दौर में दुनिया के विभिन्न भागों में बसने वाले मानव समाज एक दूसरे के निकट आ गये हैं । अलग-अलग विशेषताओं और गुणों वाले समुदायों के शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व के लिए एक दूसरे का सम्मान और सहिष्णुता सबसे महत्वपूर्ण है । विशेष रूप से धार्मिक सहिष्णुता, जिसे लेकर आज दुनिया भर में उहापोह की स्थिति बनी हुई है । अपने विषय ''सहिष्णुता : इस्लाम का स्वभाव'', को समझने के लिए हमें इस्लाम की मौलिक अवधारणाओं में से ईशदूतत्व की अवधारणा को समझना होगा । इस्लाम ईश्वर के दूतों या अल्लाह के नबियों में विश्वास करता है, जैसा कि यहूदी और ईसाई धर्म में भी है। इस अवधारणा के अनुसार ईश्वर ने दुनिया में मानव जाति को भेजने के साथ ही उसके मार्गदर्शन के लिए नबियों और रसूलों को खड़ा करने का सिलसिला शुरू किया । धर्म की स्वतंत्रता के इस्लामी दृष्टिकोण को समझने का एक तरीका यह है कि हम नबियों और दूतों की भूमिका को देखें । क्या उन्हें इसलिए भेजा गया था कि वे जबरदस्ती लोगों से अपनी शिक्षाओं का पालन कराएं ? क्या इबराहीम, मूसा, ईसा या मुहम्मद (अलै॰) को सर्वशक्तिमान ईश्वर ने यह आदेश दिया कि वे तलवार के माध्यम से लोगों पर अपनी शिक्षाएं थोपें ? बिलकुल नहीं! इस्लाम के पवित्र ग्रंथ कुरआन में ईश्वर अपने दूतों के दायित्व को रेखांकित करते हुए स्पष्ट शब्दों में कहता है : ''अल्लाह के संदेष्टा के उत्तरदायित्व में इसके अतिरिक्त कुछ नहीं कि संदेश पहुँचा दे (उसका पालन करना या न करना तुम्हारा काम है), और जो कुछ तुम खुले रूप में करते हो और जो कुछ छिपा कर करते हो अल्लाह के ज्ञान से छिपा नहीं।'' (5 : 99) एक बार मक्का के लोगों ने पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) से कहा कि अगर ईश्वर नहीं चाहता कि हम मूर्तियों की पूजा करें, तो वह जबरदस्ती हमें ऐसा करने से रोक क्यों नहीं देता। तब ईश्वर ने अपने नबी के माध्यम से निम्नलिखित संदेश भेजा : (हे मुहम्मद) यह कोई नया बहाना नहीं है ऐसी ही नीति उन लोगों ने भी अपनाई थी, जो इनसे पहले गुज़र चुके हैं। फिर (बताओ!) पैग़म्बरों के उत्तरदायित्व में इसके अतिरिक्त और क्या है कि साफ़-साफ़ सत्य संदेश पहुँचा दें। (16 : 35) जैसा कि कुरआन के अध्ययन से पता चलता है, ईश्वर के पैग़म्बरों और दूतों का मिशन लोगों पर अपनी शिक्षाओं को जबरदस्ती थोपना नहीं था, बल्कि उनका मार्गदर्शन करना और उन्हें अपनी इच्छा से ईश्वर को स्वीकार करने के लिए कहना था । एक वह्य में ईश्वर पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) से कहता है : '' यदि (इस प्रकार समझा देने पर भी) ये लोग विमुखता अपनाएं तो (ऐ पैग़म्बर !) हमने कुछ तुम को उन पर दारोग़ा बनाकर नहीं भेजा है । तुम्हारे लिए तो बस अल्लाह के आदेश का पहुंचा देना ही है (मानना या न मानना सुनने वालों का काम है)।'' (क़ुरआन, 42:48)

क़ुरआन स्पष्ट रूप से कहता है कि आस्था किसी पर भी जबरदस्ती नहीं थोपी जा सकती : ''धर्म के संबंध में किसी प्रकार की ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं (क्योंकि वह दिल की आस्था से संबंध रखता है और अत्याचार एवं उत्पीड़न से आस्था उत्पन्न नहीं की जा सकती)। निस्संदेह सन्मार्ग पथभ्रष्टता से अलग और स्पष्ट हो गया है और अब दोनों मार्ग लोगों के सामने हैं, जिसे चाहें अपना लें ।'' (2: 256) इस्लाम के पैग़म्बर (सल्ल॰) को अपने ही जन्म स्थान, मक्का शहर में बहुत कठिनाइयों और विरोध का सामना करना पड़ा। अंततः उन्हें मक्का छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा । लेकिन तमाम जुल्मों और यहां तक कि शारीरिक यातनाओं के बावजूद, जो उनके अनुयायियों ने मक्का में झेलीं, पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) ने हमेशा मक्का के अविश्वासियों से सहनशीलता के साथ मामला किया । पैग़म्बर (सल्ल॰) ने एक अवसर

पर मक्का वालों के सामने यह आयत पढ़ी : '' ऐ इनकार करने वालो! तुम जिसकी उपासना करते हो, मैं उसकी उपासना नहीं करता और न तुम उसकी उपासना करने वाले हो, जिसकी उपासना मैं करता हूं । और न मैं उसकी उपासना करने वाला हूं जिसकी उपासना तुम ने की और न तुम उसकी उपासना करने वाले हो जिसकी उपासना मैं करता हूं। तुम्हारे लिए तुम्हारा धर्म है और मेरे लिए मेरा धर्म (109 : 1-6) जब पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) मदीना चले गए, तो उन्होंने पाया कि इस्लाम स्वीकार करने वालों के अलावा उस शहर में एक बड़ा यहूदी समुदाय भी है, लेकिन इससे वे परेशान नहीं हुए, उन्होंने उन्हें इस्लाम में आ जाने के लिए मजबूर करने पर विचार नहीं किया । इसके बजाय उनके साथ एक शांति समझौता किया और उन्हें अह्ले किताब कहा–यानी ईश्वरीय किताब के अनुयायी । यह वास्तव में किसी धर्म के अनुयायियों के प्रति सहिष्णुता का सर्वोच्च उदाहरण है। पैग़म्बर (सल्ल॰) और मदीना के यहूदियों के बीच शान्ति समझौते ने यहूदी समुदाय को हर प्रकार की शारीरिक, सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा की गारंटी दी और साथ ही उन्हें अपने धर्म का स्वतंत्र रूप से पालन करने की आज़ादी दी जब तक कि उस समुदाय ने संधि की शर्तों का पालन किया । यहां तक कि पैग़म्बर (सल्ल॰) ने अरब के आसपास विभिन्न देशों और राष्ट्रों के शासकों को जो पत्र लिखे थे, वे हमारे लिए महत्वपूर्ण दस्तावेज हैं। उस समय तक मदीना की रियासत एक शक्तिशाली इस्लामी राज्य के रूप में विकसित हो चुकी थी, लेकिन किसी भी पत्र में आपने इस्लाम न स्वीकार करने की स्थिति में सैन्य आक्रमण की धमकी नहीं दी है । एबिसिनिया के ईसाई राजा को लिखा पत्र इन शब्दों के साथ समाप्त होता है : ''मैंने संदेश दे दिया है और अब इसे स्वीकार करना आपके ऊपर है। एक बार फिर, शान्ति हो उस पर, जो सच्चे मार्गदर्शन का पालन करता है।''

दुर्भाग्य से, प्रथम विश्व युद्ध के बाद से अबतक पश्चिमी दुनिया में राजनीतिक और कुछ आर्थिक कारणों से इस्लाम और मुसलमानों के विरुद्ध सुनियोजित ढंग से दुष्प्रचार तंत्र चलाया जा रहा है । ऐसा माहौल बनाया जाता रहा है, जिससे इस्लाम को आतंक का धर्म और मुसलमानों को आतंकवादी क़रार दिया जा सके । इतिहास में, विशेष रूप से प्राच्यविदों द्वारा लिखित, किताबों में मुस्लिम विजेताओं की छवि इस तरह पेश की गयी है कि उनके एक हाथ में कुरआन और दूसरे में तलवार होती थी। इस प्रकार यह झूठ स्थापित किया गया कि जहां भी मुसलमान गए, उन्होंने विजित समुदाय को केवल दो विकल्प दिये–'इस्लाम' या 'मृत्यु'।

हालांकि, गंभीर इतिहासकारों द्वारा मुसलमानों के इस विकृत चित्रण को चुनौती दी गयी है । इस बात से कोई इन्कार नहीं है कि मध्य पूर्व और एशिया के मुसलमानों ने कई देशों पर विजय प्राप्त की, लेकिन उन्होंने उन पर अपना धर्म नहीं थोपा । ईमानदारी से अध्ययन किया जाए तो इतिहास में, 'मुस्लिम राज्यों के विस्तार' और 'इस्लाम के विस्तार' के बीच एक स्पष्ट अंतर दिखाई देता है । अपने देश का ही उदाहरण लें, मुसलमानों ने कई शताब्दियों तक यहां शासन किया, लेकिन यहां की जनसंख्या हमेशा हिन्दुओं पर ही आधारित रही । मुस्लिम शासन काल में तो यहां की मुस्लिम आबादी का प्रतिशत आज की तुलना में बहुत कम था । मुस्लिम शासकों ने इस्लाम के प्रचार के क्षेत्र में कोई काम नहीं किया, यह उनका काम भी नहीं था । वह तो सूफी और फकीर थे, जिनके चरित्र से देशवासी बहुत प्रभावित थे और उनके उपदेशों ने उन्हें इस्लाम से जोड़ दिया । देश के कई इतिहासकारों ने इस तथ्य को स्पष्ट रूप से बताया है । अगर हम उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान मुस्लिम शासन में रहने वाले अल्पसंख्यकों के प्रति शासक वर्ग के रवैये की तुलना यूरोप और अमेरिका में रहने वाले अल्पसंख्यकों के प्रति ईसाई शासकों के रवैये के साथ करें, तो मुस्लिम शासकों की सहिष्णुता स्पष्ट दिखाई पड़ती है । इस विषय पर एक प्रमुख पश्चिमी इतिहासकार रोडरिक एच-डेविसन को उद्धृत करना पर्याप्त होगा। अल्पसंख्यकों के प्रति सहिष्णुता के मुद्दे पर डेविसन लिखते हैं- ''वास्तव में तथ्य यह है कि अंग्रेजों का आयरलैंड वालों के प्रति या अमेरीकियों का वहां की निग्रो जनता के प्रति जो दमनकारी रवैया रहा, वह तुर्कों में कहीं नहीं दिखाई पड़ता। इससे आगे बढ़कर वे लिखते हैं कि 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में बड़ी संख्या में लोग स्वतंत्र यूनान से प्रवास कर तुर्क साम्राज्य में आ रहे थे, क्योंकि वे तुर्क सरकार को अपने स्वयं के यूनानी सरकार की तुलना में अधिक सहिष्णु और उदार पाते थे।''

सहिष्णुता : इस्लाम का स्वभाव

❖ **मुशर्रफ़ अली**

सहिष्णुता इस्लाम का एक बुनियादी सिद्धांत ही नहीं, इस्लाम का स्वभाव है । समाज में सहिष्णुता औ शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व की स्थापना इस्लाम के अनुयायियों का धार्मिक और नैतिक दायित्व है। इस्लाम व्यक्तिगत, सामूहिक, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय, सभी स्तरों पर सहिष्णुता की शिक्षा देता है । सहिष्णुता के माध्यम से ही मानवाधिकारों की रक्षा संभव है और कानून व्यवस्था बनी रह सकती है । कुरआन बहुत स्पष्ट रूप से कहता है:

(ऐ पैग़म्बर!) हमने हर उम्मत (समुदाय) के लिए (उपासना की) एक पद्धति ठहरा दी है, जिस पर वह चल रहा है । इसलिए लोगों को इस विषय में (अर्थात् इस्लाम के तौर-तरीक़े में) तुमसे झगड़ने का कोई कारण नहीं। अत: अपने पालनहार की ओर लोगों का आह्वान करो (क्योंकि मूलधर्म यही है)। निस्संदेह तुम मार्गदर्शन के सीधे मार्ग पर हो। यदि (इस पर भी) लोग तुम से झगड़ा करें तो कह दो, ''अल्लाह तुम्हारे कामों से अनभिज्ञ नहीं ।'' तुम जिन बातों में परस्पर मतभेद कर रहे हो, क़ियामत के दिन वह तुम्हारे बीच फ़ैसला करके वस्तुस्थिति को स्पष्ट कर देगा ।

(क़ुरआन, 22 : 66-69)

आज दुनिया में असहिष्णुता बढ़ रही है, जिससे हिंसा, नरसंहार, धार्मिक उत्पीड़न के साथ-साथ विभिन्न स्तरों पर टकराव की स्थिति पैदा हो गयी है । कहीं नस्लीय और जातीय आधार पर, कहीं धार्मिक और वैचारिक आधार पर, तो कहीं राजनीतिक और सामाजिक आधारों पर मनुष्य मनुष्य से संघर्षरत है। हर स्तर पर और हर हाल में एक सभ्य समाज के लिए यह एक गंभीर समस्या है। हम असहिष्णुता की समस्या को कैसे हल करें ? दूसरों के प्रति असहिष्णु हुए बिना अपनी मान्यताओं का कैसे पालन करें ? दुनिया में सहिष्णुता का माहौल कैसे लाया जाए ? ये ऐसे प्रश्न हैं जिनका अविलम्ब उत्तर तलाश करना हर नागरिक का दायित्व है।



वस्तुत: शब्द 'सहिष्णुता' का अर्थ है 'सहन करना'। एक अवधारणा के रूप में इसका अर्थ है 'दुनिया की संस्कृतियों अभिव्यक्ति की शैलियों और रहन-सहन के तरीकोंकी की समृद्ध विविधता का सम्मान, स्वीकृति और प्रशंसा। सहिष्णुता इस्लाम का एक बुनियादी सिद्धांत है। यह एक धार्मिक नैतिक कर्तव्य है । इसका मतलब केवल रियायत, शालीनता और विनम्रता नहीं है। इसका मतलब सिद्धांतों का अभाव या किसी के सिद्धांतों के प्रति उदासीनता भी नहीं है ।

कभी-कभी यह कहा जाता है, 'लोग उन चीजों के प्रति सहिष्णु हैं, जिनसे उन्हें कोई सरोकार नहीं है।' लेकिन इस्लाम में ऐसा नहीं है। इस्लाम के अनुसार सहिष्णुता का मतलब यह नहीं है कि हम सभी धर्मो की समानता को स्वीकार करें। इसका मतलब यह नहीं है कि अन्य धर्मों और विचारधाराओं पर इस्लाम की सर्वश्रेष्ठता में कोई समझौता किया जाए और दूसरों तक इस्लाम का संदेश पहुंचाने में कोई ढील बरती जाए ।

सहिष्णुता पर यूनेस्को के सिद्धांत कहते हैं :''मानवाधिकारों के लिए सम्मान के साथ, सहिष्णुता के अभ्यास का अर्थ सामाजिक अन्याय या किसी की आस्था को कमजोर करने की साजिशों के प्रति सहिष्णुता नहीं है। इसका अर्थ है कि हरेक व्यक्ति अपनी आस्था और विश्वास का पालन करने के लिए स्वतंत्र है और स्वीकार करता है कि अन्य लोग भी अपनी आस्था का पालन करने के लिए स्वतंत्र हैं। इसका मतलब है कि इस तथ्य को स्वीकार किया जाए कि मनुष्य, अपने रूप, स्थिति, भाषा, व्यवहार और मूल्यों में स्वाभाविक रूप से विविध हैं, उन्हें, जैसे वे हैं वैसे ही शांतिपूर्वक ढंग से रहने का अधिकार है। इसका अर्थ यह भी है कि किसी की विचारधारा दूसरों पर थोपी नहीं जा सकती। सहिष्णुता की मान्यता में मूल रूप से ये अवयव निहित हैं-

- मानव गरिमा,
- सभी मनुष्यों की मौलिक समानता,
- सार्वभौमिक मानवाधिकार, और
- विचार, विवेक और विश्वास की मौलिक स्वतंत्रता।

कुरआन और पैग़म्बर (सल्ल॰) की हदीसों में नस्ल, रंग, भाषा, जातीय पृष्ठभूमि और क्षेत्रीता से ऊपर उठकर सभी मनुष्यों की मौलिक गरिमा और मानव समानता पर बहुत जोर दिया गया है । इस्लामी शरीअत में समान रूप से सभी व्यक्ति को जीवन, संपत्ति, परिवार, आस्था जैसे मौलिक अधिकार दिये गये हैं।

इस्लाम समानता और न्याय की स्थापना पर जोर देता है, इन दोनों मूल्यों को सहिष्णुता के बिना स्थापित नहीं किया जा सकता है। इस्लाम ने शुरू से ही आस्था या धर्म की स्वतंत्रता के सिद्धांत को मान्यता दी। इसने स्पष्ट रूप से कहा कि आस्था के मामलों में किसी भी तरह की ज़बरदस्ती की अनुमति नहीं है। कुरआन कहता है, ''धर्म में कोई बाध्यता नहीं है।'' (2 : 256)

फिर सवाल यह आता है कि यदि अल्लाह ने अपने आदेशों को स्वीकार करने या अस्वीकार कर देने का विकल्प दिया, तो उसने पैग़म्बर नूह के लोगों को दंडित क्यों किया, आद और समूद की बस्तियां क्यों तलपट कर दीं । पैग़म्बर लूत, पैग़म्बर शुऐब की कौम और फिरऔन व उसके अनुयायियों को किस बात की सज़ा दी? इसका उत्तर कुरआन में ही है। उन लोगों को केवल उनके अविश्वास के कारण दंडित नहीं किया गया था। उन्हें दंडित किया गया क्योंकि वे अत्याचारी बन गए थे। उन्होंने ईश्वरीय आदेश का पालन करने वालों के खिलाफ आक्रामकता दिखायी, और दूसरों को ईश्वरीय आदेश का पालन करने से रोकने की नीति अपनायी ।

दुनिया में हर जमाने में अनगिनत लोग ईश्वर के अस्तित्व का ही इन्कार करते रहे हैं, लेकिन सामान्य रूप से उन्हें सजा नहीं दी जाती है । मुस्लिम विद्वान इब्न तैमिया लिखते हैं , कोई राज्य अपने लोगों के अविश्वास (कुफ़्र) के बावजूद लंबे समय तक जीवित रह सकता है, लेकिन जब किसी राज्य के लोग अत्याचारी और अन्यायी हो जाते हैं तो उसका विनाश निश्चित हो जाता है ।

समाज को बिगाड़ से बचाने के लिए अन्याय और अत्याचार को रोकना भी समझदार नागरिकों का दायित्व है । इस्लाम अपने मानने वालों को अत्याचार के खिलाफ संघर्ष की शिक्षा देता है, और इसे ही इस्लाम की शब्दावली में जिहाद कहते हैं । जिहाद का मुख्य उध्देश्य अन्याय और आक्रामकता को दूर करना है। मुसलमानों को अन्य ध र्मावलम्बियों के साथ रहने सहने अच्छे संबंध बनाये रखने से कहीं नहीं रोका गया है।

''जिन लोगों ने तुम से धर्म के लिए युद्ध नहीं किया और तुमको घरों से नहीं निकाला। अल्लाह इससे नहीं रोकता कि

तुम उनके साथ उपकार और भलाई करो और न्याय के साथ व्यवहार करो। क्योंकि अल्लाह न्याय करने वालों से अत्यंत प्रेम करता है। अल्लाह तो तुम्हें केवल उन लोगों से मेल-मिलाप रखने से रोकता है जिन्होंने तुमसे धर्म पर चलने के कारण युद्ध किया और घरों से निकाला या तुम्हारे शत्रुओं की सहायता की। (60 : 8-9)

इस्लाम सिखाता है कि लड़ाई केवल लड़ने वालों के खिलाफ है। अल्लाह कहता है, और (देखो!) जो लोग तुमसे लड़ाई लड़ रहे हैं, तुम्हें चाहिए कि अल्लाह के मार्ग में तुम भी उनसे लड़ो, (पीठ न दिखलाओ) अलबत्ता किसी प्रकार का अत्याचार नहीं करना चाहिए। अल्लाह उन लोगों से प्रेम नहीं करता जो अत्याचार करने वाले हैं। (190)

इस्लाम कुछ भी सहन कर सकता है, लेकिन यह अन्याय, अत्याचार और अन्य मनुष्यों के अधिकारों के हनन के लिए सहिष्णुता शून्य है। अल्लाह कहता है : और तुम्हें क्या हो गया है कि अल्लाह के मार्ग में यु) नहीं करते? यद्यपि कितने ही बेबस पुरुष हैं, कितनी ही स्त्रियां है, कितने ही बच्चे हैं जो द्धअत्याचारियों के अत्याचार से अत्यंत दुखी होकरऋ गुहार कर रहे हैं कि ''ऐ अल्लाह! हमें इस बस्ती से जहां के रहने वालों ने अत्याचार करना अपना कर्म समझ लिया है, छुटकारा दिला और अपनी ओर से किसी को हमारा कार्यसाधक बना दे और किसी को हमारी सहायता के लिए खड़ा कर दे । (4: 75)

अल्लाह के आखिरी दूत पर मक्का के लोगों द्वारा किए गए अत्याचार किसी से छिपे नहीं हैं। कई बार आपकी हत्या की कोशिश भी की गई, एक बार तो हत्या के उद्देश्य से सभी कबीले के लोग एकजुट होकर आपके घर में घुस आये थे । आपको अपने प्रिय शहर मक्का को अलविदा कहना पड़ा था, लेकिन 7 साल बाद, जब आप विजयी होकर अपने शहर मक्का में आये तो लोग यह समझ रहे थे कि मुहम्मद पुराने अत्याचारों का बदला लेंगे, लेकिन अल्लाह के रसूल ने उनकी उम्मीदो के खिलाफ आम माफी की घोषणा कर दी । अबू सुफ़यान, जो इस्लाम के दुश्मनों का नेता था, को न केवल मक्का विजय के दिन माफ कर दिया गया, बल्कि यह घोषणा भी की गई कि जो भी अबू सुफयान के घर में प्रवेश करे वह सुरक्षित है ।

सहिष्णुता का अर्थ है कि हमें उन लोगों को सहन करना चाहिए जिनकी आस्था हम से अलग है । हमारी मान्यताओं

क़ुरआन में सहिष्णुता

विभिन्न धर्मों के बीच सहिष्णुता और समझ बनाने के लिए क़ुरआन में पांच ईश्वरीय दिशा-निर्देश स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किये गये हैं ।

1. धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्र, संग, नस्ल, लिंग, सामाजिक स्थिति आदि से ऊपर उठकर ईश्वर द्वारा मनुष्य को प्रदत्त मानवीय गरिमा का सम्मान किया जाना चाहिए । (संदर्भ-क़ुरआन, 17:70)। क्योंकि सभी को सर्वशक्तिमान ईश्वर द्वारा बनाया गया है, अतः हरेक मनुष्य को एक-दूसरे के साथ पूरे आदर, सम्मान और प्रेम का व्यवहार करना चाहिए ।

2. यह ईश्वर की इच्छा के अनुरूप है कि दुनिया भर में मनुष्य विभिन्न धर्मों का पालन करते हैं और ऐसे लोग भी हैं जो किसी भी धर्म में आस्था नहीं रखते । (संदर्भ-क़ुरआन, 10 : 99) लेकिन सर्वशक्तिमान ईश्वर तब प्रसन्न नहीं होता जब कुछ मनुष्य अनास्था का विकल्प चुनते हैं । (संदर्भ-क़ुरआन, 39:7)

3. क़ुरआन स्पष्ट कहता है कि धर्म की स्वतंत्रता एक ईश्वर प्रदत्त अधिकार है ।
(संदर्भ-क़ुरआन, 2:256)

4. मानवजाति का अंतिम निर्णय उसके रचयिता और पालनहार सर्वशक्तिमान ईश्वर के हाथों में है, जिसके पास अंततः हम सभी को लौट कर जाना हैं ।
(संदर्भ-क़ुरआन, 22:68-69 और 42:15)

5. ईश्वर न्याय प्रिय है और जो लोग न्याय की स्थापना के लिए प्रयास करते हैं, उन्हें ईश्वर पसंद करता है । विशेष रूप से ऐसे लोगों को जो बिना किसी भेदभाव के विभिन्न समुदायों के बीच न्याय की स्थापना करते हैं । (संदर्भ-क़ुरआन, 5:8 और 60:8)

के अनुसार वह गलत भी हो सकती है, लेकिन उनकी भावनाओं का सम्मान करते हुए हमें उनकी आलोचना करने से बचना चाहिए। इस तरह से संयम बरतना और लोगों को अपनी आस्था का पालन करने की स्वतंत्रता देना न केवल एक वांछनीय है, बल्कि विभिन्न समुदायों के बीच शांति और सुरक्षा बनाए रखने के लिए भी आवश्यक है।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल) की एक हदीस के अनुसार सारी सृष्टि ईश्वर का कुनबा है । सबसे अनुकूल व्यक्ति वह है जो अपने परिवार का भला करता है। सबके साथ अच्छा व्यवहार करता है। पैग़म्बर (सल्ल) का उपदेश यह है कि एक-दूसरे के साथ संबंध समाप्त नहीं होना चाहिए, एक-दूसरे से किसी भी आधार पर घृणा नहीं करनी चाहिए, न एक-दूसरे से ईर्ष्या करनी चाहिए । मनुष्य को इन सारी दर्भावनाओं का त्याक करके आपस में प्रेम और भाईचारे का माहौल बनाए रहना चाहिए।

इस्लाम मौलिक रूप से लोगों को दूसरों के धर्म का सम्मान करना सिखाता है। आज, दुनिया में भाषाई, धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आधारों पर टकराव की स्थिति बनी हुई है । विभिन्न समुदायों द्वारा एक-दूसरे के धर्म और आस्था के प्रति घृणित रवैये ने जोर पकड़ लिया है। ऐसे समय में दुनिया को शान्ति की सख़्त जरूरत है और यह शान्ति धर्मों और सभ्यताओं के बीच संवाद के माध्यम से आसकती है ।

इस्लाम वैचारिक मतभेदों को स्वीकार करता है, सहिष्णुता, सम्मान और प्रेम की नीति बनाता है, अच्छे और शांतिपूर्ण समाज के निर्माण में मतभेदों की भी अपनी भूमिका है । मतभेदों को समझने के बाद ही अन्य धर्मों और विचारधाराओं के लिए सम्मान की भावना पैदा होती है। और इस प्रकार विभिन्न धर्मों के लोगों को करीब लाया जा सकता है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि प्रत्येक धर्म की अपनी भाषा और परंपरा है और सभी धर्म अपने स्तर पर बुनियादी मानव मूल्यों को स्थापित करके समाज में सुधार लाने की कोशिश करते हैं ।

हमें विभिन्न धर्मों और समुदाय के लोगों में पाए जाने वाले मतभेद को स्वीकार करना होगा, क्योंकि यह मतभेद स्वाभाविक है। मानव जाति को सम्बोधित करते हुए कुरआन में ईश्वर कहता है :

''और यदि तुम्हारा पालनहार चाहता तो सभी मनुष्यों को एक समुदाय बना देता द्धअर्थात् सब एक ही मार्ग पर चलते, किन्तु तुम देख रहे हो कि उसने ऐसा नहीं चाहा और यहाँ अलग-अलग गिरोह और अलग- अलग मार्ग हुएऋ और लोग ऐसे ही रहेंगे कि विविध हों।'' (11: 118)

इस आयत में कहा गया तथ्य भी सहिष्णुता का एक महत्वपूर्ण आधार है कि सभी के लिए, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि विभिन्न वर्गों के बीच धार्मिक और बौद्धिक अंतर स्वाभाविक है, उन्हें समाप्त नहीं किया जा सकता है। इसलिए, अन्य धर्मों, विश्वासों और आदर्शों की सहिष्णुता को प्रोत्साहित करना और धार्मिक, राजनीतिक और बौद्धिक सहिष्णुता के साथ व्यवहार करना महत्वपूर्ण है।

सहिष्णुता और सम्मान का रवैया इस्लाम की शिक्षाओं का एक अभिन्न अंग है। इस्लाम की सफलता का मुख्य कारण संवाद था। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल) ने ईसाइयों और यहूदियों के साथ संवाद करके तालमेल बनाए रखा । मदीना आने के बाद वहां बसे तीन यहूदी कबीलों के साथ संवाद करके ही आपने उनके साथ समझौता कर लिया । इससे शांति, सुरक्षा और आपसी सम्मान का वातावरण कायम हुआ ।

0291-2658786

HOTEL Crown Plaza

A/C & Non A/C Air Cooled Rooms & Dormitory

Opp. Minerva Centre,
Railway Station Road, Jodhpur-342001 (Raj.)
Cell : 9784856007, 9414110345

½ km from the railway station

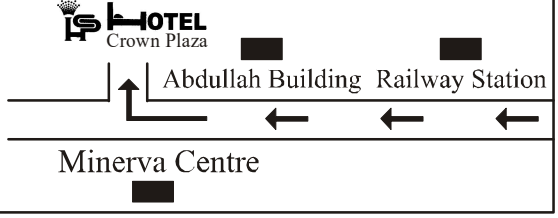

क़ुरआन की शिक्षाओं के परिप्रेक्ष्य में

सहअस्तित्व और सौहार्द्र

❖ **मुहम्मद ज़ैनुल आबिदीन मंसूरी**

राष्ट्रों और समाजों में दीर्घकाल से अनेक प्रकार की विभिन्नताओं के लोग, क़ौमें और जातियां-प्रजातियां वास करती रही हैं । कुछ देशों, जैसे भारतवर्ष में यह विभिन्नताएं बहुत व्यापक रही हैं । धर्म, मान्यताओं व धारणाओं एवं विचारधाराओं से लेकर भाषा, संस्कृति, रहन-सहन की शैली, रंग तथा नस्ल तक के हवाले से यह कहना शायद अनुचित न होगा कि हमारा देश के समान और कोई देश पृथ्वी पर नहीं है । यह विविधता एक तरफ़ देश की एक विशिष्ट सुंदरता रही है, तो दूसरी तरफ़ समुदायों के बीच परस्पर दुर्भावना, अविश्वास, घृणा व शत्रुता के कारण अन्याय, अत्याचार तथा उपद्रव की दुर्घटनाओं का कारण भी । देश और समाज में शांतिमय सहअस्तित्व के लिए राजकीय व्यवस्था तथा संस्थानों ने भी । उन्हें इसमें काफ़ी सफलता मिली है । लेकिन असफलता का क्षेत्र भी बहुत व्यापक है । प्रस्तुत आलेख में शांतिमय व सौहार्द्रपूर्ण सहअस्तित्व में इस्लाम के मूलग्रंथ 'क़ुरआन' की भूमिका पर प्रकाश डाला जा रहा है ।



क़ुरआन की नीति

इन्सानों में जाति-प्रजाति, भाषा, रंग आदि की विविधता तथा धर्म व धार्मिक समुदायों में अनेकता ईश्वर के सृष्टि-आयोजन का हिस्सा है । क़ुरआन में कई आयतें इसके साक्ष्य-रूप में देखी जा सकती हैं । इस आलेख के विषय के परिप्रेक्ष्य में ऐसी आयतों का सार निकाला जाए तो वह कुछ इस प्रकार का है–

● मानव-समाज में सत्य, सद्भाव, न्याय तथा परहित के आधार पर सहअस्तित्व अभीष्ट है ।

● इस स्थिति के स्थापन में धर्म को आड़े नहीं आना चाहिए । धर्म ईश-निर्मित है और ईश्वर सारे मनुष्यों का रचयिता पालक-पोषक, एवं शुभ-चिंतक होने की हैसियत से, समान रूप से सारे इन्सानों का हितैषी है ।

● जातियां, क़ौमें और क़बीले बहुत सारे रहे हैं, वर्तमान में भी हैं और भविष्य में भी रहेंगे। इस विषमता के रहते हुए भी सभों के बीच परस्पर सौहार्द्र व सहिष्णुता के बहुमूल्य आधारों पर शांतिपूर्ण सहअस्तित्व होना चाहिए और इसका दृढ़ मुलाधार यह है कि सारे इन्सान, जो विभिन्न व विविध जातियों, क़ौमों-क़बीलों में अपना अस्तित्व रखते हैं उनके अस्तित्व का आरंभ ''एक ही प्रथम माता-पिता'' से हुआ है ।

● हां सह-अस्तित्व का अभिप्राय यह कदापि नहीं है कि इसके लिए अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टता, ईश्वर के प्रति उद्दंडता व बग़ावत तथा ईश्वर के बन्दों के प्रति शोषण तथा सरकशी एवं दमन की अनदेखी की जाए । इन बुराइयों के विरुद्ध संघर्षरत रहने का, क़ुरआन आदेश देता है चाहे सह-अस्तित्व की दशा इससे प्रभावित होती हो ।

● क़ुरआन का आदेश है कि भलाई और नेकी के कामों में सहयोग और बदी-बुराई के कामों में असहयोग होना

चाहिए (अल-माइदा-5:2) पहली स्थिति में सहअस्तित्व में मदद मिलेगी और दूसरी स्थिति में यदि सहअस्तित्व प्रभावित होता है तो यह स्वाभाविक है, इसे बरदाश्त किया जाना चाहिए । कटु सत्य को बर्दाश्त करना उत्तम नीति है ।

● मूलभूत नैतिक मानव-मूल्यों के आधार पर धर्म, जाति, राष्ट्रीयता, भाषा, नस्ल और रंग की शिनाख़्त व पहचान शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के आड़े नहीं आनी चाहिए।

क़ुरआन से साक्ष्य व प्रमाण

उपरोक्त पंक्तियों में, विशेषत: उपर्लिखित छह बिंदुओं के अंतर्गत, क़ुरआन की जो नीति उल्लिखित हुई उसे क़ुरआन की कुछ संबंधित आयतों से भली-भांति, स्पष्टता के साथ समझा जा सकता है । क़ुरआन की बहुसंख्य आयतों में से केवल कुछ-एक संबंधित आयतों के भावार्थ नीचे उल्लिखित किये जा रहे हैं । कोष्ठक में दिये गये हवालों (सूरह नाम व क्रमांक : आयत क्रमांक) द्वारा, अनूदित क़ुरआन की किसी भी प्रतिलिपि में इन्हें देखा जा सकता है :

क़ुरआन का आदेश है कि भलाई और नेकी के कामों में सहयोग और बदी-बुराई के कामों में असहयोग होना चाहिए (अल-माइदा-5:2) पहली स्थिति में सहअस्तित्व में मदद मिलेगी और दूसरी स्थिति में यदि सहअस्तित्व प्रभावित होता है तो यह स्वाभाविक है, इसे बरदाश्त किया जाना चाहिए । कटु सत्य को बर्दाश्त करना उत्तम नीति है ।

(1) ऐ लोगो ! निस्संदेह हमने तुम्हें 'एक' मर्द (आदम) और 'एक' औरत (हव्वा) से पैदा किया है और तुम्हारी क़ौम और बिरादरियां बना दीं, जिससे एक-दूसरे को पहचान सको । वास्तव में तुममें से सम्मानित व्यक्ति वह है जो अधिकाधिक ईशपरायण है । (अल-हुजुरात-33:13)

(अर्थात एक ही प्रथम माता-पिता की संतान होना तथा ईशपरायणता के सिवा किसी और गुण का श्रेष्ठता व सम्मान का मानदंड न होना, सहअस्तित्व व सौहार्द्र का अति दृढ़ व शाश्वत आधार है ।)

(2) युद्धरत रहो जब तक फ़ित्ना (अशांति, उपद्रव, अराजकता, अन्याय, शोषण, अत्याचार आदि) बाक़ी रहे । यहां तक कि पूरी जीवन-व्यवस्था (दीन) ईशोन्मुखी हो जाए । (अल-बक़रा-2:193)

(सहअस्तित्व के लिए उपरोक्त नकारात्मक अवस्थाओं एवं कृत्यों का उन्मूलन अनिवार्य है अत: क़ुरआन इसके लिए बल प्रयोग की, यहां तक कि सशस्त्र बल प्रयोग की शिक्षा देता है ।)

(3) यह क्या बात है कि तुम ईश-मार्ग में उन असहाय पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों के लिए युद्धरत नहीं होते जो कमज़ोर पाकर दबा लिए गये हैं और फ़रियाद कर रहे हैं कि ऐ हमारे रब हमको इस बस्ती से निकाल जिसके निवासी ज़ालिम हैं....। (अल-निसा-4:75)

कमज़ोरों, असहायों और निर्बलों पर अत्याचार सहअस्तित्व के लिए सबसे बड़ा दुश्मन और विध्वंसकारी प्रक्रिया है । इस अत्याचार का उन्मूलन करने के लिए क़ुरआन की आयत स्पष्ट नीति के साथ सक्रिय होती है यहां तक कि सामान्य परिस्थिति में युद्ध जैसी अनापेक्षित चीज़ को भी अनिवार्य होने की हद तक अपेक्षित ठहराती है ।

(4) ● इन्साफ़ की गवाही दो, चाहे गवाही तुम्हारे निकट-संबंधियों के ख़िलाफ़ पड़ती हो। (अल-निसा-4:135)

● क्षमाशीलता से काम लो । ऐसा करोगे तो देखोगे कि तुम्हारा बड़ा दुश्मन भी तुम्हारा मित्र बन गया ।

(हा-मीम सजदा-41:34)

● बुराई का उन्मूलन भलाई से करो ।

(अल-मोमिनून-23:96)

● क्षमा करने वालों का प्रतिदान अल्लाह के पास है । (वह उसे, क्षमाशील व्यक्ति को प्रदान करेगा)।

(अश-शूरा-42:40)

● तुम क्षमा करो, तुम्हें (ईश्वर द्वारा) क्षमा किया जाएगा । (अन-नूर-24:22)

● क्षमा करना, ईशपरायणता है । (अल-बक़रा-2:27)

● अल्लाह इन्साफ़ करने वालों को पसन्द करता है ।

(अल-माइदा-5:42)

● रब ने इन्साफ़ का हुक्म दिया है । (अल-आराफ़-7:29)

● किसी क़ौम की दुश्मनी तुम्हें इन्साफ़ करने से विचलित न कर दे । (अल-माइदा-5:8)

उपरोक्त आयतों में सौहार्द्रपूर्ण व शांतिमय सहअस्तित्व की शिक्षाएं दी गयी हैं तथा आदेश भी ।

(5) अगर हम चाहते तो तमाम इन्सानों को एक ही धर्म (दीन) का अनुपालक बना देते । (अल-सजदा-32:130)

क़ुरआन में ईश्वर के इस वक्तव्य से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि मनुष्यों का विभिन्न धर्मों का अनुपालक होना ईश्वर की योजना के अनुसार है । इसका अभिप्राय यह नहीं है कि ईश्वर विभिन्न विरोधात्मक धर्मों तथा सत्य व असत्य धारणाओं व मान्यताओं की स्वीकृति दे रहा है । वास्तव में ईश्वर को स्वीकार्य तो मात्र एक ही ''सत्य-धर्म'' है (आले-इमरान 3:19)। इसके बावजूद, ईश्वर की योजना, स्वयं क़ुरआन की अनेक आयतों से यह विदित एवं सिद्ध होती है कि इन्सानों को ईश्वर, पैग़म्बरों या अन्य इन्सानों के द्वारा कोई एक धर्म ग्रहण करने पर बाध्य न किया जाए । (अल-बक़रा-2:256) ईशदूतों तथा ईश-ग्रंथों के माध्यम से सत्य-धर्म को खोल-खोलकर बता दिया जाए, असत्य धर्मों व मान्यताओं का विवरण, व्याख्या तथा स्पष्टीकरण कर दिया जाए । और फिर इन्सानों के विवेक, इच्छाशक्ति तथा निष्ठा पर छोड़ दिया जाए कि वे क्या अपनाते हैं, क्या छोड़ते हैं, इसमें ईश्वर ने उन्हें पूर्ण स्वतंत्र बनाया है । हां सत्य/असत्य को अपनाने या छोड़ने का प्रतिदान व प्रतिफल, क़ुरआन में पारलौकिक जीवन में दिया जाना निश्चित रूप से तय कर दिया गया है ।

कमज़ोरों, असहायों और निर्बलों पर अत्याचार सहअस्तित्व के लिए सबसे बड़ा दुश्मन और विध्वंसकारी प्रक्रिया है । इस अत्याचार का उन्मूलन करने के लिए क़ुरआन की आयत स्पष्ट नीति के साथ सक्रिय होती है यहां तक कि सामान्य परिस्थिति में युद्ध जैसी अनापेक्षित चीज़ को भी अनिवार्य होने की हद तक अपेक्षित ठहराती है ।

(6) ''सुनो ! जिसने किसी ज़िम्मी (इस्लामी शासन में धार्मिक अल्प-संख्यक) पर अत्याचार किया, या उसका कोई हक़ छीना, या उसकी सहन-शक्ति से अधिक उस पर किसी भी प्रकार का बोझ डाला, या उसकी कोई भी चीज़ उसकी मरज़ी के बिना ले ली तो परलोक में न्याय के दिन (अल्लाह की अदालत में) मैं उस ज़िम्मी की तरफ़ से उस व्यक्ति के ख़िलाफ़ वकील व याचक बनूंगा ।''

(पैग़म्बर मुहम्मद, हदीस नं॰ 3052, अबू-दाऊद-भावार्थ)

यहां क़ुरआन-वाहक तथा मूल व्याख्याता पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) का वक्तव्य उद्धृत किया गया है । यद्यपि यह क़ुरआन की प्रत्यक्ष आयत नहीं है, तथापि पैग़म्बर का हर वक्तव्य अल्लाह से प्रेरणित होता था । वे अपनी मर्ज़ी से नहीं, अल्लाह से प्रेरणा पाकर कोई बात कहते और कोई कर्म करते थे । अत: ज़िम्मी के बारे में यह वक्तव्य परोक्ष रूप से क़ुरआन के नियम के अंतर्गत व अनुकूल माना गया है ।

उपरोक्त पंक्तियों में कुछ शिक्षाएं आम इन्सानों के प्रति और कुछ अन्य धर्मावलंबियों के प्रति, इस्लाम धर्म के अनुपालकों को दी गयी हैं । ये वो शिक्षाएं हैं जो समाज तथा पूरे विश्व में क़ौमों, जातियों और धर्मावलंबियों के बीच सौहार्द्र, सहिष्णुता, मानव-प्रेम, न्याय-निष्ठा, क्षमाशीलता को शक्ति व बल देती हैं । परस्पर शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व (Peaceful Co-existense) की प्रेरणा देती तथा आधार भी बनती है ।

''और तुम लोग न तो
आपस में एक-दूसरे के
माल अवैध रूप से खाओ
और न अधिकारी व्यक्तियों
के आगे उनको इस ग़रज़
से पेश करो कि तुम्हें दूसरों
के माल का हिस्सा
जान-बूझकर अन्यायपूर्ण
तरीक़े से खाने का अवसर
मिल जाए ।''
(क़ुरआन, 2:188)



A WELL WISHER
PATNA

ईश्वर द्वारा निर्धारित जीवन व्यवस्था

❖ **मुहम्मद शकील शम्सी**

क़ुरआन की एक आयत है–"अल्लाह के निकट दीन केवल इस्लाम है ।" (क़ुरआन, 3:19)

यह आयत क़ुरआन की उन इन्क़िलाबी आयतों में से है जिसने 'अल-इस्लाम' की अस्ल हक़ीक़त को पेश किया और दुनिया को यह बता दिया कि इस्लाम जो चीज़ पेश कर रहा है, वह मानव स्वभाव है और उसी के अधीन संसार में अम्न एवं शान्ति की स्थापना हो सकती है ।

परन्तु दुख की बात यह है कि क़ुरआन की अन्य आयतों की तरह इस आयत को भी तास्सुब का निशाना बनाया गया । और सारी दुनिया में यह बात फैलाने का प्रयास किया गया कि 'क़ुरआन के निकट धर्म केवल इस्लाम है और उसके अतिरिक्त दुनिया में कोई धर्म है ही नहीं' और यह कि 'क़ुरआन की इस ग़लत शिक्षा के कारण संसार भर में लड़ाई-झगड़े, असहिष्णुता, मार-काट फैल गयी है ।' न केवल हमारे ग़ैर-मुस्लिम भाई, बल्कि मुसलमान भी अपनी अज्ञानता या अल्पज्ञान के कारण इससे प्रभावित हो जाते हैं और इस दुष्प्रचार का जवाब नहीं दे पाते ।

अस्ल में यह भ्रांति इसलिए पैदा की होती है कि लोगों ने 'दीन' को धर्म का समानार्थी समझ लिया । परिणाम यह हुआ कि जब कोई इस्लाम का नाम लेता है तो उसको भी लोग अन्य धर्मों की तरह एक धर्म समझ लेते हैं । आवश्यकता इस बात की है कि इस आयत का सही अर्थ स्पष्ट किया जाए ताकि कम से कम सकारात्मक सोच रखने वाले लोग उन भ्रांतियों से प्रभावित न हो सकें, जो जान-बूझकर फैलायी जा रही हैं । इस पूरी आयत का सही अनुवाद निम्नलिखित है–

"इस दीन से हटकर जो विभिन्न पंथ लोगों ने अपना लिये, जिन्हें किताब दी गयी थी, उनके इस रवैये का कोई कारण इसके सिवा न था कि उन्होंने ज्ञान आ जाने के बाद आपस में ज़्यादती करने के लिए ऐसा किया और जो कोई अल्लाह के आदेश, मार्गदर्शन का अनुपालन से इन्कार कर दे तो अल्लाह को उससे हिसाब लेते कुछ देर नहीं लगती ।" (अनुवाद : मौलाना मौदूदी)

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद ने इस आयत का व्याख्यात्मक अनुवाद इस प्रकार किया है–

"नि:सन्देह 'अद-दीन' अल्लाह के निकट 'अल-इस्लाम' ही है और ये जो अह्ले किताब ने आपस में मतभेद किया (और वे गिरोहबन्दियां करके अलग-अलग दीन बना लिए) तो (यह इसलिए नहीं हुआ कि इस दीन के सिवा उन्हें किसी दूसरे दीन की राह दिखायी गयी थी या दीन की राहें विभिन्न हो सकती हैं, बल्कि इसलिए कि) ज्ञान के पाने के बाद वे इस पर क़ायम नहीं रहे और आपस की ज़िद और हठ से अलग हो गये । और याद रखो जो कोई अल्लाह की आयतों से इन्कार करता है (और मार्गदर्शन पर पथभ्रष्टता को प्राथमिकता देता है) तो अल्लाह (का बदले का क़ानून) भी हिसाब लेने में मंद गति नहीं है ।" (तर्जुमानुल-क़ुरआन)

वस्तुत: इस आयत में तीन शब्द ऐसे हैं जिनका सही मानी-मतलब न समझने के कारण यह भ्रांति पैदा होती है । वे तीन शब्द हैं–'अल्लाह', 'अद-दीन' और 'अल-इस्लाम'। अल्लाह नाम है उस हस्ती का जिसने पूरी सृष्टि को बनाया और उसकी हर चीज़ को पाल रहा है । इसी लिए क़ुरआन में उसका नाम 'ख़ालिक़' (रचयिता) भी है और 'रब्ब' भी है । सारे अच्छे नाम उसी के लिए हैं । (क़ुरआन, 59:24)

'अद-दीन' का अर्थ कोई धर्म या मज़हब नहीं जिसे किसी ने गढ़ लिया हो, बल्कि यह एक जीवन-व्यवस्था है । इस जीवन-व्यवस्था के लिए जो क़ानून अल्लाह ने बनाया है, उस क़ानून का नाम 'अल-इस्लाम' है । यह क़ानून हमेशा से एक है और एक ही रहेगा । उदाहरणार्थ अल्लाह ने सूरज के लिए एक क़ानून बनाया और उसी क़ानून पर सूरज समय की पूरी पाबन्दी के साथ चलता है और उस क़ानून का लेशमात्र उल्लंघन नहीं करता । इसी प्रकार तमाम ग्रह एवं उपग्रह हैं जो अपनी धुरी पर अल्लाह के क़ानून के अनुसार घूम रहे हैं । उस क़ानून का थोड़ा-सा भी उल्लंघन पूरे सौरमंडल बल्कि पूरी सृष्टि को उलट-पलट कर देगा ।

इसी प्रकार एक वृक्ष अल्लाह के क़ानून का पाबन्द है । आम के वृक्ष में इमली नहीं निकलती और न इमली के वृक्ष में आम । इन्सान की अपनी ग़लतियों के कारण यदि उस वृक्ष को क़ानूनी रूप से जो चीज़ दरकार थी, वह न

मिले तो कुछ समय में वृक्ष सूख भी जाता है । इसी क़ानून के उल्लंघन के बाद बिगाड़ फैल जाने या वृक्ष के सूख जाने का नाम क़ुरआन ने 'अज़ाबे-इलाही' रखा है ।

ठीक इसी प्रकार इन्सान के लिए भी अल्लाह ने प्राकृतिक क़ानून बनाया है । इसी प्राकृतिक क़ानून के अधीन चलने पर इन्सान का स्थायित्व संभव है, वह किसी भी धर्म का मानने वाला हो, अल्लाह के क़ानून के तहत पैदा होता है, अल्लाह का दिया हुआ भोजन इस्तेमाल करता है, अल्लाह की दी हुई हवा में सांस लेता है जिसके बिना उसका जीवन ही संभव नहीं । इसी बात को क़ुरआन इस प्रकार बयान करता है–

"अब क्या ये लोग अल्लाह का तरीक़ा (दीनुल्लाह) को छोड़कर कोई और तरीक़ा चाहते हैं, हालांकि आसमानों और ज़मीन की सारी चीज़ें चाहे-अनचाहे उसी के आदेश (क़ानून) का पालन कर रही हैं ।" (क़ुरआन, 3:83)

इस आयत की व्याख्या में मौलाना अबुल कलाम 'आज़ाद' लिखते हैं–

"अल्लाह का दीन इसके सिवा कुछ नहीं है कि उसके ठहराए हुए प्राकृतिक नियमों का पालन है और आसमान और ज़मीन के सभी जीव अल्लाह के क़ानूनों का पालन कर रहे हैं । फिर अगर तुम्हें अल्लाह के प्राकृतिक नियम से इन्कार है तो उस अल्लाह के क़ानून के सिवा सृष्टि में और कौन-सा क़ानून हो सकता है ? क्या तुम्हें इस राह में चलने से इन्कार है जिस पर यह पूरी सृष्टि चल रही है ? यही दीन (जीवन-व्यवस्था) मानवजाति के लिए मार्गदर्शन का वैश्विक रास्ता है, परन्तु लोगों ने इसे छोड़कर अपनी अलग गिरोहबन्दियां कर लीं और प्रत्येक गिरोह दूसरे गिरोह को झुठलाने लगा । क़ुरआन इसी लिए आया है कि इस पथ-भ्रष्टता से दुनिया को मुक्ति दिला दे और सत्य-मार्ग यह है कि तमाम पैग़म्बरों की समान रूप से पुष्टि करो और सबकी संयुक्त शिक्षाओं को अपनाओ ।" (तर्जुमानुल-क़ुरआन)

इससे यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो गयी कि क़ुरआन इसी लिए आया है कि लोगों को अवगत कर दे कि वे प्राकृतिक क़ानून जिस पर ख़ुदा ने इस सृष्टि की आधारशिला रखी है वह एक ही है और उस क़ानून से हटकर जीवन व्यतीत करने का नतीजा सिवाय तबाही और बरबादी के कुछ नहीं । दूसरे शब्दों में क़ुरआन इसी लिए आया है कि संसार के समस्त इन्सानों को दुनिया और आख़िरत (लोक-परलोक) दोनों में तबाही और बरबादी से बचाए ।

और फिर अल्लाह ने यह कहा कि लोगों को सचेत कर दो । अर्थात उनके हित में लोगों को बता दो ताकि वे तबाही और बरबादी के मार्ग में गिरने से बच जाएं, लेकिन इसमें भी ज़ोर-ज़बरदस्ती करने से मना किया गया । इसलिए कि हर व्यक्ति अपना व्यक्तिगत नज़रिया रखने पर आज़ाद है । इसी लिए आयत के तुरन्त बाद अल्लाह ने कह दिया कि "अब अगर (ऐ नबी!) ये लोग तुमसे झगड़ा करें तो इनसे कह दो कि मैंने और मेरे मानने वालों ने अल्लाह के (क़ानून के) आगे सिर झुका दिया है । फिर अह्ले किताब और ग़ैर-अह्ले किताब दोनों से पूछा कि क्या तुमने भी उस (अल्लाह) का आज्ञापालन स्वीकार कर लिया है । अगर कर लिया है तो वे सत्य-मार्ग पर आ गये और अगर नहीं और मुंह मोड़ा तो (ऐ नबी!) तुम पर केवल सन्देश पहुंचा देने की ज़िम्मेदारी है । आगे अल्लाह ख़ुद बन्दों के मामलों को देखने वाला है ।" (क़ुरआन, 3:20)

उपर्युक्त विवरण से यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो गयी कि यह आयत धार्मिक सहिष्णुता और सहनशीलता के बिल्कुल विरुद्ध नहीं है, बल्कि इसमें तमाम इन्सानों के लिए भलाई निहित है । सही राह बता देना हमारी ज़िम्मेदारी और तमाम इन्सानों की इसी में भलाई है । रहा मानना या न मानना तो यह इन्सान का निजी अधिकार है, इसलिए ज़ोर-ज़बरदस्ती इस्लाम के स्वभाव से बाहर की चीज़ है ।



इस्लाम में सहिष्णुता एवं उदारता

■ **नुज़हत यासमीन**

मानव अल्लाह की विचित्र संरचना है । सोचने-समझने की शक्ति से परिपूर्ण, गुणों और अवगुणों का समूह ।

इन्हीं गुणों में एक महत्वपूर्ण गुण है सहिष्णुता एवं उदारता । इस्लाम मानव को इस विशेष गुण को इख़्तियार करने की शिक्षा देता है । सहिष्णुता एवं उदारता आपस के मनमुटाव को दूर करने, शांति और अम्न का वातावरण बनाने और धरती पर बिगाड़ को रोकने का अचूक साधन है । सहिष्णुता वह गुण है जो मानव को विनम्र बनाता है । उसे दूसरों के विचारों एवं आदर्शों का सम्मान करना सिखाता है।

अल्लाह धरती पर बिगाड़ फैलाने वालों को पसन्द नहीं करता । नबी करीम (सल्ल॰) ने फ़रमाया, ''सारी सृष्टि अल्लाह का परिवार है और अल्लाह उसे पसन्द करता है जो उसके परिवार से अच्छा व्यवहार करे । (हदीस)

इसी तरह क़ुरआन की शिक्षा है–

''और ऐ नबी, भलाई और बुराई समान नहीं हैं । तुम बुराई को उस नेकी से तोलो जो उत्तम हो । तुम देखोगे कि तुम्हारे साथ जिसका बैर पड़ा हुआ था वह आत्मीय मित्र बन गया है । यह गुण प्राप्त नहीं होता किन्तु उन लोगों को जो धैर्य से काम लेते हैं और यह पद प्राप्त नहीं होता किन्तु उन लोगों को जो बड़े भाग्यवान हैं ।'' (क़ुरआन, 41:34-35)

आज हमारे समाज में इस गुण का अभाव पाया जाता है जिसके नतीजे में प्राय: ऐसी दुखदायी घटनाएं घटती हैं जिनकी एक सभ्य समाज में कल्पना नहीं की जा सकती । वाद-विवाद, लड़ाई-झगड़े से बात बढ़कर प्राय: हत्या तक पहुंच जाती है । सड़क पर होने वाली ऐसी दुर्घटनाओं के प्रति हम प्राय: सुनते हैं कि गाड़ियों की हल्की-सी टक्कर में गुस्साए युवक ने दूसरे की हत्या कर दी । पिता ने मोबाइल फ़ोन नहीं दिया तो बेटा फांसी के फन्दे पर झूल गया । यह गुस्सा और सहनशक्ति का अभाव इन्सान की सोचने समझने की शक्ति को नष्ट कर उसे जानवर बना देता है ।

क़ुरआन में अल्लाह ने फ़रमाया–''जो प्रत्येक दशा में अपने माल ख़र्च करते हैं चाहे बुरे हाल में हों या अच्छे हाल



इस्लाम की शिक्षा एक व्यक्ति को अच्छा इन्सान बनाने और एक आदर्श समाज के निर्माण में सहायक है । इसका आधार एक अल्लाह पर ईमान और तमाम इन्सानों का भाई-भाई होना है । हम सबका मालिक एक अल्लाह है । सब उसके बन्दे हैं । एक ही माता-पिता की संतान हैं । एक ही रंग का ख़ून सबकी नसों में बहता है । इस्लाम ने ऊंच-नीच, छुआछूत, अमीरी-ग़रीबी, देश, भाषा और जाति के सारे भेदभाव मिटा दिये हैं ।

में, जो गुस्से को पी जाते हैं और दूसरों के क़सूर क्षमा कर देते हैं–ऐसे नेक लोग अल्लाह को बहुत प्रिय हैं ।''

(क़ुरआन, 3:134)

यहां क़ुरआन मानव के उस गुण का वर्णन करता है जो इन्सान को इन्सान बनाता है । उसके हृदय को उदार बनाता है । उसे सहन-शक्ति की क्षमता बढ़ाने की शिक्षा देता है और ऐसे इन्सान जो इस गुण को इख़्तियार करते हैं उन्हें अल्लाह पसन्द करता है । ऐसे सदाचारी व्यक्ति को दुनिया भी पसन्द करती है ।

नबी करीम (सल्ल॰) ने एक क़बीले के सरदार की प्रशंसा करते हुए फ़रमाया, ''तुम में पाये जाने वाले दो गुण ऐसे हैं, जिन्हें अल्लाह पसन्द फ़रमाता है, एक उदारता और दूसरी सहिष्णुता । (हदीस)

इस गुण से परिपूर्ण वही हो सकता है जो समझ-बूझ से काम लेने वाला हो, जिसकी दृष्टि मृत्यु के पश्चात परलोक में मिलने वाले जीवन पर टिकी हो, जो अपने गुस्से को वश में रखता हो, जो गुनाहों से बचता हो, कठिनाइयों में संयम से काम लेता हो और शत्रु से बदला लेने की शक्ति रखते हुए भी क्षमा कर सकता हो । यह कर्म हृदय की उदारता और सहिष्णुता के बिना नहीं किये जा सकते ।

नबी करीम (सल्ल॰) की जीवनी में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं । आप (सल्ल॰) ने स्वयं अपने आपके लिए कभी किसी से बदला नहीं लिया । अपने दुश्मनों को क्षमा किया । उनके लिए अल्लाह से दुआएं कीं । आप (सल्ल॰) का सद्व्यवहार, आपकी उदारता और सहनशीलता लोगों के दिल जीत लिया करती थी ।

नबी करीम (सल्ल॰) ने उस बुढ़िया को कभी बुरा-भला नहीं कहा जो रास्ते से गुज़रते समय अपनी छत से आप (सल्ल॰) के ऊपर कूड़ा डाल देती थी । जब वह बीमार हो गयी और उसने कूड़ा नहीं डाला तो आप (सल्ल॰) उसका हाल पूछने उसके घर गये । आप (सल्ल॰) के इस सद्व्यवहार ने उस बूढ़ी औरत का दिल जीत लिया और वह सच्चे दिल से ईमान ले आयी ।

समामा एक क़बीले के सरदार थे । नबी करीम (सल्ल॰) और मुसलमानों से नफ़रत करते थे । कई सहाबियों की हत्या का आरोप उन पर था । एक बार संयोग से बंदी बना लिए गये । नबी करीम (सल्ल॰) ने अपने सहाबियों को उनका ख़याल रखने को कहा । तीन दिनों तक उनसे वार्तालाप किया और फिर उन्हें रिहा करने के आदेश दिये । समामा इस व्यवहार से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने सच्चे दिल से गवाही दी कि नबी करीम (सल्ल॰) अल्लाह के सच्चे रसूल हैं और अब उन्हें नबी करीम (सल्ल॰) से अधिक प्रिय कोई नहीं ।

इस्लाम की शिक्षा एक व्यक्ति को अच्छा इन्सान बनाने और एक आदर्श समाज के निर्माण में सहायक है । इसका आधार एक अल्लाह पर ईमान और तमाम इन्सानों का भाई-भाई होना है । हम सबका मालिक एक अल्लाह है । सब उसके बन्दे हैं । एक ही माता-पिता की संतान हैं । एक ही रंग का ख़ून सबकी नसों में बहता है । इस्लाम ने ऊंच-नीच, छुआछूत, अमीरी-ग़रीबी, देश, भाषा और जाति के सारे भेदभाव मिटा दिये हैं । अल्लाह की दृष्टि में वह व्यक्ति अच्छा है जो ईश-भय रखता हो, जिसका हृदय उदार हो जिसमें विनम्रता, सहिष्णुता, करुणा और सहानुभूति के गुण पाये जाते हों ।

यह संसार नश्वर है । मानव की मृत्यु इस दुनिया से उसका नाता तोड़ देती है । परलोक में इन्सान का ईमान और उसके कर्म ही उसके अंतिम परिणाम का आधार होंगे । इन्सान का दायित्व है कि आज के शांतिपूर्ण समाज के निर्माण और परलोक में अच्छे परिणाम हेतु अच्छे गुण और अच्छे कर्म को अपनाये ।



आदर्श समाज के निर्माण में इस्लाम की शिक्षाएं !

❖ **जुनैद अली**

वास्तविकता यही है कि इस्लाम विशुद्ध रूप से मानव कल्याण का मूल प्रवर्तक है जो मानवजाति के जीवन को ठोस आधारों पर विकसित करना चाहता है । सामाजिक संबंधों की स्थापना से समाज का निर्माण होता है परंतु समाज के निर्माण के लिए सामाजिक संबंधों के साथ-साथ एक निश्चित व्यवस्था का भी होना आवश्यक है । यह ध्यान देने योग्य बात है कि सामाजिक संबंधों ही से समाज नहीं है बल्कि जब सामाजिक संबंधों की एक व्यवस्था होती है तब उसे समाज कहा जाता है । मानवजाति का क्रमिक विकास पूर्णत: सामाजिक व्यवस्था पर निर्भर करता है और व्यवस्था जितनी सक्षम एवं संतुलित होगी उसमें उतनी ही विकास की संभावनाएं प्रबल होती चली जाएंगी ।

इसमें कोई संशय नहीं है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और इसके जीवन की सार्थकता सामाजिक व्यवस्थाओं पर निर्भर करती है और उसके भीतर ही सम्पन्न हो सकतीं हैं । व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक तथा आर्थिक आवश्यकताएं समाज में ही पूरी होती हैं जिसके लिए वह समाज के अन्य व्यक्तियों के साथ संबंध स्थापित करता है । वास्तव में व्यक्ति के स्वभाव में समाज के अन्य सदस्यों से संबंध स्थापित करने की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है जिसे वह सामाजिक अंत: क्रिया के फलस्वरूप विकसित करता है ।

समाज की सभी गतिविधियों को संचालित एवं नियंत्रित करने के लिए मापदंडों की आवश्यकता होती है जिसके निर्धारण में नैतिकता के कहीं व्यापक मायने हैं और यही मानव का मौलिक गुण व उसकी अंतरात्मा के भाव हैं । इस्लाम नैतिकता को मानवीय संदर्भों में इसे अलौकिक गुण मानते हुए पूरी सामाजिक संरचना का उत्थान इसी आधार पर करना चाहता है ताकि मानवीय मूल्यों की स्थापना और संवेदनाओं की प्रतिपूर्ति प्राकृतिक ढंग से हो सकें । इस्लाम मनुष्य के भीतर नैतिकता का पैमाना इस प्रकार स्थापित करना चाहता है ताकि मनुष्य सैद्धांतिक आधारों पर सही और ग़लत धारणाओं को पहचान सकें और सामाजिक संरचना में सत्य को उसके मूल रूप में स्थापित कर सकें ।

नैतिकता के स्थायित्व के लिए आदर्श नियामक का होना अनिवार्य है और इस संदर्भ में इस्लाम नैतिक मूल्यों का विस्तृत मापदंड प्रदान करता है । इस्लाम ने हमारे नैतिकता के ज्ञान को मात्र हमारी बृद्धि या इच्छाओं या अनुभवों अथवा मानवीय ज्ञान के भरोसे नहीं छोड़ा है कि यदि ये चीज़ें अपने निर्णय बदल दें तो हमारे नैतिक सिद्धांत भी बदल जाएं और उन्हें कोई स्थायित्व न मिल सके, बल्कि इस्लाम ने हमें दो निश्चित स्रोत (ईश-ग्रंथ और ईशदूत का आदर्श) प्रदान किये हैं जो जीवन संबंधी विषयों पर नैतिक आचरणों एवं सिद्धांतों का व्यापक निरूपण है जिससे हर युग तथा प्रत्येक परिस्थितियों में नैतिक निर्देश प्राप्त होते हैं जिसके ज़रिये सभी क्षेत्रों एवं स्तरों पर मार्गदर्शन प्राप्त किया जा सकता है।

आदर्श समाज के लिए नैतिक क़ानून को लागू करना अनिवार्य है और इस लक्ष्य को ईश्वरीय भय, परलोक की पूछताछ का डर और भविष्य की असफलता को सामने रखकर ही प्राप्त किया जा सकता है । इसी के साथ इस्लाम सामाजिक जीवन में व्यक्तियों एवं समुदायों को नैतिक नियमों की अनिवार्यता पर विवश करने के लिए राजनैतिक व्यवस्था भी बनाना चाहता है, जिसके द्वारा नैतिकता संबंधी आचार संहिता बलपूर्वक लागू हो परंतु इसमें दबाव की अपेक्षा आंतरिक प्रेरणा अधिक कारगर एवं शक्तिशाली है जो ईश्वर और परलोक की अवधारणा पर आधारित हो ।

इस्लामिक मतानुसार सभ्य समाज में ज्ञान अर्जन, जागरूकता एवं चिंतन-मनन अति महत्वपूर्ण व अनिवार्य कृत्य है ताकि सत्य को पहचाना जा सके और उसके ज़रिये जीवन में विकास की निर्बाध धारा को प्रवाहित किया जा

आदर्श समाज के लिए नैतिक क़ानून को लागू करना अनिवार्य है और इस लक्ष्य को ईश्वरीय भय, परलोक की पूछताछ का डर और भविष्य की असफलता को सामने रखकर ही प्राप्त किया जा सकता है । इसी के साथ इस्लाम सामाजिक जीवन में व्यक्तियों एवं समुदायों को नैतिक नियमों की अनिवार्यता पर विवश करने के लिए राजनैतिक व्यवस्था भी बनाना चाहता है, जिसके द्वारा नैतिकता संबंधी आचार संहिता बलपूर्वक लागू हो परंतु इसमें दबाव की अपेक्षा आंतरिक प्रेरणा अधिक कारगर एवं शक्तिशाली है जो ईश्वर और परलोक की अवधारणा पर आधारित हो ।

सके । इस्लाम ईर्ष्या, अभिमान, अहंकार व प्रतिशोध की भावना को सत्य आधारित ज्ञान के ज़रिये शांत करना चाहता है जो आदर्श समाज के लिए आवश्यक है ।

वास्तविक रूपों में समाज आचरण नियमावली, कार्य प्रणालियों के अधिकार केन्द्र एवं अनेक समूहों के मध्य पारस्परिक सहायता एवं सहयोग में मानव व्यवहारों के नियंत्रण तथा स्वतंत्रताओं की जटिल व्यवस्था है, जो निरंतर परिवर्तनशील रहती है ।

इस्लाम का मत यही रहा है कि समाज के एक आवश्यक तत्व के रूप में स्वतंत्रता का विशेष महत्व है । जहां समाज में व्यक्ति के व्यवहार को औपचारिक और अनौपचारिक साधनों द्वारा नियंत्रित किया जाता है वहां उसे कुछ क्षेत्रों में स्वतंत्रता प्रदान करना भी आवश्यक है । अभिव्यक्ति, आलोचना एवं मर्यादापूर्वक विभिन्न क्षेत्रों में अपने पक्ष को चुनने की आज़ादी के बलबूते ही एक सभ्य समाज का निर्माण किया जा सकता है और इस्लाम इसे मौलिक अधिकार मानते हुए इसके महत्व को स्वीकारता है । स्वतंत्र वातावरण में ही व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का समुचित विकास करके समाज की प्रगति में योगदान दे सकता है ।

इस्लाम मानव व्यवहारों के नियंत्रण के प्रति लचीला रुख़ अपनाता है और ऐसा कोई दबाव नहीं डालता है जिससे मानव जीवन कुंठित या किसी अनुचित दाब को अनुभव करे, बल्कि इसके स्थान पर मानव प्रकृति को वरीयता क्रम पर रखता है । वहीं इस्लामिक शिक्षाओं के अनुसार स्वच्छंदता और मनमानी जिसके आधार पर व्यक्तिगत अथवा सामूहिक नैतिक विकार के जन्म लेने की संभावना हो उस पर सख़्ती से रोक लगाता है ताकि समाज को आदर्श आधारों पर खड़ा रखा जा सके ।

इस्लाम नैतिक रूप से एक पुष्ट समाज के निर्माण व उसके कुशल संचालन का पक्षधर है । इस्लाम सामाजिक बुराइयों के उन्मूलन के बनिस्बत इस बात पर कहीं अधिक ज़ोर देता है कि जिन वातावरण के अधीन एवं मानसिकता के तहत सामाजिक बुराइयों का जन्म होता है उस उद्गम स्थल को पूरी तरह मूंद या नष्ट कर दिया जाए । मदिरा (शराब) को हर प्रकार के पापों की जननी कहा है, इसलिए इस्लाम में केवल नैतिकता के आधार पर मदिरापान निषेध नहीं है, बल्कि इसे घोर दंडनीय अपराध की श्रेणी में रखा है । इस्लाम हर प्रकार का जुआ एवं शर्तों को निषिद्ध ठहराता है जो सामाजिक क्लेश का जनक है ।

यथार्थ यही है इस्लाम का सर्वोच्च प्रयोजन एक श्रेष्ठ सामाजिक संरचना को आकार देने का रहा है जिसमें व्यभिचार और अनैतिक कर्मों के लिए कोई अनुमति नहीं होगी । सामाजिक ताने-बाने में नशीले पदार्थों के धंधे नहीं चलेंगे, वेश्यावृत्ति नहीं होगी, सेक्स व्यापार का सभी रूप वर्जित होगा, मर्दों व महिलाओं को मनचाहे मेल-मिलाप की सीमाएं तय की जाएंगी और विवाह केवल मर्दों और औरतों के बीच ही मान्य होगा ।

सामाजिक आचरणों एवं व्यवहारों को उत्कृष्ट बनाने के लिए इस्लाम बल देता है, ताकि सामाजिक परिधि में मानवीय मूल्यों व संवेदनाओं को उसके मूल आकार में स्थापित किया जा सके और यह स्वरूप सामाजिक प्रतिमान का प्रमुख कारक है जो समाज के निर्माण में आधार के रूप में कार्य करता है और समाज में व्यवस्था बनाए रखने में यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । इस्लाम ने सभी स्तरों पर भेदभावपूर्ण रवैये को दरकिनार करते हुए समानता और सभी के लिए समान न्यायिक विकल्प की उपलब्धता को अनिवार्य रूप से सामाजिक मापदंड मानते हुए सभी के अधिकारों को पूर्णत: परिभाषित करते हुए उसे सुरक्षित किया है । इसलिए छुआछूत व ऊंच-नीच का भाव इस्लामिक आवरण से सिरे से ख़ारिज है ।

यह स्पष्ट है कि सामाजिक परिधि में महिलाओं, अनाथ बच्चों, विधवाओं, ग़रीबों एवं वंचितों की स्थितियां सामाजिक स्तर का मानक होती हैं और इस्लाम ने सभी के अधिकारों को न्यायिक दृष्टिकोण से सुरक्षित किया है । इसके अभाव में व्यवस्था और शांति बनाये रखना संभव नहीं है । इस्लाम ने अनाथों के सम्पत्तिहरण को धार्मिक पाप ठहराया है । इस्लाम ही ने सबसे पहले स्त्रियों को सम्पत्ति का अधिकार प्रदान किया । विवाह का निर्णय लेने में एकाधिकार दिये । मृतक की सम्पत्ति में भी स्त्रियों को हिस्सा दिया । इस्लाम में विधवा के लिए कोई कठोर नियम नहीं है, पति की मृत्यु के चार महीने दस दिन बाद वह अपना पुनर्विवाह कर सकती है । इस्लाम ही ने अनिवार्य परिस्थिति में स्त्रियों को पति त्याग का अधिकार प्रदान किया है ।

यह इस्लाम ही है जिसने किसी स्त्री के चरित्र हनन करने वाले के लिए चार साक्ष्य (गवाह) उपस्थित करना

अनिवार्य ठहराया है और यदि वह चार साक्ष्य उपस्थित न कर सके तो उसके लिए अस्सी कोड़ों की सज़ा नियुक्त की है ।

● इस्लाम ग़रीब वर्गों की हर प्रकार से सहायता करने का आदेश देते हुए मालदारों के मालों में उनका अधिकार रखता है और उनको निर्धन होने के कारण किसी भी मानवीय अधिकार से वंचित नहीं रखता ।

''अल्लाह के माल में से तुम उन्हें (निर्धनों को) दो जो उसने तुम्हें दिया है ।'' (क़ुरआन, सूरा नूर : 33) समाज निर्माण में लोगों की रक्षा की धारणा सर्वोपरि है, इसलिए इस्लाम इसे नैतिकता का आधार मानते हुए समाज के सदस्यों को जीवित रखने में सहयोग देने के लिए प्रोत्साहित करता है और पालन-पोषण की नीति का व्यवस्था में होना आवश्यक घोषित करता है । इस्लाम मानवीय संकट प्राकृतिक आपदाओं एवं अन्य विषय परिस्थितियों के समय मानवीय संबंधों को मज़बूत रखने और एक-दूसरे के सहयोग के लिए उठ खड़े होने के लिए मानव को उभारता है ताकि मानवता को संरक्षण मिल सके ।

● इस्लामिक सामाजिक संरचना में पारस्परिक सहयोग एवं सहायता का अत्यंत ही महत्वपूर्ण स्थान है । जब तक कुछ व्यक्ति अपने-अपने उद्देश्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दूसरे के साथ सहयोग नहीं करते तब तक समाज की कल्पना ही नहीं की जा सकती । समाज के लिए सहयोगी संबंधों का होना अत्यंत आवश्यक है । इस्लाम ने पड़ोसियों के अधिकार को बहुत ही महत्वपूर्ण समझा है और उसे समाज के अति विशिष्ट रूप में मान्यता प्रदान की है ।

● इस्लाम कहता है कि जिसका पड़ोसी उसकी बुराई से सुरक्षित न हो वह ईमान नहीं लाया और वह शख़्स हरगिज़ ठोस ईमान वाला नहीं है कि वह तो पेट भर खाए और उसका पड़ोस भूखा रहे । यह कर्तव्य पड़ोसी तक ही सीमित नहीं है, बल्कि किसी साधारण मनुष्य से भी असम्मानजनक व्यवहार न करने के निर्देश दिये गये हैं । पवित्र क़ुरआन में लिखा है, ''और लोगों से बेरुख़ी न कर ।'' (क़ुरआन, 31:18) इस्लामिक शिक्षाओं के आधार पर आर्थिक विसंगतियों के कारणवश धन के लेन-देन के एवज़ में ब्याज लेने को मानवता के विरुद्ध क्रूर अपराध कहा गया और उसे पूर्णत: निषिद्ध क़रार दिया गया । बेलगाम पूंजीवाद एवं धन संचय की नीति जो दूसरों के हितों को प्रभावित करे उसके लिए इस्लाम में कोई जगह नहीं है, बल्कि इसे अपराध की श्रेणी में रखा गया है । इसी के साथ इस्लामिक शिक्षाओं में स्वार्थ की कड़ी निंदा की गयी और इस्लाम ही को यह श्रेय भी प्राप्त है कि उसने धार्मिक रूप से रिश्वत (घूस को निषिद्ध) ठहराया है । (क़ुरआन 2:188)

● इस्लाम हर मनुष्य को एक ही मां-बाप की संतान समझता है । समस्त मनुष्यों को भाई-भाई और सबको बराबर ठहराता है । यह बात केवल मुसलमानों तक सीमित नहीं है, बल्कि प्रत्येक धर्म, प्रत्येक समुदाय, प्रत्येक देश और प्रत्येक वर्ग का मनुष्य हर दूसरे मनुष्य का भाई और उसके बराबर है । मनुष्य होने की हैसियत से सबकी जान, सबकी संपत्ति, सबकी इज़्ज़त, सबका पंथ समान रूप से आदर योग्य है । इस्लाम हर अत्याचार को अत्याचार ही कहता है चाहे वह किसी के विरुद्ध हो या किसी भी भावना के साथ किया जाए । इस्लामिक मान्यताओं के अनुसार हिंसा एवं हिंसक प्रवृत्ति को जघन्य कृत्य माना गया है, क़ुरआन ने स्पष्ट किया है कि ''जिसने किसी मनुष्य को हत्या के बदले या धरती में बिगाड़ फैलाने के सिवा किसी और कारण से किसी मनुष्य की हत्या की उसने मानो सारी मानवता की हत्या कर दी और जिसने किसी के प्राण बचाए उसने सारी मानवता को जीवन दान दिया ।'' (क़ुरआन, 5:32)

● इस्लाम सामाजिक सुरक्षा को प्रगाढ़ता प्रदान करने के लिए लोगों में सौहार्द, करुणा एवं स्नेह को बढ़ाने के लिए प्रेरित करता है और सभी के अधिकारों के सुरक्षा के प्रति जागरूक करता है । इस्लाम मनुष्यों की सेवा को ईश्वर की उपासना ठहराता है, चाहे वह मुस्लिम हो या ग़ैर-मुस्लिम । त्याग, क़ुरबानी, उपकार और सद्व्यवहार चाहे वह किसी भी के लिए हो सभी क़वायदें ख़ुदा से प्रेम और उसका सामीप्य प्राप्त करने का बहुत बड़ा साधन है ।

समाज सामाजिक संबंधों की जटिल व्यवस्था है जिसमें इस्लाम का अभिमत यह है कि समूह की एकता समाज निर्माण की दृष्टि से परम आवश्यक है इसके लिए समूह के सदस्यों के मध्य संबंधों की स्थापना हेतु प्रेरक तत्व का होना आवश्यक है । सदस्यों के बीच सहयोग, सहानुभूति व अपनत्व की भावना होनी चाहिए । समूह के सदस्यों के मध्य हम की भावना होनी चाहिए और सामाजिक व्यवस्था में प्रत्येक स्थिति में समाज को संगठित रखने के लिए सामूहिक प्रयास होने चाहिए, जिसमें समाज में स्थिरता एवं निरंतरता बनी रहे ।

इस्लामी शासन में ग़ैर-मुस्लिमों के अधिकार और उनके साथ सद्व्यवहार

इस्लाम ने ग़ैर-मुस्लिमों को वह समस्त अधिकार दिये हैं जो एक इन्सान को दिये जाने चाहिए और जो एक सभ्य समाज दूसरों को देता आया है । यह अधिकार सरकार की मर्ज़ी पर निर्भर नहीं करते और न ही सरकार को इन्हें समाप्त करने की अनुमति है । इस्लाम इसकी भी अनुमति नहीं देता कि देश में सारे फ़ैसले ग़ैर-मुस्लिम भाइयों से सलाह-मशविरे के बग़ैर कर लिए जाएं और उन्हें हर चीज़ से वंचित कर दिया जाए । उनके शोषण के लिए इस्लाम ने कोई राह नहीं छोड़ी है और न ही उनके शोषण के क़ानून बनाये जा सकते हैं ।

❖ **वारिस हुसैन**

अल्लाह ने इन्सानों के लिए अपने पैग़म्बरों के माध्यम से समय-समय पर जो जीवन-व्यवस्था अवतरित की है, उसका नाम सदा से इस्लाम ही रहा है । अब से लगभग 1500 वर्ष पूर्व अपने अन्तिम संदेशवाहक और पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को भी उसने वही इस्लाम देकर अवतरित किया था जिस पर इन्सान उसी दिन से कार्यरत है जब उसकी रचना की गयी थी और जब से उसने इस धरती पर क़दम रखा है । अल्लाह ने क़ुरआन में यह स्पष्ट कर दिया है कि इन्सानों के लिए वह इस्लाम को ही पसन्द करता है और इसके अतिरिक्त किसी और व्यवस्था या आदर्श को स्वीकार नहीं करेगा ।

''आज मैंने तुम्हारे धर्म को पूर्ण कर दिया और तुम पर अपनी नेमत पूरी कर दी और मैंने तुम्हारे धर्म के रूप में इस्लाम को पसन्द किया ।'' (क़ुरआन, 5:3)

''जो इस्लाम के अतिरिक्त कोई और दीन (धर्म) तलब करेगा तो उसकी ओर से कुछ भी स्वीकार न किया जाएगा । और आख़िरत में वह घाटा उठाने वालों में से होगा ।'' (क़ुरआन, 3:85)

इस संसार में अल्लाह ने इन्सानों के लिए जो कुछ भी बनाया सब उसकी भलाई के लिए ही बनाया । हवा, पानी, पेड़-पौधे आदि सब इन्सानों की सेवा में लगे हुए हैं और इनके बग़ैर उसके जीवन का चल पाना असंभव हो जाएगा । इसी प्रकार उसके प्रदान किये हुए धर्म इस्लाम में भी इन्सानों के लिए भलाई ही भलाई छिपी है । इस्लाम शान्ति का धर्म है, बल्कि उसका तो शाब्दिक अर्थ ही शान्ति है—शान्ति सिर्फ़ उसके मानने वालों के लिए नहीं बल्कि सभी इन्सानों के लिए शान्ति, चाहे वह किसी भी धर्म के मानने वाले हों, कोई भी भाषा बोलते हों या किसी भी वर्ग से उनका संबंध हो । इस्लाम समाज में रहने वाले सभी इन्सानों के जान-माल, सम्पत्ति अथवा आत्म-सम्मान तथा आस्था की रक्षा को सुनिश्चित करता है । एक इस्लामी शासन में यह ज़िम्मेदारी न सिर्फ़ सरकार पर आती है, बल्कि हर मुसलमान को इसके लिए प्रतिबद्ध किया गया है । इस्लाम की छाया में हर धर्म के मानने वालों के सभी अधिकार सुरक्षित रहते हैं और वह बग़ैर किसी भय के अपना जीवन व्यतीत कर सकते हैं । क़ुरआन में अल्लाह ने स्पष्ट कर दिया है—

''अल्लाह तुम्हें इससे नहीं रोकता कि तुम उन लोगों के साथ अच्छा व्यवहार करो और उनके साथ न्याय करो, जिन्होंने तुम से धर्म के मामले में युद्ध नहीं किया और न तुम्हें तुम्हारे अपने घरों से निकाला । निस्सन्देह अल्लाह न्याय करने वालों को पसन्द करता है ।'' (क़ुरआन, 60:8)



क़ुरआन में ही एक दूसरी जगह अल्लाह ने स्पष्ट रूप से बता दिया है कि उसने अपने रसूलों को इस्लाम देकर भेजा ही इसलिए है कि वह दुनिया में इन्साफ़ का बोल-बाला कर सकें, जिससे कि एक न्यायपूर्ण आदर्श समाज की स्थापना की जा सके ।

''निश्चय ही हमने अपने रसूलों को स्पष्ट प्रमाणों के साथ भेजा और उनके साथ किताब और तुला उतारी, ताकि लोग इन्साफ़ पर क़ायम हों ।'' (क़ुरआन, 57:25)

इसी न्याय को आधार बनाकर इस्लाम ने सभी इन्सानों के अधिकारों की रक्षा की ज़िम्मेदारी ली और साथ ही एक ऐसी व्यवस्था बनायी जिससे कि इसे सुनिश्चित भी किया जा सके ।

एक इस्लामी शासन में मौलिक अधिकारों में मुसलमान और ग़ैर-मुस्लिमों में कोई भेदभाव नहीं होगा । क़ानून की दृष्टि में सब बराबर होंगे और किसी के साथ अन्याय नहीं किया जाएगा । उन्हें वह सारी सुविधाएं उपलब्ध होंगी जो मुसलमानों को होंगी । अपनी सीमा में रह रहे सभी नागरिकों की सुरक्षा की ज़िम्मेदारी सरकार की होगी चाहे वह मुस्लिम हो या ग़ैर-मुस्लिम । इसी प्रकार जीवन-यापन के अधिकार भी सबके लिए समान होंगे और किसी के साथ कोई भेदभाव नहीं किया जा सकेगा । लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ती के लिए और शासन की मशीनरी को चलाने के लिए सरकार मुसलमानों से ज़कात वसूल करेगी, तो ग़ैर-मुस्लिमों को जिज़्या देना होगा । नागरिक के रूप में एक इस्लामी राष्ट्र में सुरक्षा की जो ज़िम्मेदारी एक मुसलमान की होगी, वही ज़िम्मेदारी एक ग़ैर-मुस्लिम को भी उठानी पड़ेगी ।

जान की हिफ़ाज़त

यह संसार चूंकि इन्सानों के लिए ही है इसलिए इन्सान के जीवन का यहां सबसे ज़्यादा महत्व है और एक इस्लामी हुकूमत में इसकी सुरक्षा को सबसे अधिक प्राथमिकता दी गयी है और हर प्रकार के भेदभाव के दरवाज़े बंद कर दिये गये हैं । किसी बेगुनाह इन्सान की जान लेना इस्लाम की दृष्टि में ऐसा ही है जैसे समस्त मानवता का वध कर दिया गया हो । क़ुरआन कहता है–

''जिसने किसी व्यक्ति को किसी के ख़ून का बदला लेने या धरती में फ़साद फैलाने के अतिरिक्त किसी और कारण से मार डाला तो मानो उसने सारे ही इन्सानों की हत्या कर डाली । और जिसने उसे जीवन प्रदान किया, उसने मानो सारे इन्सानों को जीवन दान किया ।'' (क़ुरआन, 5:32)

इस आयत में दिया आदेश इस्लामी शासन के हर नागरिक पर लागू होगा चाहे मुस्लिम हो या ग़ैर-मुस्लिम और क़ानून हर किसी की रक्षा करेगा । हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने मुसलमानों को अपने देश में रह रहे ग़ैर-मुस्लिम सह-नागरिकों के जीवन की रक्षा का आदेश देते हुए फ़रमाया था कि–

''जो मुसलमान किसी ग़ैर-मुस्लिम शहरी को नाहक़ क़त्ल करेगा अल्लाह उस पर जन्नत हराम कर देगा ।''

(नसाई)

एक इस्लामी शासन में यदि कोई मुसलमान अपने ग़ैर-मुस्लिम सह-नागरिक का क़त्ल करता है तो क़ानून अपना काम करेगा और उस क़ातिल को सज़ा दी जाएगी । अल्लाह ने इसे अनिवार्य करते हुए क़ुरआन में आदेश दे रखा है कि–

''ऐ ईमान लाने वालो ! मारे जाने वालों के विषय में क़िसास (हत्या-दंड) तुम पर अनिवार्य किया गया....।''

(क़ुरआन, 2:178)

क़िसास के मामले में मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम के बीच इस्लाम कोई अन्तर नहीं रखता और दोनों के जीवन को बराबर का दर्जा देता है । क़ातिल को सज़ा मिले यह सुनिश्चित करना हुकूमत का काम होगा ।

संपत्ति की हिफ़ाज़त

जिस प्रकार इस्लाम हर किसी के जीवन की रक्षा की ज़िम्मेदारी सरकार पर डालता है, उसी प्रकार हर नागरिक की संपत्ति की ज़िम्मेदारी भी सरकार पर डाली गयी है । एक इस्लामी राष्ट्र में रहने वाले हर नागरिक की संपत्ति की रक्षा की जाएगी चाहे वह मुस्लिम हो या ग़ैर-मुस्लिम । न उनकी ज़मीनों पर क़ब्ज़ा किया जा सकता है, न उनसे मिलकियत छीनी जा सकती है । यहां तक की अगर वह जिज़्या न दें तब भी बदले में उनकी संपत्ति पर क़ब्ज़ा नहीं किया जा सकता ।

अपना जीवन-यापन करने के जो अधिकार एक मुसलमान को प्राप्त होंगे और जिस प्रकार कोई भी व्यवसाय करने की आज़ादी एक मुसलमान को होगी उतनी ही आज़ादी एक ग़ैर-मुस्लिम को भी होगी । उन्हें संपत्ति ख़रीदने और बेचने की पूरी स्वतंत्रता होगी और इससे वंचित करने का अधिकार किसी को नहीं होगा । उनकी विरासत उन्हीं में वितरित की जा सकेगी और उन्हें वसीयत आदि करने का वैसा ही अधिकार होगा जैसा एक मुसलमान को ।

विद्वान बताते हैं की यदि किसी ग़ैर-मुस्लिम नागरिक पर जिज़्या बाक़ी हो और उसका देहांत हो जाए, तो सरकार को उसकी सम्पत्ति से उसे वसूलने की अनुमति नहीं दी जाएगी । किसी की भी संपत्ति को ग़लत तरीक़े से इस्तेमाल करने से इस्लाम सख़्ती से मना करता है और इसमें ग़ैर-मुस्लिम शामिल हैं । क़ुरआन में अल्लाह का आदेश है–

''और आपस में तुम एक-दूसरे के माल को अवैध रूप से न खाओ, और न उन्हें हाकिमों के आगे ले जाओ कि (हक़ मारकर) लोगों के कुछ माल जानते-बूझते हड़प सको ।'' (क़ुरआन, 2:188)

आर्थिक सुरक्षा

इस्लाम अपने मानने वालों पर ग़रीबों और कमज़ोर लोगों की सहायता करने की ज़िम्मेदारी डालता है और उन्हें आदेश देता है कि अल्लाह की दी हुई दौलत को अधिक से अधिक इस प्रकार के लोगों पर ख़र्च करें जिससे की उनकी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति होती रहे । क़ुरआन में कहा गया है–

''और उनके मालों में मांगने वाले और धनहीन का हक़ है । (क़ुरआन, 51:19)

यही ज़िम्मेदारी सरकार पर भी डाली गयी है । एक इस्लामी शासन अपने नागरिकों, चाहे मुस्लिम हों या ग़ैर-मुस्लिम, की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति का ज़िम्मेदार होगा । कमज़ोर, ग़रीब, अपाहिज आदि यदि भूखे रह गये तो इस पर अल्लाह के सामने अमीरों को जवाब देना पड़ेगा और सरकार को भी । क़ुरआन इसी बात को इस प्रकार हमारे सामने रखता है–

''और वे मुहताज, अनाथ और क़ैदी को खाना उसकी चाहत रखते हुए खिलाते हैं ।'' (क़ुरआन, 76:8)

यदि कहा जाए कि एक इस्लामी शासन अपनी रूप-रेखा में एक 'सामाजिक कल्याणकारी' होता है तो बात ग़लत नहीं होगी । इस्लाम के पहले ख़लीफ़ा हज़रत अबूबक्र के समय में ग़ैर-मुस्लिमों के अधिकारों की रक्षा के लिए दिया गया आदेश इस्लामी रियासत की ग़ैर-मुस्लिमों के संबंध में नीतिओं का सबसे अच्छा उदाहरण है, इसमें कहा गया है कि–

''और मैं यह निश्चित करता हूं कि यदि कोई ग़ैर-मुस्लिम बुढ़ापे या शारीरिक कमज़ोरी के कारण काम न कर सकता हो, या किसी आपदा का शिकार होकर बेकार हो गया हो, या इनमें से कोई मालदार किसी कारण मोहताज हो गया हो और उसके धर्म के लोगों को उसकी सहायता करनी पड़ रही हो, तो ऐसे सभी लोगों का जिज़्या माफ़ कर दिया जाए और सरकारी कोष से इनकी और इन पर आश्रित परिवारजनों की आर्थिक सहायता की जाएगी, जब तक की वे इस्लामी देश के नागरिक रहते हैं ।''

मान-सम्मान की रक्षा

मुसलमानों की ही तरह एक इस्लामी शासन में ग़ैर-मुस्लिमों के मान-सम्मान की भी रक्षा की जाएगी । किसी ग़ैर-मुस्लिम का अपमान करना, उसकी बुराई करना, उसकी टोह में लगे रहना, उसे मारना-पीटना या गाली देना उसी प्रकार हराम होगा जिस प्रकार एक मुस्लिम के लिए । क़ुरआन इस संबंध में आदेश देते हुए कहता है–

''ऐ लोगो, जो ईमान लाए हो, न पुरुष पुरुषों की हंसी उड़ाए, संभव है वे उनसे अच्छे हों और न स्त्रियां स्त्रियों की हंसी उड़ाएं, संभव है वे उनसे अच्छी हों और न अपनों पर ताने कसो और न आपस में एक-दूसरे को बुरी उपाधियों से पुकारो । ईमान के पश्चात अवज्ञाकारी का नाम जुड़ना बहुत ही बुरा है । और जो व्यक्ति बाज न आये, तो ऐसे ही व्यक्ति



‘‘तुम्हारा क़र्ज़दार तंगी में है, तो हाथ खुलने तक उसे मुहलत दो, और अगर दान कर दो, तो यह तुम्हारे लिए अधिक अच्छा है, अगर तुम समझो ।’’

(क़ुरआन, 2:280)



A WELL WISHER

MALER KOTLA

PUNJAB

ज़ालिम हैं ।'' (क़ुरआन, 49:11)

क़ुरआन में दिया हुआ अल्लाह का मान-सम्मान की रक्षा और एक-दूसरे से अच्छा व्यवहार करने का यह आदेश मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम सब पर लागू होगा और इसका उल्लंघन करने वालों के विरुद्ध इस्लामी हुकूमत सज़ा का प्रावधान करेगी ।

धार्मिक स्वतंत्रता

इस्लाम उदारता और सहिष्णुता का ध्वजवाहक है और धर्म और आस्था की पूरी स्वतंत्रता का प्रतीक है । क़ुरआन का आदेश है कि–

''धर्म के विषय में कोई ज़बरदस्ती नहीं ।''

(क़ुरआन, 2:256)

इस्लाम मुसलमानों पर अपने ग़ैर-मुस्लिम भाइयों तक इस्लाम की दावत पहुंचाने की ज़िम्मेदारी तो डालता है, पर यह ज़िम्मेदारी सिर्फ़ बात पहुंचाने तक है । किसी के साथ ज़बरदस्ती नहीं की जा सकती । क़ुरआन में स्पष्ट रूप से यह बता दिया गया है कि–

''कह दो, यह सत्य है तुम्हारे रब की ओर से । तो अब जो कोई चाहे माने और जो चाहे इन्कार कर दे ।''

(क़ुरआन, 18:29)

एक इस्लामी शासन में ग़ैर-मुस्लिमों को अपने धर्म के पालन की पूरी आज़ादी होगी । सरकार न इन्हें रोक सकती है, न उन्हें अपना धर्म छोड़ने के लिए विवश कर सकती है। उनके धार्मिक स्थल की सुरक्षा की जाएगी और इनके अन्दर वह स्वतंत्रता के साथ पूजा-पाठ कर सकेंगे । इनके धार्मिक स्थलों, रीति-रिवाज, परम्पराओं आदि की रक्षा की ज़िम्मेदारी इस्लामी शासन की होगी और मुसलमान को उसको नुक़सान पहुंचाने या तोड़ने की अनुमति नहीं होगी । उनकी धार्मिक पुस्तक या धार्मिक महापुरुषों का न तो मज़ाक़ उड़ाया जा सकता है, न उनके लिए अपशब्द का उपयोग किया जा सकता है ।

अपने बच्चों की धार्मिक शिक्षा के लिए उन्हें संस्थाएं स्थापित करने की पूरी आज़ादी होगी । इस्लाम ग़ैर-मुस्लिमों के निजी-क़ानून (Personal Law) को बदलने की अनुमति नहीं देता । विवाह, तलाक़, विरासत आदि विषयों पर उन्हें अपने धर्म के अनुसार पालन करने की पूरी छूट होगी । इस्लामी अदालतें उनके संबंध में उन्हीं के क़ानून के अनुसार ही फ़ैसले करने की पाबन्द होंगी ।

नागरिकता की सुरक्षा

इस्लामी शासन में रहने वाला हर नागरिक वहां अपनी इच्छानुसार रहने के लिए स्वतंत्र होता है । हुकूमत को उसे नागरिकता से वंचित करने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं है । हां, यदि कोई अपनी मर्ज़ी से किसी अन्य देश में स्थानांतरित होना चाहता है, तो उसे इसकी पूरी आज़ादी होगी । इस्लामी शासन अपने सभी नागरिकों से वफ़ादारी की उम्मीद रखता है परन्तु उनसे राष्ट्र की उपासना करने की मांग नहीं करता ।

निष्कर्ष

इस्लाम ने ग़ैर-मुस्लिमों को वह समस्त अधिकार दिये हैं जो एक इन्सान को दिये जाने चाहिए और जो एक सभ्य समाज दूसरों को देता आया है । यह अधिकार सरकार की मर्ज़ी पर निर्भर नहीं करते और न ही सरकार को इन्हें समाप्त करने की अनुमति है । इस्लाम इसकी भी अनुमति नहीं देता कि देश में सारे फ़ैसले ग़ैर-मुस्लिम भाइयों से सलाह-मशविरे के बग़ैर कर लिए जाएं और उन्हें हर चीज़ से वंचित कर दिया जाए । उनके शोषण के लिए इस्लाम ने कोई राह नहीं छोड़ी है और न ही उनके शोषण के क़ानून बनाये जा सकते हैं ।

इस्लाम की अपनी निश्चित और स्पष्ट रूप से परिभाषित विचारधारा है और मुसलमानों को अपनी क्षमता के अनुसार इसका अनुपालन करना होगा । इस्लाम किसी के भी अधिकारों के हनन की अनुमति नहीं देता, इसलिए ग़ैर-मुस्लिमों के अधिकारों और उनको दी गयी सुविधाओं के हनन की अनुमति इस्लामी हुकूमत को नहीं है । वह ग़ैर-मुस्लिमों को उनके अधिकार एहसान के रूप में नहीं बल्कि खुले दिल से देगी और उनकी भलाई के लिए हर संभव प्रयत्न करेगी। इस्लाम ने ग़ैर-मुस्लिमों के जो अधिकार निश्चित किये हैं वह मात्र पुस्तकों में लिखे रहने के लिए नहीं हैं । सरकार की यह ज़िम्मेदारी है कि वह इनको कार्यान्वित करने के हर संभव प्रयास करे ।

इस्लाम-परिचय : हिन्दी वेबसाइटें

www.islamdharma.org
www.islamic videos.com
www.islamicwebdunia.com
www.quranhindi.com

''पूछते हैं : जुए और शराब के बारे में क्या हुक्म है ? कहो : इन दोनों चीज़ों में बड़ी ख़राबी है । यद्यपि इनमें लोगों के लिए कुछ लाभ भी है, मगर इनका गुनाह उनके फ़ायदे से बहुत ज़्यादा है ।''

(क़ुरआन, 2:219)

A WELL WISHER

ARARIA

इस्लाम में मानवाधिकार

मुस्लिम एवं ग़ैर-मुस्लिम का भेद नहीं

❖ **गुलज़ार सहराई**

इस्लाम ने इन्सान को दो प्रकार के अधिकारों के निर्वाह का पाबन्द बनाया है । पहले प्रकार के अधिकारों को 'हुक़ूक़ुल्लाह' अर्थात 'अल्लाह के अधिकार' कहा जाता है, इसमें इस्लामी अवधारणाओं के अतिरिक्त धार्मिक क्रियाएं जैसे नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात आदि आते हैं । दूसरे प्रकार के अधिकारों को 'हुक़ूक़ुल इबाद' अर्थात 'इन्सानों के इन्सानों पर अधिकार' कहा जाता है, इसमें इन्सानों के व्यावहारिक जीवन से जुड़े सभी अधिकार आ जाते हैं ।

इस्लाम ने जहां अल्लाह के अधिकारों को अदा करने पर ज़ोर दिया है, उतना ही ज़ोर दूसरे इन्सानों के अधिकारों को अदा करने पर भी दिया है । क़ुरआन में जगह-जगह नमाज़ के साथ ज़कात का उल्लेख इस बात का प्रतीक है कि इस्लाम की दृष्टि में अल्लाह के अधिकार और इन्सानों पर इन्सानों के अधिकार दोनों का महत्व बराबर है । नमाज़ जहां इन्सान को दिन में पांच बार अल्लाह की याद दिलाकर उसे अल्लाह से क़रीब करती है, वहीं ज़कात इन्सान को यह एहसास दिलाती है कि उसे जो कुछ उसके पालनहार ने दिया है, उस पर केवल उसी का हक़ नहीं है, बल्कि उन ज़रूरतमन्द लोगों का भी अधिकार है, जो किसी कारणवश वंचित रह गये हैं ।

पहले प्रकार के अधिकारों का संबंध हर व्यक्ति के निजी जीवन से है । यानी कोई व्यक्ति जो भी धारणा रखता हो, नमाज़ पढ़ता हो या नहीं, ज़कात अदा करता हो या नहीं, रोज़ा रखता हो या न रखता हो, यह उसके और अल्लाह के बीच का मामला है और अल्लाह ही को यह पूरा अधिकार है कि वह अपने अधिकारों के मामले में हुई कोताही पर अपने बन्दे को सज़ा दे या उसे माफ़ कर दे ।

परन्तु दूसरे प्रकार के अधिकारों का मामला इससे बिल्कुल भिन्न हं । ये अधिकार इन्सान को सामाजिक जीवन के प्रति ज़िम्मेदार बनाते हैं और इनके लिए वह अल्लाह के सामने जवाबदेह तो है ही, स्वयं उस समाज के सामने भी उत्तरदायी है, जिसके प्रति उसे इन अधिकारों का निर्वाह करना है ।

बन्दों के अधिकारों का महत्व

ये अधिकार अल्लाह के अधिकारों से इसलिए भिन्न हैं कि अल्लाह के अधिकारों में हुई कोताही तो केवल अल्लाह से तौबा करने और अपने रवैये में सुधार कर लेने से माफ़ हो सकती है, परन्तु यदि किसी व्यक्ति ने किसी दूसरे व्यक्ति के अधिकारों का हनन किया है तो केवल अल्लाह के सामने रोने-गिड़गिड़ाने से उसे माफ़ी नहीं मिल सकती, बल्कि जिसका अधिकार उसने छीना या नहीं दिया है जब तक वह व्यक्ति स्वयं न माफ़ करे, उस समय तक वह उस गुनाह से भार-मुक्त नहीं हो सकता । इसके महत्व को निम्नलिखित हदीस से भली प्रकार समझा जा सकता है–

एक बार अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने अपने साथियों (सहाबा) से पूछा, "बताओ सबसे बड़ा मुफ़लिस (दरिद्र) कौन है?" सहाबा (रज़ि॰) ने कहा, "हम तो मुफ़लिस उस व्यक्ति को कहते हैं जिसके पास रुपया-पैसा न हो ।" आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "मेरी उम्मत (अनुयायी समूह) में सबसे बड़ा मुफ़लिस वह व्यक्ति है जो क़ियामत के दिन नमाज़, रोज़े और ज़कात लेकर हाज़िर होगा, लेकिन उसने किसी को गाली दी होगी, किसी पर लांछन लगाया होगा, किसी का माल अवैध रूप से खाया होगा, किसी का ख़ून बहाया होगा, तो उसकी नेकियां उन लोगों को दे दी जाएंगी और यदि नेकियां समाप्त हो जाने के बाद उनके गुनाह उसके सिर मढ़ दिये जाएंगे और फिर उसको जहन्नम में फेंक दिया जाएगा ।" (मुस्लिम)

उपर्युक्त हदीस से यह बात पूरी तरह स्पष्ट हो जाती है कि इस्लाम की दृष्टि में इन्सानों पर इन्सानों के अधिकारों का कितना महत्व है और उनके प्रति लापरवाही बरतना या उनका उल्लंघन करना कितना बड़ा अपराध और गुनाह है ।

ऐसा गुनाह जो अल्लाह के आगे की गयी तमाम इबादतों पर पानी फेर सकता है । यही कारण है कि क़ुरआन एवं हदीस में जगह-जगह इस ओर ध्यानाकर्षित किया गया है ।

"निस्संदेह अल्लाह (हरेक के साथ) न्याय एवं परोपकार का आदेश देता है और निकट संबंधियों को देते रहने का और निर्लज्जता एवं बुरे कार्यों तथा उद्दंडता एवं अवज्ञा से मना करता है, वह तुम्हें उपदेश देता है ताकि तुम अच्छी तरह याद रखो ।" (क़ुरआन, 16:90)

दूसरी जगह कहा गया–

"अत: रिश्तेदार को उसका अधिकार दो और दरिद्र एवं मुसाफ़िर को (उसका अधिकार), यह उन लोगों के लिए उत्तम है जो अल्लाह की प्रसन्नता चाहते हैं और वही सफलता पाने वाले हैं ।" (क़ुरआन, 30:38)

क़ुरआन के अलावा हदीसों में भी इसके महत्व को बयान किया गया है । उदाहरणार्थ–

"वह व्यक्ति जन्नत में प्रवेश नहीं कर सकता जिसकी शरारतों से उसका पड़ोसी सुरक्षित न हो ।"

(हदीस : मुस्लिम)

"जो अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान रखता है उसे चाहिए कि वह अपने पड़ोसी को कष्ट न दे ।" (बुख़ारी)

मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम में कोई भेद नहीं

इस्लाम मानवाधिकारों से संबंधित क़ुरआन एवं हदीस की उपर्युक्त शिक्षाओं से यह कहीं भी संकेत नहीं मिलता कि ये अधिकार केवल ईमान वालों अर्थात मुसलमानों के लिए हैं और यदि कोई व्यक्ति किसी ग़ैर-मुस्लिम के साथ अधिकार हनन का व्यवहार करता है तो उसे कोई सज़ा न मिलेगी, बल्कि इनमें केवल एक इन्सान द्वारा दूसरे इन्सान के अधिकारों का ध्यान रखने की ताकीद की गयी है । उदाहरणार्थ पड़ोसी के संबंध में यह निर्देश है कि "वह व्यक्ति मोमिन (ईमान वाला) ही नहीं, जो स्वयं पेट भरकर खाए और उसका पड़ोसी भूखा सोए ।" (हदीस)

स्पष्ट है कि ग़रीब पड़ोसी मुस्लिम भी हो सकता है और ग़ैर-मुस्लिम भी । इसी प्रकार अन्य अधिकारों के मामले में भी इन्सानों के अधिकारों को अदा करने पर ज़ोर दिया गया है ।

क़ुरआन में एक जगह कहा गया है–

"और यह सत्य है कि हमने इन्सान को अपने मां-बाप का हक़ पहचानने की ताकीद की है । उसकी मां ने उसे

एक बार अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने अपने साथियों (सहाबा) से पूछा, "बताओ सबसे बड़ा मुफ़लिस (दरिद्र) कौन है?" सहाबा (रज़ि॰) ने कहा, "हम तो मुफ़लिस उस व्यक्ति को कहते हैं जिसके पास रुपया-पैसा न हो ।" आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "मेरी उम्मत (अनुयायी समूह) में सबसे बड़ा मुफ़लिस वह व्यक्ति है जो क़ियामत के दिन नमाज़, रोज़े और ज़कात लेकर हाज़िर होगा, लेकिन उसने किसी को गाली दी होगी, किसी पर लांछन लगाया होगा, किसी का माल अवैध रूप से खाया होगा, किसी का ख़ून बहाया होगा, तो उसकी नेकियां उन लोगों को दे दी जाएंगी और यदि नेकियां समाप्त हो जाने के बाद उनके गुनाह उसके सिर मढ़ दिये जाएंगे और फिर उसको जहन्नम में फेंक दिया जाएगा ।" (मुस्लिम)

कमज़ोरी पर कमज़ोरी उठाकर अपने पेट में रखा और दो साल उसका दूध छूटने में लगे । (इसी लिए हमने उसे उपदेश दिया कि) मेरा शुक्र कर और अपने मां-बाप का भी शुक्र अदा कर, मेरी ही ओर तुझे पलटना है । परन्तु यदि वे तुझ पर दबाव डालें कि मेरे साथ तू किसी ऐसे को साझी ठहराए जिसे तू नहीं जानता तो उनकी बात हरगिज़ न मान । (मगर) दुनिया में उनके साथ अच्छा व्यवहार करता रह, मगर अनुपालन उस व्यक्ति के मार्ग का कर जो मेरी ओर उन्मुख है । फिर तुम सबको पलटना मेरी ही ओर है । उस समय मैं तुम्हें बता दूंगा कि तुम किस प्रकार के काम करते रहे हो ।" (क़ुरआन, 31:14,15)

क़ुरआन की उपर्युक्त आयत में यद्यपि एकेश्वरवाद के महत्व पर ज़ोर दिया गया है और यह बताया गया है कि मां-बाप जैसे निकटवर्ती संबंधी भी यदि बहुदेववाद के लिए ज़ोर डालें तो भी एकेश्वरवादी व्यक्ति को अपने निश्चय से डिगना नहीं चाहिए, और ऐसे में उनकी आज्ञापालन न करते हुए ईश्वर की आज्ञापालन को सर्वोपरि रखना चाहिए । मगर आयत के ये शब्द कि 'दुनिया में उनके साथ अच्छा व्यवहार करता रह' यह स्पष्ट रूप से बता रहे हैं कि ऐसे में भी मां-बाप के अधिकारों से उन्हें वंचित नहीं करना चाहिए ।

ज़ाहिर है अल्लाह के साथ किसी और को साझी ठहराने का आदेश एकेश्वरवादी या मुस्लिम मां-बाप तो नहीं दे सकते । निश्चय ही ऐसा ग़ैर-मुस्लिम मां-बाप ही कर सकते हैं । परन्तु उनके साथ भी सद्व्यवहार से पेश आने की शिक्षा देना यह सिद्ध करता है कि इस्लाम ने अधिकारों के मामले में मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम में कोई अन्तर नहीं किया है ।

बीमार की बीमारपुर्सी को भी इस्लाम में बहुत सवाब (पुण्य) का कार्य बताया गया है । अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) का कथन है, "जो किसी बीमार को देखने जाता है, मानो वह जन्नत में होता है ।" (मुस्लिम) इसमें भी मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम का भेद नहीं किया गया है । इसका उदाहरण भी हमें अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के जीवन से ही मिल जाता है ।

इमाम मुहम्मद बिन हसन (रह॰) ने हज़रत बरीदा (रज़ि॰) से उद्धृत किया है कि हम लोग अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के पास बैठे हुए थे । आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "तुम लोग हमारे साथ चलो कि हम अपने यहूदी पड़ोसी की बीमारपुर्सी कर लें । उसके यहां जाने के बाद आप (सल्ल॰) ने उससे पूछा कि तुम कैसे हो ? और उसके सामने तीन बार इस्लाम स्वीकार करने का प्रस्ताव रखा । तीसरी बार में उसके बाप ने कहा, "बेटा, तुम कलिमा-ए-शहादत पढ़ लो ।" अत: उसने कलिमा-ए-शहादत पढ़ लिया । आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "अल्लाह का शुक्र है कि जिसने मेरे कारण एक व्यक्ति को जहन्नम से बचा लिया । (बुख़ारी, तिरमिज़ी)

यहां यह बात ध्यान में रहे कि अल्लाह के रसूल द्वारा उस यहूदी के यहां जाने का मूल उद्देश्य उसकी बीमारपुर्सी था । इस्लाम की ओर दावत देने का कारण यह था कि आप (सल्ल॰) नहीं चाहते थे कि वह अविश्वास की अवस्था में जान देकर अल्लाह के प्रकोप का भागी बने ।

यह एक विडंबना ही है कि अन्य धर्मावलंबियों की तरह इस्लाम के अनुयायियों में भी यह बुराई घुस आयी है कि धर्म प्राय: रस्म बनकर रह गया है । जिसका परिणाम है कि धर्म के वे कार्य जो धार्मिक क्रियाओं विशेषकर शारीरिक क्रियाओं से संबंध रखते हैं उन पर तो अच्छी तरह अमल किया जाता है । उदाहरणार्थ नमाज़, रोज़े की पाबन्दी करने वाले और बार-बार हज करने वाले तो आपको बहुत मिल जाएंगे, और इनकी नसीहत करने वाले भी, लेकिन इन्सान का इन्सान के साथ व्यवहार कैसा होना चाहिए, इस ओर कम ही लोग ध्यान देते हैं ।

हालांकि इस्लाम की यह शिक्षा भी किसी से छिपी नहीं है, विशेषकर नमाज़-रोज़े के पाबन्द पारम्परिक धार्मिक लोगों से तो बिल्कुल भी नहीं कि नमाज़, रोज़े आदि के संबंध में हुई कोताही अल्लाह के सामने गिड़गिड़ाने से माफ़ हो सकती है, परन्तु यदि किसी दूसरे इन्सान का हक़ मारा होगा तो उससे छुटकारा केवल दो ही स्थितियों में हो सकता है । एक, या तो उसका हक़ उसे दे दिया जाए, या उसी व्यक्ति से क्षमा-याचना की जाए और वह बिना किसी दबाव के इस अपराध को क्षमा कर दे, फिर चाहे वह मुस्लिम हो या ग़ैर-मुस्लिम । इसके अलावा इस पाप की सज़ा से बचने का कोई उपाय नहीं है ।

मानवाधिकारों के बारे में इतने सख़्त सिद्धांत होते हुए भी इस ओर से लापरवाही बरतना और यह समझना कि केवल अल्लाह के आगे माथा टेकने या कुछ दुआएं पढ़ लेने से सब कुछ माफ़ हो जाएगा, एक ख़तरनाक भ्रांति है ।

''ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, अगर तुम वास्तव में अल्लाह ही की बन्दगी करने वाले हो तो जो स्वच्छ अच्छी चीज़ें हमने तुम्हें प्रदान की हैं उन्हें बेझिझक खाओ और अल्लाह का शुक्र अदा करो ।''

(क़ुरआन, 2:172)

A WELL WISHER

THANE

MUMBAI



अधिकारों की प्राप्ति का आधार धर्म नहीं, मानवता !

❖ एम॰ आई॰ शेख़

शुरुआत में क़बाइली व्यवस्था प्रचलित थी । उनमें जो क़बीले ताक़तवर हुआ करते थे वे कमज़ोर क़बीलों का शोषण करते थे और इसे बुरा भी नहीं माना जाता था । ये क़बाइली व्यवस्था हज़ारों साल चलती रही । जब लोगों में थोड़ी सभ्यता का विकास हुआ तब क़बाइली व्यवस्था को बदलकर दुनिया ने बादशाही व्यवस्था को स्वीकार किया । हज़ारों सालों तक ये व्यवस्था चलती रही, मगर क़बाइली और बादशाही दोनों व्यवस्थाओं में जनता का भला न हो सका ।

जब सभ्यता का पूरा विकास हो गया तो दुनिया में लोकतंत्र की शुरुआत हुई । लोगों की, लोगों के लिए, लोगों द्वारा चुनी हुई सरकार कहकर इसका स्वागत किया गया । चंद देशों के अपवाद छोड़ दें तो आज दुनिया में बड़ी हद तक लोकतांत्रिक व्यवस्था ही लागू है । मगर ये तीनों व्यवस्थाएं अल्पसंख्यकों को सुरक्षा देने में बुरी तरह नाकाम हुई हैं ।

पाकिस्तान और बंगलादेश में हिन्दू अल्पसंख्यक सुरक्षित नहीं हैं तो भारत और म्यांमार में मुस्लिम अल्पसंख्यक सुरक्षित नहीं हैं । इतना ही नहीं जहां का लोकतंत्र दुनिया में सबसे ज़्यादा विकसित माना जाता है उस यूरोप और अमेरिका में भी अल्पसंख्यक काला समुदाय सुरक्षित नहीं है । कुल मिलाकर स्थिति यह बनती है कि इन तीनों व्यवस्थाओं में अल्पसंख्यक सुरक्षित नहीं हैं ।

ऐसा कहा जाता है कि मौजूदा लोकतंत्र के सिवा विकास संभव नहीं, मगर सच यह है कि ग़रीबों का शोषण करके ही यह व्यवस्था जन्म लेती है और उन्हीं के शोषण पर चलती है । यह व्यवस्था सिर्फ़ उन्हीं का विकास करती है जो किसी भी तरह से उसे बनाने, बिगाड़ने या प्रभावित करने की क्षमता रखते हैं । बाक़ी पांच सालों में एक बार जिनका लोकतंत्र से संबंध आता है उनके लिए और उनमें भी जो अल्पसंख्यक हैं उनके लिए यह व्यवस्था अभिशाप बन चुकी है । अमेरिका का लोकतंत्र करोड़ों रेड इंडियंस, तो आस्ट्रेलिया का लोकतंत्र लाखो ओबरगिनीज मूल निवासियों की सामूहिक हत्या करके वजूद में आया है । यहां आज भी दूसरे देशों के नागरिकों की नस्लवाद के चलते हत्याएं की जाती हैं ।

अलबत्ता इन सबमें एक अपवाद ज़रूर रहा है, वह है

इस्लामी लोकतंत्र का दौर, जिसे दौरे ख़िलाफ़त भी कहा जाता है । आप (सल्ल॰) और उनके बाद आये चार ख़लीफ़ाओं के दौर में पूरी और उमवी और अब्बासी ख़लीफ़ाओं के दौर में बड़ी हद तक अल्पसंख्यकों के हितों की ज़रूर रक्षा हुई है । मदीना से सातवीं शताब्दी में पैग़म्बरे इस्लाम हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा (सल्ल॰) द्वारा शुरू की गयी शासन व्यवस्था में सरकार पर अल्पसंख्यकों की बाक़ायदा ज़िम्मेदारी होती थी, इसी ज़िम्मेदारी के कारण उसे ज़िम्मी कहा जाने लगा ।

इस्लामी शासन में रहने वाले ऐसे अल्पसंख्यक समुदाय जो की मुसलमान नहीं हैं उन्हें अपने धर्म का पालन करने की पूरी स्वतंत्रता होती है । वे अपने पर्सनल लॉ के तहत अपने नागरिक जीवन स्वतंत्र रूप से जी सकते हैं । उनके हितों की रक्षा करना इस्लामी हुकूमत की ज़िम्मेदारी होती है । इसलिए उन्हें ज़िम्मी कहा जाता है । यानी ऐसे अल्पसंख्यक लोग जो अपनी सुरक्षा आप नहीं कर सकते । इस्लामी शासन में हर ज़िम्मी को धर्म के स्वतंत्रता के अधिकार के साथ-साथ वो सभी मूलभूत अधिकार प्राप्त होते हैं जो आज के आधुनिक दौर में संविधान द्वारा गारंटी किये जाते हैं पर व्यवहार रूप में दिये नहीं जाते ।

आज मुस्लिम देशों में ख़ासकर खाड़ी के देशों में लाखों की संख्या में दुनिया भर के देशों से विभिन्न धर्मों के मानने वाले जाते हैं, वहां वर्षों तक रहते हैं, करोड़ो डॉलर कमाते हैं, अपने देश को भेजते हैं, पर कभी उनको कोई मुसलमानों का झूंड पकड़कर ज़बरदस्ती, 'अल्लाहु अकबर' के नारे नहीं लगवाता है और न उनकी लिंचिंग करता है । वंश और रंग के नाम पर हत्याएं अमेरिका और यूरोप जैसे सभ्य माने जाने वाले देशों में इक्का-दुक्का ही सही, ज़रूर होती है, मगर किसी मुस्लिम देश में ऐसी हत्याएं नहीं होतीं । इसका कारण यह है कि मुसलमानों को मानव समानता की शिक्षा घुट्टी में पिलायी जाती है । मुसलमानों का यह ईमान है कि, दुनिया भर के सारे इन्सान एक मां-बाप की औलाद हैं, अत: सारे इन्सान बराबर हैं । इस संबंध में क़ुरआन का यह निर्देश मुसलमानों में समानता का वातावरण बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है ।

''हमने तुम्हें एक मर्द और एक औरत से पैदा किया । फिर तुम्हारी बिरादरियां और क़ौमें बना दी, ताकि तुम एक दूसरे को पहचान सको । (सूरह हुजुरात आयत नम्बर 13)

उसूली बात यह है कि, इस आयत की बुनियाद पर इस्लामी हुकूमत के अधीन रहने वाला हर वह अल्पसंख्यक नागरिक जो कि इस्लाम का अनुयायी नहीं है फिर भी मुसलमानों का भाई है । उसके हितों की रक्षा करना सरकार में होने के नाते मुसलमानों की धार्मिक और राष्ट्रीय ज़िम्मेदारी है ।

"इस्लामी शासन में रहने वाले ऐसे अल्पसंख्यक समुदाय जो की मुसलमान नहीं हैं उन्हें अपने धर्म का पालन करने की पूरी स्वतंत्रता होती है । वे अपने पर्सनल लॉ के तहत अपने नागरिक जीवन स्वतंत्र रूप से जी सकते हैं । उनके हितों की रक्षा करना इस्लामी हुकूमत की ज़िम्मेदारी होती है । इसलिए उन्हें ज़िम्मी कहा जाता है । यानी ऐसे अल्पसंख्यक लोग जो अपनी सुरक्षा आप नहीं कर सकते । इस्लामी शासन में हर ज़िम्मी को धर्म के स्वतंत्रता के अधिकार के साथ-साथ वो सभी मूलभूत अधिकार प्राप्त होते हैं जो आज के आधुनिक दौर में संविधान द्वारा गारंटी किये जाते हैं पर व्यवहार रूप में दिये नहीं जाते ।"

पश्चिमी लोकतंत्र का कोई सरकारी धर्म नहीं होता । ये ख़ुद को धर्मनिरपेक्ष कहलाना पसंद करती हैं । पर वास्तव में बहुसंख्य जनता का जो धर्म होता है वही सरकार का धर्म होता है । इतना ही नहीं वही सरकार के चयन और संचलन का आधार होता है । अल्पसंख्यक जनता के धर्म या उनकी संस्कृति का सरकार में कोई दख़ल नहीं होता । इसमें सरकार जनता के प्रति जवाबदेह होती है । बहुमत को सम्मान दिया जाता है । इसके विपरीत इस्लामी हुकूमत इस बुनियाद पर क़ायम होती है कि, ज़मीन अल्लाह की, लोग अल्लाह के और हुक्म भी अल्लाह का । ख़लीफ़ा (शासक) तो ट्रस्टी

होते हैं जो अल्लाह की इच्छा और उसके हुक्म को बजा लाकर जनकल्याण का काम करते हैं । इस लोकतंत्र में ख़लीफ़ा जनता के प्रति नहीं अल्लाह के प्रति जवाबदेह होता है, इसमें बहुमत के नहीं बल्कि अल्लाह के हुक्म के अनुसार फ़ैसले किये जाते हैं ।

पश्चिमी लोकतंत्र में बहुमत से किसी भी बुराई को हलाल घोषित किया जा सकता है। जैसे कि शराब, जुआ, अश्लीलता आदि । इस्लामी शासन में बहुमत चाहे भी तो हराम, हलाल नहीं हो सकता ।

इस्लाम में इन्सान जन्म से ही स्वतंत्र होता है । उसकी स्वतंत्रता को कोई छीन नहीं सकता, सरकार भी नहीं । इसीलिए द्वितीय ख़लीफ़ा हज़रत उमर (रज़ि॰) ने अपने राज्यपालों को लिखे एक पत्र में कहा था कि, 'तुमने लोगों को कब से अपना गुलाम बना लिया, जबकि उनकी माओं ने उन्हें स्वतंत्र जन्म दिया था ।' पाठक समझ गये होंगे कि मनुष्य की स्वतंत्रता इस्लाम में बाइ डिफॉल्ट होती है, जिसका संकोच करने का अधिकार अदालत के सिवा किसी को नहीं होता ।

इस्लामी हुकूमत में अल्पसंख्यकों को स्वतंत्र रहने का अधिकार क़ुरआन में दिया हुआ है । ''तेरा रब चाहता तो ज़मीन पर जितने लोग हैं सबके सब ईमान ले आते । तो क्या तुम लोगों को मजबूर करोगे कि वे मुसलमान बन जाएं ।''

(सूरह : यूनुस आयत नम्बर : 100)

पैग़म्बर यूनुस (अलैहि॰) को संबोधित करके ये जो बात कही गयी है, उससे स्पष्ट हो जाता है कि आस्था के मामले में ज़बरदस्ती बिल्कुल ही स्वीकार्य नहीं है । लिहाज़ा इस आयत से यह बात साबित हो जाती है कि रहती दुनिया तक इस्लामी हुकूमत में सभी धर्मों के मानने वालों को रहने का अधिकार है । यह सिर्फ़ किताबी बात नहीं व्यवहार रूप से 56 मुस्लिम देशों में इसे देखा जा सकता है । हर मुल्क में मुसलमानों के अलावा भी कई धर्म के लोग शांतिपूर्ण ढंग से रहते हैं ।

किसी भी व्यवस्था का स्वीकार करते ही वो व्यवस्था अपने आप चलने लगती है, ऐसा कभी नहीं होता । उसे चलाने, चलने योग्य बनाने, उपयोगी बनाने के लिए नेता और नागरिक दोनों को त्याग करना पड़ता है । सिर्फ़ क़ानून बना लेने से कुछ नहीं होता उसे लागू करना पड़ता है । इसकी परीक्षा तब होती है जब क़ानून की जद बहुसंख्यक लोगों पर पड़ती है । वहां क़ानून ही नहीं, न्याय व्यवस्था ही नहीं, बल्कि पूरे लोकतंत्र की आज़माइश होती है, जिसमें पश्चिमी लोकतंत्र अक्सर नाकाम हो जाता है ।

शुद्ध इस्लामी शासन आज दुनिया के किसी भी देश में लागू नहीं है, यह बात स्वीकार करने के बावजूद यही एक मात्र सही लोकतंत्र है और दुनिया में शांति प्रस्थापित करने की अंतिम आशा है, इस बात का इन्कार नहीं किया जा सकता । मुसलमानों की कोताही और पश्चिमी लोकतंत्र की दमनकारी नीतियों के चलते शुद्ध इस्लामी लोकतांत्रिक व्यवस्था स्थापित नहीं हो सकी है । लेकिन इन दोनों व्यवस्थाओं में फ़र्क़ अगर देखें तो पता चल जाता है कि, इस्लामी लोकतंत्र ही प्राकृतिक लोकतंत्र है । पश्चिमी लोकतंत्र में क़ानून का राज होता है तो इस्लामी लोकतंत्र में न्याय का राज होता है । पश्चिमी लोकतंत्र में नैतिकता को ज़्यादा महत्व नहीं दिया जाता इसके विपरीत इस्लामी लोकतंत्र की बुनियाद ही नैतिकता पर रखी होती है ।

इस्लामी शासन में धर्म की स्वतंत्रता को बहुत ही महत्व दिया गया है । क़ुरआन में स्पष्ट निर्देश दिये गये हैं कि, ''दीन के मामले में कोई ज़बरदस्ती नहीं ।''

(सूरह बक़रा आयत-257)।

25 yrs. Service (Regd.)

AL KAUSAR HOLY HERBAL

HOSPITAL & RESERCH CENTRE

(A minority Unit of Islamic Medicine Under Art.30 (1) Const. of India)

Founder: **Al-Hajj Dr. ABDUR RASHEED**

Ph.D. (HOLISTIC HERBAL)

Medicine of Hazrat Mohammad (S.A.W)
By faith of ALLAH
Shyamganj Road, B.Deoghar - 814112
(Jharkhand) India

Kidney, Heart, Liver, Pancreas, Uterus, disorders, Pain Control, Asthama, Child Birth (Cardio, Uro, Nephro, Neuro, Gastroe, Gynae, Hemato, Diabeto Intercentral cardio, Bronco etc.)

Recharge your body, mind, psyco, soul, desire heart way of "Islamic medicine". Further treatment require or not feels within 7 to 19 days

(Rooms available)

Enquiry: 9955725769, E-mail: alkausarreached@gmail.com
Bank of India, Deoghar Branch A/c-446110100000871
IFS Code No. BKID 0004461



''ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, सब्र और नमाज़ से मदद लो । अल्लाह सब्र करने वालों के साथ है ।''

(क़ुरआन, 2:153)



A WELL WISHER

ASIA RUBBER ENTERPRISES

KOLKATA

माल ख़र्च करने में अक़ीदे का हस्तक्षेप ?

❖ डॉ॰ वक़ार अनवर

इन्सान के पास माल दो ही तरीक़ों से आ सकता है : एक वैध और दूसरा अवैध । वह इन दोनों में से किसी का भी मालिक नहीं है । जहां तक अवैध माल का संबंध है, उससे वैध रूप से छुटकारा पाना उसकी ज़िम्मेदारी है । जो माल अवैध रूप से उसके पास है उसका भी वह अस्ली मालिक नहीं है । वह उसके पास अल्लाह की ओर से अमानत (धरोहर) है, क्योंकि तमाम चीज़ों का अस्ली मालिक इस दुनिया का बनाने वाला ही है । उन दोनों लोकों के मालिक ने जिस व्यक्ति को जो कुछ भी दिया है, अमानत के तौर पर दिया है जिसका उस व्यक्ति के मरने के बाद उसे दोबारा उठाकर हिसाब लिया जाएगा और फ़ैसला किया जाएगा कि उसे उसके बाद के शाश्वत जीवन में जन्नत का सुख मिले या जहन्नम की यातना । यह बात समझ ली जाए तो यह समझने में कोई कठिनाई नहीं होगी कि माल का इस्तेमाल उसके अस्ली मालिक की इच्छानुसार ही किया जा सकता है । अल्लाह तआला ने मानव जीवन के अन्य मामलों की तरह माल का सदुपयोग करने के बारे में भी अपनी इच्छा अपने आख़िरी पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) और अपनी आख़िरी किताब क़ुरआन के द्वारा बता दी है ।

किसी के पास माल हो तो वह उसे अपने ऊपर ख़र्च कर सकता है । इसी प्रकार उसे अपने माल को अपने घर वालों–मां, बाप, रिश्तेदारों, पड़ोसियों, दूसरे ज़रूरतमन्द लोगों तथा अन्य भलाई के कार्यों में क्रमशः ख़र्च करना चाहिए । इस प्रकार समझ सकते हैं कि अगर पड़ोसी मुहताज है तो दूर के लोगों पर ख़र्च करने से पहले उसका हक़ अधिक है ।

इसी तरह पड़ोसियों में अगर एक रिश्तेदार भी है तो पहला हक़ उसका है और दूसरे रिश्तेदारों से पहले अपने घर वालों और मां–बाप की ज़िम्मेदारियां अदा करनी होती हैं । यह सारा विवरण क़ुरआन और हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की शिक्षाओं में पाया जाता है और इन शिक्षाओं पर अमल करके हज़रत मुहम्मद ने दिखा भी दिया है ।

यहां यह सवाल पैदा होता है कि अपने अतिरिक्त दूसरों पर माल ख़र्च करने में इस क्रम का ध्यान रखते हुए क्या उन लोगों का धर्म और अक़ीदा (धार्मिक अवधारणा) का ध्यान रखा जाएगा ? इसका जवाब यह है कि नहीं, जिनके लिए



माल ख़र्च किया जाएगा उनके धर्म से इसका कोई लेना-देना नहीं है । मां-बाप, रिश्तेदार, पड़ोसी और ज़रूरतमन्द लोगों की आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करते समय यह नहीं देखा जाएगा कि उनका धर्म क्या है । उनका मां-बाप होना, रिश्तेदार होना या पड़ोसी होना उन पर माल ख़र्च करने के लिए काफ़ी है । इसका मतलब यह नहीं है कि अक़ीदे और ख़र्च करने में कोई संबंध नहीं है । कुछ मामले ऐसे भी हैं जहां माल ख़र्च करने का लाभ मुसलमानों को पहुंचना चाहिए । पहली शक्ल ज़कात और उश्र (खेती की पैदावार का दसवां भाग निकालना) की है । जब किसी के पास माल उसके ख़र्च से अधिक हो तो उसे हर वर्ष ज़कात निकालनी होती है और खेती की पैदावार हो तो उश्र निकालना होता है ।

ज़कात और उश्र हिसाब करके निकालना ज़रूरी है और उन्हें किन मदों (प्रयोजनों) में ख़र्च करना है, इसे इस्लाम ने बता दिया है । ये सारी मदें (प्रयोजन) ज़रूरतमन्दों पर ख़र्च करने और पुण्य कार्य के हैं । इन मदों की रक़म वितरित करने में आमतौर पर लेने वाले का मुसलमान होना ज़रूरी है । अलबत्ता यहां भी कुछ अपवाद स्थितियों में अन्य धर्मों के लोगों पर ख़र्च किया जा सकता है । हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का कथन है कि यह उन (मुसलमानों) के अमीरों से ली जाती है और उन (मुसलमानों) के ग़रीबों पर ख़र्च की जाती है ।

दूसरी शक्ल जहां माल केवल मुसलमानों के बीच वितरित होगा, विरासत का मामला है । किसी मुसलमान की मौत के बाद उसकी छोड़ी हुई धनराशि का वितरण क़ुरआन ने तय कर दिया है और इसकी व्याख्या हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने कर दी है । मरने वाले को एक तिहाई तक वसीयत करने का हक़ होता है जो वह अपनी इच्छा से कर सकता था और जिसके द्वारा वह किसी ग़ैर-मुस्लिम को भी अपने छोड़े हुए धन में से हिस्सा दे सकता है । शेष धन क़ुरआन के आदेशानुसार उसके मुसलमान रक्त संबंधी मुसलमानों में वितरित हो जाएगा ।

यहां यह बात नोट करने की है कि यह सिद्धांत लेने और देने दोनों का है, अर्थात अपने ग़ैर-मुस्लिम रिश्तेदार की सम्पत्ति में इस्लामी क़ानून के अनुसार एक मुसलमान का कोई हिस्सा नहीं है । मैं एक ऐसे मुसलमान को जानता हूं जो पहले ग़ैर-मुस्लिम राजपूत थे और उनके पिता के मरने के बाद उनके शरीफ़ रिश्तेदारों ने उन्हें सम्पत्ति में हिस्सा देना चाहा तो उन्होंने लेने से यह कहते हुए इन्कार कर दिया कि विरासत के वितरण में अक़ीदे का एक होना आवश्यक है ।

ये दोनों अपवाद स्थितियां धर्म के कारण लागू होने वाले कर्तव्यों की हैं । यह बात स्पष्ट है कि उश्र, ज़कात और विरासत के आदेश क़ुरआन ने दिये हैं जिनका अनुपालन की अपेक्षा किसी ग़ैर-मुस्लिम से नहीं की जा सकती । यही मामला ईद की नमाज़ से पहले सदक़ा-ए-फ़ित्र की रक़म निकालने का है । यह सदक़ा चूंकि ईद की तैयारी के लिए दिया जाता है इसलिए इसकी आवश्यकता मुसलमान ज़रूरतमन्दों को है ।

बिना किसी भेदभाव के लोगों के काम आना एक मानव का मूल नैतिक स्वभाव है । नबी (सल्ल॰) की मशहूर हदीस है कि वह अल्लाह तआला की ओर से नैतिकता की परिपूर्णता के लिए भेजे गये हैं । मदीना में मुसलमानों की हिजरत के बाद उनके सामने यह सवाल पैदा हुआ कि अपने ग़ैर-मुस्लिम रिश्तेदारों और पड़ोसियों के साथ उनका व्यवहार कैसा होना चाहिए और उन पर अपना धन ख़र्च किया जाए या नहीं ? इसका जवाब क़ुरआन में अल्लाह ने दिया और उन्हें बताया कि जहां तक किसी के सत्य मार्ग पाने का सवाल है, इसकी ज़िम्मेदारी तुम पर नहीं है । तुम उन पर अपना माल ख़र्च करो और इसका सवाब (पुण्य) तुमको पूरा मिलेगा । (क़ुरआन, 2:272)

क़ुरआन की इस आयत के अवतरित हो जाने के बाद नबी (सल्ल॰) ने आदेश दिया कि किसी भी धर्म का मानने वाला तुमसे मांगे तो उस पर ख़र्च करो । एक अन्य उल्लेख में है कि आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया, ''तमाम धर्म के अनुयायियों पर सदक़ा और ख़ैरात करो ।'' यही कारण है आप (सल्ल॰) का अपना अमल, सहाबा (रज़ि॰) का तरीक़ा और पूरी उम्मत का व्यवहार हमेशा से यही रहा है कि नैतिकता के तमाम स्वरूपों और विशेषकर अपने माल के द्वारा अपने मां-बाप और रिश्तेदारों की सेवा तथा ज़रूरतमन्दों की सहायता करने में इस बात का कोई भेद नहीं किया कि उन लोगों का धर्म क्या है । अल्लाह के तमाम बन्दों की सेवा अल्लाह के तमाम बन्दों का धर्म है । हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का यह कथन सदैव याद रखना चाहिए कि 'पूरी सृष्टि अल्लाह का परिवार है ।'

आर्थिक क्षेत्र में सहिष्णुता, उदारता तथा नैतिकता

❖ डॉ॰ फ़रहत हुसैन

पाश्चात्य आर्थिक विचारों में अर्थशास्त्र को केवल भौतिकवादी दृष्टिकोण से देखा गया । उसमें नैतिकता, उदारता, सहिष्णुता तथा मानवीय पक्ष को स्थान नहीं दिया गया । वस्तुओं तथा सेवाओं का उत्पादन, विज्ञापन, उपभोक्तावाद, मूल्य निर्धारण, मज़दूरी तथा वेतन निर्धारण आदि के संबंध में निर्णय लेते समय केवल लाभ अधिकतम करना (Maximization of Profit) ही मूल उद्देश्य तय किया गया । इस्लाम ने जो प्रणाली प्रस्तुत की है उसमें भौतिक आवश्यकताओं को अनदेखा नहीं किया गया, साथ ही आर्थिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में, प्रत्येक पक्ष (पूंजीपति, उपभोक्ता, श्रमिक, भू-स्वामी, कृषक, व्यापारी) के हितों को संरक्षित किया है । ग़रीब-अमीर, मिल मालिक और मज़दूर, क्रेता व विक्रेता, उत्पादक व उपभोक्ता, काला-गोरा, महिला-पुरुष सबके हितों का अनुपम संरक्षण इस्लामी प्रणाली में मौजूद है । जो वर्ग जितना कमज़ोर है इस्लामी व्यवस्था उतनी ही अधिक उसकी पक्षधर और हिमायती है ।

सहिष्णुता एवं उदारता से परिपूर्ण इस प्रणाली के कुछ महत्वपूर्ण बिन्दु इस प्रकार हैं–

1. मानवीय मूल्यों पर आधारित

इस्लाम का एक क्रान्तिकारी क़दम यह है कि उसने आर्थिक क्रिया को संपूर्ण मानवीय जीवन का अंग मानकर उसे नैतिकता से जोड़ दिया । ज़ुल्म-ज़्यादती, अत्याचार और शोषण समाप्त कर नैतिक गुणों को बढ़ावा दिया गया, ताकि लोग एक-दूसरे के साथ स्वेच्छा एवं निःस्वार्थ भाव से हमदर्दी और एहसान का व्यवहार करें और उनके बीच प्रेम-भाव बढ़े ।

क़ुरआन ने सत्य-वचन पर बहुत बल दिया (33:70)। न्याय करने, न्याय पर डटे रहने, इन्साफ़ की गवाही देने का आदेश दिया (4:135, 4:58, 16:90-91)। माता-पिता, अनाथों और मुहताजों आदि पर ख़र्च करने पर उभारा

“

इस्लामी आर्थिक प्रणाली पूंजीपति की विरोधी नहीं है, मगर उनकी गतिविधियों को समाजहित से नियमित और नियंत्रित करती है । साथ ही इसका फ़ोकस सीमांत आदमी और वंचित वर्ग (अनाथ, मुहताज, अपंग, बेसहारा, बूढ़े आदि) की बुनियादी व मूल आवश्यकताएं पूरी करना है । धन का प्रवाह इस वर्ग की ओर भी बना रहे– ‘‘ऐसा न हो कि तुम्हारा धन केवल धनवानों के बीच चक्कर लगाता रहे ।’’ (क़ुरआन, 59:7)

”

(2:83, 2:177, 2:215, 4:36, 6:15, 6:152, 17:23, 17:34 37:26 आदि)।

2. ब्याज पर प्रतिबंध मानवता के लिए अत्यंत हानिकारक होने के कारण

ब्याज (सूद) की मनाही तो हर धर्म में है, मगर ब्याज खाना जितना जघन्य कृत्य है, उतनी कठोरता इसके विरुद्ध इस्लाम के अतिरिक्त किसी ने नहीं दिखायी–

''ऐ ईमान वालो ! अल्लाह से डरो और तुम्हारा जो ब्याज लोगों पर है उसे छोड़ दो अगर तुम आस्थावान हो । परन्तु यदि तुमने ऐसा न किया तो अल्लाह और उसके पैग़म्बर की ओर से तुम्हारे विरुद्ध युद्ध की घोषणा है ।''

(क़ुरआन, 2:278-279)

कितना दयाभाव निहित है इस युद्ध की घोषणा में उन लोगों के लिए जो चक्रवृद्धि ब्याज के बोझ तले सिसक रहे हैं ।

कुछ वर्षों पहले तक एक कमज़ोर तर्क दिया जाता था कि यह महाजनी सूद का मामला है, मगर अब स्पष्ट हो चुका है कि बैंकों से ऋण लेकर भी किसान आत्महत्या कर रहे हैं । पिछले दिनों संयुक्त राज्य अमेरिका के कई बड़े बैंक ब्याज आधारित पद्धति के कारण फेल हो चुके हैं जिसका प्रभाव ग़रीब जनता पर पड़ा है ।

3. ज़कात अनिवार्य दान

ग़रीब के प्रति हमदर्दी का उदाहरण हैं 'ज़कात' की व्यवस्था । प्रत्येक सम्पन्न मुस्लिम के लिए अनिवार्य है कि वह अपनी जमा धन-राशि या सोना-चांदी में से प्रतिवर्ष 2½ प्रतिशत दान करे । व्यापारिक स्टाक पर 2½ प्रतिशत, कृषि उपज पर 5 से 10 प्रतिशत तथा पशुपालन, मधुपालन, खनिज उत्पादन पर भी ज़कात देने का नियम है । यह किसके लिए है–निर्धन, अनाथ, मुहताज और ऋण-ग्रस्त आदि की सहायतार्थ । एक ओर निर्धन की मदद हो रही है तथा दूसरी ओर धनवान को अपने निर्धन भाइयों का हमदर्द बनाया जा रहा है ।

ज़कात प्रचलित टैक्सों से भिन्न है । टैक्स वुसूली तो निर्धन से भी की जाती है परन्तु बड़ा भाग सरकारी कार्यों, मंत्रियों और नौकरशाहों पर ख़र्च हो जाता है । निर्धनों के कल्याण व भलाई की स्कीमें भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ जाती हैं । ईश्वरीय विधान द्वारा जो प्रणाली दी गयी है वह संपूर्ण समाज के लिए कल्याणकारी है । ज़कात के कुछ बड़े लाभ इस प्रकार हैं–

1. असंपन्न और वंचित वर्ग की सहायतार्थ एक प्रकार का सामाजिक बीमा (Social Insurance) है ।

2. धनवान वर्ग में निर्धन के प्रति दयाभाव, सहानुभूति और इन्सानी हमदर्दी की भावना उत्पन्न होती है, इससे निर्धन वर्ग ऊपर उठता है तथा धनवान व निर्धन के बीच का संघर्ष पनपने नहीं पाता ।

3. आर्थिक जगत में धन का प्रवाह बाज़ार की ओर होने से वस्तुओं और सेवाओं की मांग बढ़ती है, जिससे उत्पादन तथा रोज़गार में वृद्धि होती है । परिणामस्वरूप समाज आर्थिक ख़ुशहाली की ओर अग्रसर होता है ।

4. यह टैक्स नहीं है इसलिए इसकी चोरी का रुझान भी नहीं पाया जाता । यह तो ईश-भक्ति और इबादत है, इसलिए स्वयं हिसाब लगा-लगाकर ध्यानपूर्वक भुगतान किया जाता है ।

4. आय के स्रोतों पर प्रतिबंध

यह भी ईश्वर की दयालुता का नमूना है कि उसने अपनी सूक्ष्मदर्शिता और तत्वदर्शिता से आय व्यय की उन मदों पर प्रतिबंध लगा दिया जो व्यक्ति और समाज के लिए घातक हो सकते हैं । प्रतिबंधित आय के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

- किसी का माल उसकी स्वतंत्र सहमति के बिना ले लेना या दबाव डालकर या उसे धोखे में रखकर लेना । किसी दूसरे का माल रिश्वत देकर हड़प कर लेना ।

(क़ुरआन, 2:188)

- अमानत में ख़यानत करना । (क़ुरआन, 2:283)
- चोरी डकैती । (क़ुरआन, 60:12)
- नाप-तौल में हेरा-फेरी द्वारा कमाई ।

(क़ुरआन, 83:1-3)

- व्यभिचार और वेश्यावृत्ति से आय ।

(क़ुरआन, 24:33)

- ब्याज और ब्याज पर आधारित समस्त क्रियाकलापों की आय । (क़ुरआन, 2:275)
- शराब और जुआ । (क़ुरआन, 4:90)

5. व्यय पर भी पाबन्दी

अपने कमाए धन को फ़ुज़ूल में उड़ाने से रोका गया है । (क़ुरआन, 17:27), मिथ्या प्रदर्शन को नापसन्द किया गया, साथ ही कंजूसी करने को भी मना किया गया है । तात्पर्य

यह है कि धन जो एक महत्वपूर्ण साधन है उसे संतुलित ढंग से ख़र्च करो । इस तरह जो संसाधन बचेंगे वे निर्धनों के उद्धार में लगाए जा सकते हैं । इस संबंध में क़ुरआन की यह शिक्षा कितनी सुन्दर है–

''अल्लाह के नेक बन्दे वे हैं जो ख़र्च में न तो 'अति' करते हैं और न कंजूसी, बल्कि इन दोनों के बीच 'संतुलन' पर रहते हैं ।'' (क़ुरआन, 25:67)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने मर्दों को सोने के आभूषण आदि पहनने पर रोक लगायी । इसी प्रकार सोने-चांदी के बर्तनों के प्रयोग को रोका गया । नबी (सल्ल॰) ने लड़के की शादी के अवसर पर दी जाने वाली ऐसी दावत (वलीमा) को 'बुरा' बताया जिसमें केवल धनवानों को बुलाया गया हो ।

6. वंचित वर्ग पर फ़ोकस

इस्लामी आर्थिक प्रणाली पूंजीपति की विरोधी नहीं है, मगर उनकी गतिविधियों को समाजहित से नियमित और नियंत्रित करती है । साथ ही इसका फ़ोकस सीमांत आदमी और वंचित वर्ग (अनाथ, मुहताज, अपंग, बेसहारा, बूढ़े आदि) की बुनियादी व मूल आवश्यकताएं पूरी करना है । धन का प्रवाह इस वर्ग की ओर भी बना रहे–

''ऐसा न हो कि तुम्हारा धन केवल धनवानों के बीच चक्कर लगाता रहे ।'' (क़ुरआन, 59:7)

7. सामाजिक व्यवस्था

इस्लाम ने समाज का ताना-बाना इस प्रकार बुना है कि सब एक-दूसरे के सहयोगी हैं । इस सहयोग में धर्म, जाति, भाषा या क्षेत्र का अन्तर कोई मतभेद पैदा नहीं कर सकता। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के इस आदेश पर विचार करें–

''वह आदमी आस्थावान नहीं जो स्वयं रात को पेट भर खाकर सो रहे और उसका पड़ोसी भूखा रहे ।''

जो लोग किसी कारण आर्थिक दौड़ में पिछड़ जाएं उनकी मदद के लिए उनके पड़ोसी, रिश्तेदार और मित्र आगे आएं । यदि फिर भी ज़रूरत शेष रहे तो ज़कात, दान-पुण्य और सरकारी कोष उनकी सहायता हेतु उपलब्ध हो ।

8. जीविकोपार्जन और स्वरोज़गार को प्रोत्साहन

मनुष्य पर अपने जीविकोपार्जन हेतु दौड़-धूप अनिवार्य है–

''नमाज़ पूरी कर लेने के बाद आजीविका प्राप्ति हेतु धरती पर फैल जाओ ।'' (क़ुरआन, 62:10)

ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने व्यापार, व्यवसाय, कृषि, दस्तकारी और मज़दूरी को प्रोत्साहित किया । अकारण मांगने या ऋण लेने को हतोत्साहित किया । एक व्यक्ति ने नबी (सल्ल॰) से आर्थिक सहायता की याचना की । आपने कहा कि तुम्हारे पास जो सामान हो उसे लाओ । वह व्यक्ति कम्बल और प्याला ले आया । आपने सामान नीलाम किया और कहा आधी रक़म से घर में खाना ले जाए और आधी रक़म से कुल्हाड़ी ख़रीदे और लकड़ियां काटकर बाज़ार में बेचा करे । ऐतिहासिक उल्लेख में दर्ज है कि उस कुल्हाड़ी का लकड़ी का दस्ता स्वयं अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने अपने हाथ से लगाया था ।

9. श्रमिकों के साथ दयालुता

दासों के बारे में जो निर्देश दिये गये हैं वह श्रमिकों पर भी लागू होंगे, क्योंकि उस समय अधिकांश श्रम दासों से कराया जाता था । इसके अतिरिक्त कुछ महत्वपूर्ण इस्लामी शिक्षाएं प्रस्तुत हैं–

1. **श्रम सम्मान :** हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने मेहनत की कमाई को प्रोत्साहित किया तथा श्रम को सम्मान दिया। नबी (सल्ल॰) के एक अनुयायी थे सअद अंसारी, जब उन्होंने हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) से हाथ मिलाया तो आपने देखा कि उनके हाथ कठोर थे । कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि दिन भर फावड़ा चलाता हूं । आपने उनके हाथ चूम लिए और कहा, ''यह हथेलियां अल्लाह को प्यारी हैं, इन्हें आग स्पर्श नहीं करेगी ।''

2. दासों को भाई कहा गया, तो श्रमिक भी भाई हुए।

3. उनकी सामर्थ्य से अधिक कार्य न लिया जाए ।

4. मज़दूर (श्रमिक) की मज़दूरी तथा अन्य शर्तें पहले तय की जाएं ।

5. मज़दूर की मज़दूरी उसका पसीना सूखने से पूर्व अदा कर दी जाए । अर्थात शीघ्र दी जाए, इसमें वेतन का समय से भुगतान भी सम्मिलित है ।

6. अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा कि अल्लाह फ़रमाता है, ''प्रलय के दिन मैं तीन आदमियों का दुश्मन हूंगा–उसमें एक वह जिसने मज़दूर से मेहनत पूरी करायी फिर उसकी मज़दूरी नहीं दी । (हदीस : बुख़ारी)

श्रमिकों और कर्मचारियों को भी निर्देश है कि वे ईमानदारी से कार्य करें और मालिक को हानि न पहुंचाएं ।

इस्लाम और विश्वबंधुत्व

❖ **ख़ान शाहीन**

दानशीलता, विशालहृदयता और प्रेम इसी का नाम जीवन है । जहां कंजूसी, संकीर्णता और नफ़रत पायी जाती है वह जीवन नहीं हो सकता ।

हम जानते हैं कि आज पूरे विश्व या अपने भारत में लोग इस्लाम को ऊपरी सतह से जानते हैं इसी कारण मीडिया द्वारा लोगों में इस्लाम की ग़लत छवि को उजागर किया जाता है और यह बात उजागर करने की कोशिश की जाती है कि इस्लाम धर्म को मानने वाले लोग भाईचारे के विरोधी हैं । परंतु यह बात कभी सत्य नहीं हो सकती है कि ऐसा धर्म जिसने घर से लेकर संपूर्ण विश्व तक कि बंधुत्व की बात की हो वो इसका विरोधी हो ।

इस्लाम इस बात का विरोधी है कि मनुष्य संकीर्ण मानसिकता वाला हो और वह एक-दूसरे से कट कर रहे । इसलिए इस्लाम ने इन्सान को हर प्रकार की संकीर्णता से बचाकर सारे ही इन्सानों को एक और संगठित रहने की सीख दी है और फिर उसने इस एकता के आकार-प्रकार और उसकी आवश्यकता का विस्तृत रूप से वर्णन किया है । इस्लाम की शिक्षा यह है कि सारे इन्सान एक समुदाय बनकर रहे जैसा कि ईश्वर ने उन्हें एक गिरोह के रूप में पैदा किया है । क़ुरआन में है–

''सारे लोग एक ही समुदाय है ।''

ये परिवार, गोत्र आदि तो आज पहचान के लिए है ताकि आदमी अपने रिश्तेदारों के हक़ अदा कर सके । इसका उद्देश्य कदापि यह नहीं है कि लोगों में विभेद पैदा हो और वह परस्पर एक-दूसरे से झगड़ने लगे ।

इस्लाम की शिक्षा यह है कि सबसे प्रतिष्ठा और महानता का परिचायक, सदाचरण और ईशपरायणता है, न कि वंश और कुल की श्रेष्ठता या अन्य कोई वस्तु । न किसी इन्सान को इन्सान पर श्रेष्ठता है, न ही किसी गोरे को काले पर, न ही किसी उच्च जाति वाले को निम्न जाति वाले पर । ये सब तो इन्सानों की ख़ुद बनाई हुई बाते हैं कि कुछ इन्सानों को उच्च श्रेणी में रख दिया गया और उनको सम्मान दिया जाने लगा और किसी को निम्न दर्जे का इन्सान माना जाने लगा ।

इस्लाम की शिक्षा है कि सबसे प्रेम करे, सबके शुभचिंतक बनकर रहे, सेवा कार्य से जी न चुराए, पड़ोसियों के ख़याल रखे और उपद्रव और बिगाड़ से नफ़रत करे ।

इस्लाम के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया–''ख़ुदा फ़रमाता है कि मुहब्बत उन लोगों के लिए अनिवार्य हो गयी, जो मेरे लिए परस्पर एक-दूसरे से मुहब्बत करे ।''

हम जानते हैं कि नैतिकता और प्रेम का स्वाभाविक परिणाम है कि हमारी बातचीत में प्रेम की झलक हो और मधुरता पायी जाए । पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

''अपने भाई से हंसकर बोलना भी तेरे लिए दान है ।''

परस्पर प्रेम और उदारता की परिणति है, हम एक-दूसरे के शुभचिंतक हों और भलाई चाहने वाले हों ।

पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया–''आपस में ईर्ष्या न करो, और न आपस में बैर भाव रखो और न आपस में एक-दूसरे से संबंध-विच्छेद करो । अल्लाह के बन्दे और भाई-भाई बनकर रहो । इस्लाम लोगों से इस बात की अपील करता है कि वह चाहे उसके घर वाले न हों, लेकिन वह सभी के साथ वैसा ही व्यवहार करें जैसा अपने घर के लोगों के साथ करता है, क्योंकि इस्लाम ने आपस में एक-दूसरे से बंधने की बात कही है ।

पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

''सारे लोग ख़ुदा के कुटुम्ब हैं, अत: लोगों में ख़ुदा के निकट सबसे उत्तम वह व्यक्ति है जो उसके कुटुम्ब के साथ अच्छा व्यवहार करें ।''

अच्छे इन्सान वही हैं जो उपद्रव और बिगाड़ से नफ़रत करते हैं और चाहते हैं कि विश्व में शांति की स्थापना हो । वे इसके लिए हर संभव प्रयास करते हैं कि इन्सान आपस में मिल-जुलकर रहें और हर प्रकार के दंगे से दूर रहे ।

क़ुरआन में अल्लाह ने फ़रमाया–

''और अल्लाह बिगाड़ को पसन्द नहीं करता ।''

सत्य यह है कि इस्लाम ने जितनी बंधुत्वता की बात कही है उतना शायद ही किसी और धर्म में कही गयी होगी । हालांकि हर इन्सान चाहता है कि सभी आपस में जुड़कर रहें सिवाय उन इन्सानों के जो स्वयं ही बिगाड़ पैदा करना चाहे सिर्फ़ अपने स्वयं के लाभ के लिए ।

PUBLISHING POLYTECHNIC BOOKS SINCE 1966

52 Years of service in POLYTECHNIC BOOKS SINCE 1966

Tel.No.: 040-6636 0677
2475 4430

RADIANT PUBLISHING HOUSE

PUBLISHING POLYTECHNIC BOOKS

4-5-64 | Book Basement | Women's College Road | Beside Andhra Bank
Kothi | HYDERABAD-95 | Tel.No.: **040 - 6636 0677, 2475 4430**
email: rph_pph@yahoo.co.in , rphhyd1@gmail.com

Tel.No.: 040 - 6673 0577
6673 0677

RADIANT BOOK HOUSE

BOOKSELLERS - LIBRARY SUPPLIERS

POLYTECHNIC - ENGINEERING - MEDICAL - PHARMACY - NURSING - ARTS
SCIENCE - COMMERCE - AGRICULTURE & VETERINARY SCIENCES
COMPUTER ENGINEERING - ARCHITECTURE & COMPETITIVE BOOKS etc.,

HYDERABAD

4-5-62 | Women's College Road
Beside Andhra Bank | Kothi | HYD-95
Tel.No.: **040 - 6673 0577, 6673 0677**
email: rph_pph@yahoo.co.in

VIJAYAWADA

27-37-158 | Sri Krishna Nilayam
Vijaya Bank Upstairs | Opp: Sonovision
Eluru Road | VIJAYAWADA-02
Tel.No.: **0866 - 6888369**

Tel.No.: 040-6675 0673
Cell : 80196 64452

FLORENCE PUBLISHERS

PUBLISHERS & DISTRIBUTORS

B.Sc. NURSING - GENERAL NURSING & MIDWIFERY - ANM
INTERMEDIATE VOCATIONAL COURSE

#4-5-64 | Book Basement | Beside Andhra Bank
Kothi | Hyderabad-500 095 | Tel.No.: **040-6675 0673**
Cell : **80196 64452** | **email:** florencepublishers@yahoo.com

BENGAL FOOTWEAR CO.

Stockist : Moti, Apollo, Ashoka, Uttam, SSC etc.



ख़ुदी को कर बुलन्द इतना कि हर तक़दीर से पहले
ख़ुदा बन्दे से ख़ुद पूछे कि बता तेरी रज़ा क्या है ।

Bengal Footwear Co.

39, Rabindra Sarami,
Kolkata-700073

جامعۃ البنات حیدرآباد

JAMIATUL BANATH HYDERABAD, Sayeedabad

Affliation to Maulana Azad National Urdu University

میں

داخلے جاری ہیں

- شعبہ حفظ
- عالمیت وفضیلت
- وشعبہ تربیت

اضلاع کے طالبات کے لئے جامعہ میں معیاری ہاسٹل کی سہولت ہے

- لڑکیوں کا اعلیٰ ومعیاری دینی 28 سالہ قدیم جامعہ۔
- دینی تعلیم کے علاوہ انگریزی وکمپیوٹر بھی سکھایا جاتا ہے۔
- جس کے لئے خاص کمپیوٹر لیاب پوری ضرورتوں سے آراستہ ہے۔
- شہر کی طالبات کیلئے بسوں کی سہولت ہے۔

بہترین تعلیم وتربیت کے لئے اس جامعہ میں داخلہ دلوائیں

نوٹ:(۱) مولانا آزاد نیشنل اردو یونیورسٹی حیدرآباد نے جامعۃ البنات حیدرآباد سے عالمیت کی سند کو بی۔اے اور فضیلت کی سند کو ایم۔اے میں داخلہ کیلئے اہل قرار دیا ہے۔

پتہ: جیون یار جنگ کالونی، روبرو مدینہ میڈیکل ہال، VIP اسکول کی گلی، سعید آباد، حیدرآباد۔059

رابطہ : 040-24553534 9848431304



AAF



Res. (0832) 2732406
Mob.: 9422058677
9422439911
9225904060
9225903421

K. ABOOBAKER

Fish Merchants & Commission Agent

Wholesale Fish Market, Margao, Goa-403601



Hospital is recognized for Post Graduate Courses in DNB Obstetric/Gynec & Paediatrics, Fellowship in Neonatology by IAP, B.Sc Nursing College, MRCOG, MRC PCH, M.D Texila American University.

Osmanpura, Hyderabad-24 Ph:No.040-65599786, 9700138277, 9700602270
Hospital with Values, Vision & Mission.
Website: www.muslimmaternityhospital.in | E-mail:muslimmaternityhospital@gmail.com

DEPARTMENT OF GYNECOLOGY & OBSTETRICS

SERVICES ●Gynecology ●Obstetric ●Infertility Clinics

INSTITUTE OF CHILD HEALTH

SERVICES: ⌘*NICU* ⌘*PICU* ⌘*Kangaroo Mother Care (KMC) for low birth & Premature Babies Super* ⌘*Speciality Pediatric Services (Pediatric Surgery, Pediatric Cardiology & Pediatric Endocrinology)* ⌘*Immunization and Circumcision Facilities* ⌘*Our 40 bedded NICU is well Equipped with infant warmers* ⌘*Phototherapy Units, Portable X Ray and Ultrasound Machines* ⌘*HFO Ventilators and CPAP Machines, Laminar Flow work stations* ⌘*Hepafilters in NICU.*

MUSLIM DIAGNOSTIC & RESEARCH LABORATORY

SERVICES: ❒ Biochemistry ❒Clinical Pathology ❒Immunology, Serology ❒Cytopathology ❒Histopathology ❒Hormonal Studies by Advia Centuer CLIA, etc.

Emergency Services: ◆*Antenatal Scan* ◆*Whole Abdomen Scan* ◆*Female Pelvic Scan* ◆*High Resolution Scan* ◆*Colour Doppler Study* ◆*Ultra Sound Guided Procedures* ◆*Digital X-Ray Facility* ◆*TIFFA* ◆*Growth Scan*

CIRCUMCISION FACILITY

Dr. G.M. Irfan (Mon – Fri) Dr. Imtiyaz Ahmed (Wed & Sat) Timings: 2 PM to 5 PM

POLY CLINIC SERVICES

●General Medicine ●General Surgery ●Orthopedics ●Dental Service ●Dermatology & Cosmetology ●Endocrinology , Pediatric Surgery ●Laproscopy ●Physiotherapy ●Diet & Nutrition

Dr. M.Elias Ali Khan – M.D. (Chief Executive Officer)

Under the Management of Islamic Social Society (ISSS) Regd.No.565/70), Hyderabad

A CHARITABLE INSTITUTION

President	Vice President	Secretrary	Joint Secretary
Hamed Md. Khan	Md. Naseeruddin	Md. Rashad Uddin	Md. Zia Ur Rahman Siddique

Speak English बेझिझक!

Learn Correct English

OXFAME



Yaqub Ashrafi
Director

Spoken & Written English

Phonetics

Group Discussion Personal Interview

Personality Development

Fundamental English

Advance English

Correct Pronunciation



Achieving I-next Achievers Award-2015

H.O. : Deep Ganga Complex,
Near Arvind Hospital,
Ashok Rajpath, Patna-4,
Call : 7858921174
Visit us : www.oxfame.org

B.O. :
Rampur Nahar Road,
Sai Chowk, Patna-6,
Call : 9308736235

B.O. : Flat No. 201,
Anand Vihar Colony,
Landmark : Next to Rahmani 30,
Anisabad, Patna-800 002
Mob. : 8540975765

NIDAN HEALTH CARE & RESEARCH CENTER
(NIDAN NURSING HOME)

Near Lohsigna Maidan, Kallu Chowk, Hazaribagh,
Jharkhand, Pin-825301



ADVANCED PEDIATRIC CENTRE

SPECIAL FACILITIES FOR CRITICALLY ILLNEW BORN

Facilities :

- Ventilator SLE 2000.
- C-PAP.
- Hi-Flow Oxygen.
- Radiant Warmers.
- LED Phototherapy
- Infusion Pumps.
- Central Oxygen Supply.
- Multipara Monitor.

GERIATRIC/ADULT CARE UNIT, ICU/EMERGENCY

Specialize Services are Diabetes and Complication. Heart/Cardiac Problems, Respiratory Problems like Asthma And COPD, Malaria Specially Cerebral Malaria, Sleep Disorders-OSA, Insomnia & Others.

Contact for Inquiry :

Mobile (Office) : 08409727837, Manager : 09934585303
Website : www.nidanhealthcare.org, Email : info@nidanhealthcare.org

Kohinoor
DRESSES

Wholesale Dealer of
Readymade Garments & Hosiery Goods



Address :

Subhash Marg, Jhanda Chowk,
Hazaribagh-825 301
(JHARKHAND)

SUNRISE PUBLIC SCHOOL

M.O. Academy Campus, Zakirnagar, P.O. Azadnarar
Jamshedpur, Contact No. - +91-8507886446



ABOUT US

The kindergarten comprise Nursery, LKG and UKG and age for admission is 3 years and above. The school follows 5days week schedule. We believe that Kindergarten is the stage where the foundation for a child's future is laid and hence needed the utmost care to make this foundation strong and sturdy. A system of continuous informal evaluation is followed which evaluates students based on class work, theme based worksheets and observation session.

Our Vision

Our ambition is to achieve sustainable progress in all area in which we operate and to provide innovative solution by working together with our customers, with whom we have built long lasting relationship, built on mutual trust and respect. We wish for customers to choose us and our employees to join us inspired by our drive for innovation, efficiency and social responsibility, Characteristics influence and guide our daily actions and mode of doing business. We are continuously driven by our goal of making each employee proud to be part of **PRAXIS AUTOMATION SERVICES.**



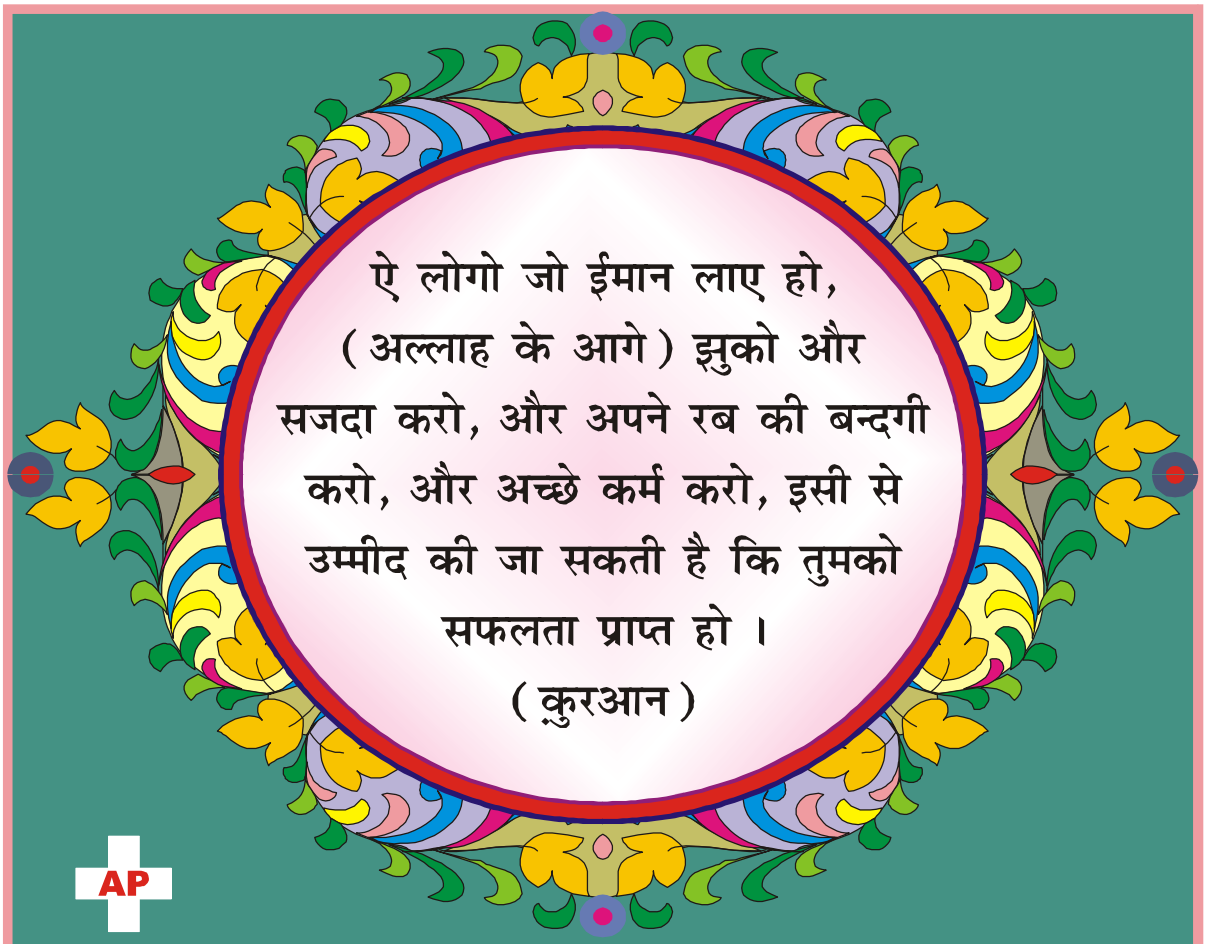

AP

MUHAMMED JAMAL

AZAD PHARMA

B-Sainik Market, Main Road, Ranchi-834001

Phone : 0651-2330144, 2330604 (S)

Mob. : 9334706965, 9835192234



شمال مشرقی ہند میں علم وادب اور انفارمیشن ٹکنالوجی کا ایک ممتاز تعلیمی وفلاحی رجسٹرڈ ٹرسٹ

مرکزِ ادب و سائنس

تعلیمی و فلاحی رجسٹرڈ ٹرسٹ، رانچی







چند حقائق:

چار شعبے: (الف) تقابلی مذاہب، (ب) ادبیات
(ج) کیریر گائڈنس اور ٹریننگ، (د) تحقیقی اشاعت

- اندرا گاندھی نیشنل اوپن یونیورسٹی کے کورسیز: CIT,BCA,MCA,MBA وغیرہ۔
- قومی کونسل برائے فروغ اردو زبان وزارت تعلیم حکومت ہند کے کورسیز: CABA-MDTP نیز NIELIT چنڈی گڑھ، وزارت انفارمیشن ٹکنالوجی، حکومت ہند۔
- مولانا آزاد نیشنل اردو یونیورسٹی (مانو کوڈ 158) کانٹاٹولی چوک، ایم۔اے (اردو انگریزی، تاریخ)، بیچ انگلش، صحافت وابلاغ عامہ، ٹورزم مینجمنٹ، بی۔اے وغیرہ۔
- NCPUL یک سالہ الیکٹرونکس ریپیر اینڈ مینٹیننس کورس (DREAM)

قائم شدہ چند اہم ادارے:

- ★ (اگنو) اندرا گاندھی نیشنل اوپن یونیورسٹی، کوڈ (0531-D) کانٹاٹولی چوک۔
- ★ (مانو) مولانا آزاد نیشنل اردو یونیورسٹی، کوڈ (158) کانٹاٹولی چوک۔
- ★ سجاد کمپیوٹر ٹریننگ اینڈ گائڈنس سنٹر (SCTGC) بریاتو۔
- ★ سجاد انسٹی ٹیوٹ آف انفارمیشن ٹکنالوجی (SIIT) کانٹاٹولی۔
- ★ نائلٹ 'او' اور 'اے' لیول اکریڈیٹیڈ انسٹی ٹیوٹ
اکریڈیشن نمبر: 'O-2037' اور 'A-2136'





پروفیسر احمد سجاد کی تازہ ترین تصانیف:

☆ بندۂ مومن کا ہاتھ ☆ جھارکھنڈ میں اردو نثر وشاعری کی سمت ورفتار 1960ء کے بعد ☆ جنوبی ہند کا ایک علمی وادبی سفر ☆ کیا برصغیر کی اردو آبادی عذاب مسلسل کا شکار ہے؟ ☆ اکیسویں صدی کا چیلنج اور ملی تعلیمی ایجنڈا ☆ اردو زبان وادب کے فروغ وارتقا میں اسلامی تہذیب کا کردار

رابطہ: ★ سنڈیکیٹ لین، عقب جے۔جے سیلس، کانٹاٹولی چوک، رانچی۔834001 (جھارکھنڈ)
فون: 0651-2532060,2530522 (موبائل) 09431587148
★ 2K/3، بریاتو ہاؤسنگ کالونی، رانچی۔834009 (جھارکھنڈ)
فون: 0651-2543838,2540534 (موبائل) 09835136361
ای میل: markazadab@yahoo.com، ویب سائٹ: http://www.markazadab.org

AL-HUDA PUBLIC HIGH SCHOOL & AL-HUDA INTER COLLEGE

At.-Banha, P.O.-Nawada, Distt. Hazaribagh, Pin : 825301
JHARKHAND, INDIA

Under Managed BY :

Al-Manar Educational Foundation, Ranchi

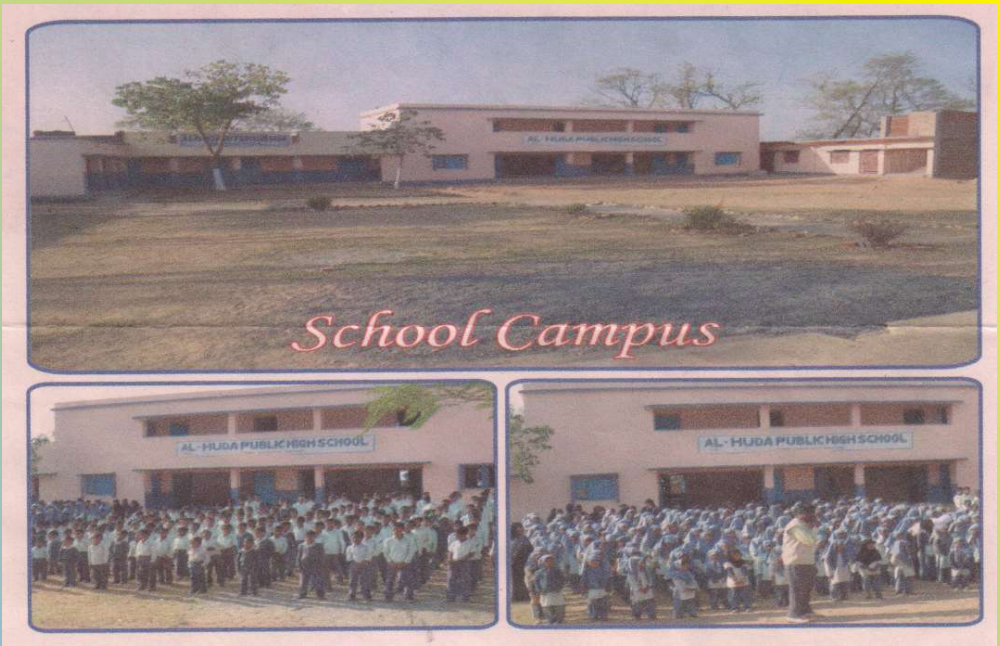

Urgent Required :

1. Computer Lab 2. Science Lab 3. Library

آپ سے مخلصانہ درخواست ہے کہ اسکول کے اس اہم پروجیکٹ میں فراخ دلی سے تعاون فرمائیں۔ اور اجر عظیم کے مستحق ہوں۔ والسلام

Your contribution may be forwarded to "Al-Huda Public High School", Union Bank of India, Pelawal Branch (Hazaribagh), A/c No. : 410502010692403, IFSC Code : UBIN0541052, PILAVAL

President	*Secretary*	*Principal*
Md. Aslam	*Md. Maqbool*	*Izharul Huque*
Mob. : 9931579552	*Mob. : 7209719135*	*Mob. : 7654520582*

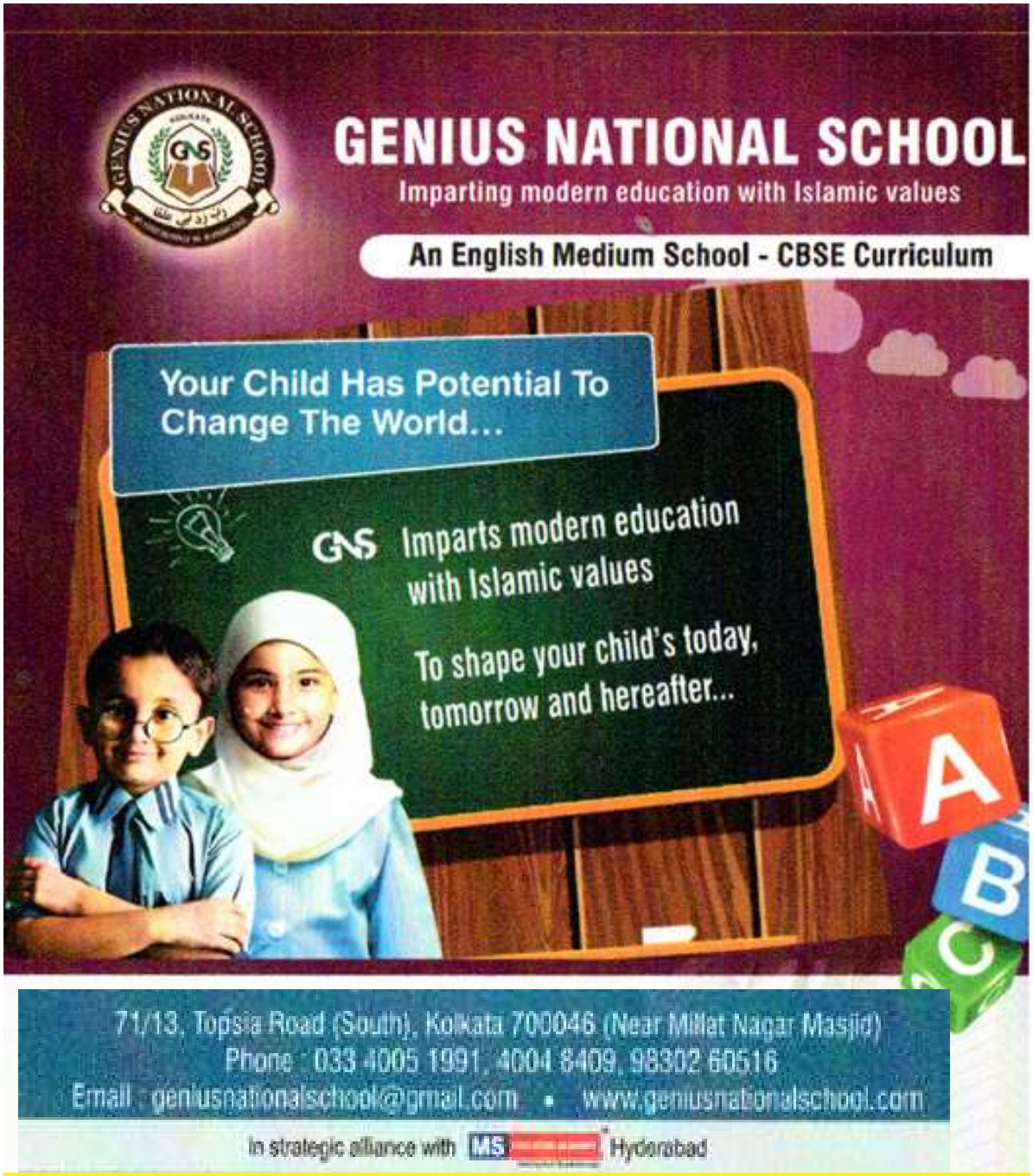

www.geniusnationalschool.com



और जब बीमार हो जाता हूं,
तो वही(अल्लाह)
मुझे अच्छा करता है।
(कुरआन)



अल-शिफ़ा नर्सिंग होम

मारीपुर, भगवानपुर, मुज़फ़्फ़रपुर 842001

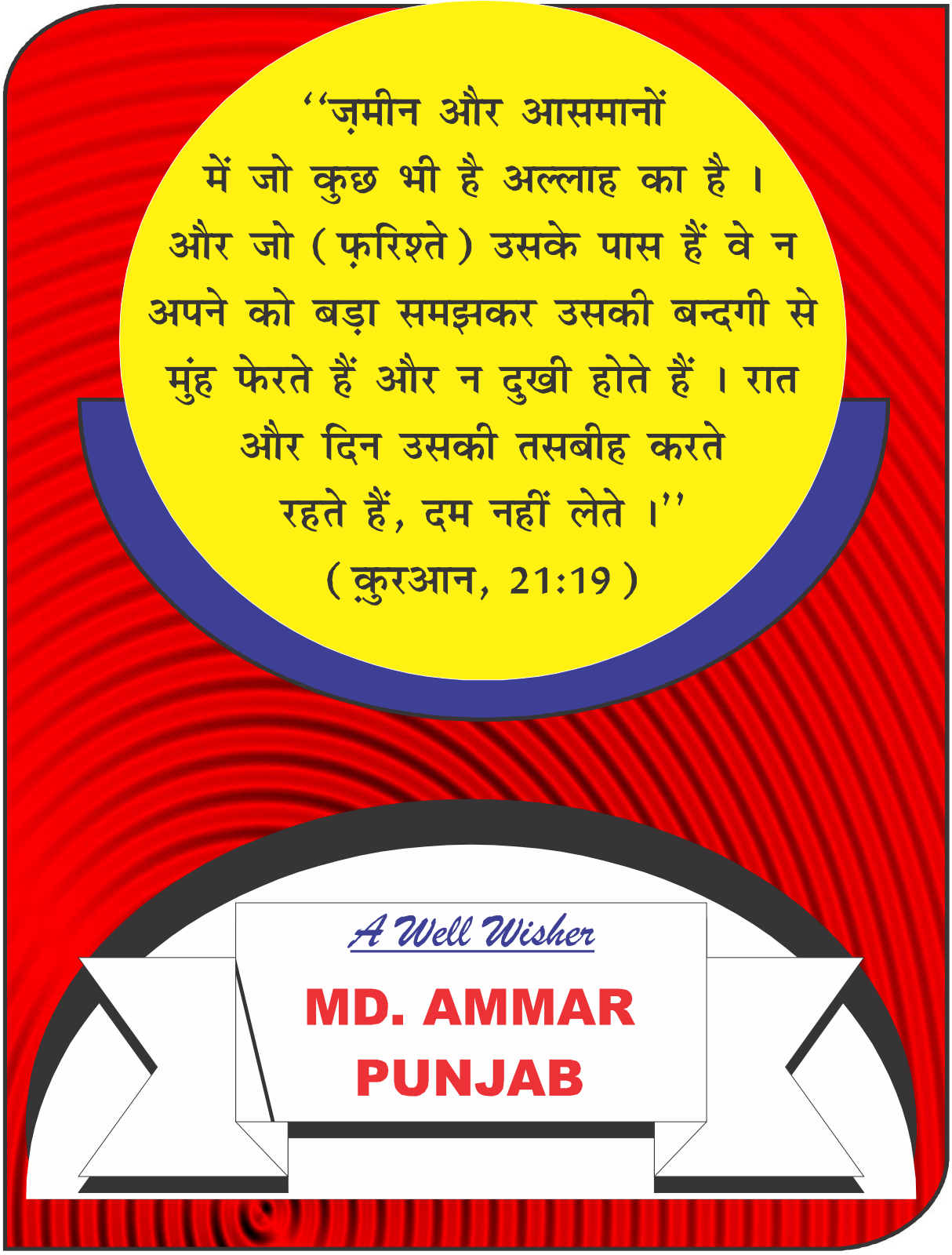
''ज़मीन और आसमानों
में जो कुछ भी है अल्लाह का है ।
और जो (फ़रिश्ते) उसके पास हैं वे न
अपने को बड़ा समझकर उसकी बन्दगी से
मुंह फेरते हैं और न दुखी होते हैं । रात
और दिन उसकी तसबीह करते
रहते हैं, दम नहीं लेते ।''
(क़ुरआन, 21:19)
A Well Wisher
MD. AMMAR
PUNJAB

With Best Wishes From :



QUALITY FOODS

Seafood Processors & Exporters
AN ISO 9001 : 2008 COMPANY

FACTORY

PLOT NOS. 5B 39 & 5B 50A, CUNCOLIM INDUSTRIAL ESTATE,
CUNCOLIM, SALCETE, GOA-403 703
TEL. : 91 832 2865610/11/12, FAX : 832 2865609
E-mail : qualityfoods@sancharnet.in/qualityfoods@rediffmail.com

धार्मिक सहिष्णुता और इस्लाम

❖ **सफ़ात आलम मदनी**

इस्लाम ही सच्चा धर्म है, सारी दुनिया की मुक्ति केवल इस्लाम में है । इस्लाम के अतिरिक्त जितने भी ध र्म हैं नरक के रास्ते पर ले जाने वाले हैं, जन्नत (स्वर्ग) का दरवाज़ा केवल इस्लाम है, यह है इस्लाम का ऐसा ठोस विश्वास जिसमें वह किसी तरह से समझौता के लिए राज़ी नहीं, परन्तु इसका अर्थ क्या यह है कि इस्लाम अपना नियम ज़बरदस्ती लोगों पर थोपता है ? बिल्कुल नहीं, यह बहुत बड़ा संदेह है, जो इस्लामी नियम से अज्ञानता के कारण लोगों के मन-मस्तिष्क में पाया जाता है, याद रखें इस्लाम एक ऐसा धर्म है जो प्रत्येक मानवता को मात्र एक अल्लाह से सीधा जोड़ता और उन सबको एक माता-पिता की संतान और भाई-भाई होने की कल्पना देता है और यह कहता है कि अगर किसी इस्लामी देश में विभिन्न धर्मों के मानने वाले रहते हों तो इस्लाम अन्य धर्मों के अनुयायियों के साथ हर तरह से नरम रवैया अपनाया जाए, सहिष्णुता में विश्वास रखा जाए, मतलब यह कि दूसरों के धार्मिक विश्वासों, भावनाओं और संस्कृति का सम्मान किया जाए, इस संबंध में कोई ऐसा काम न किया जाए कि उनकी भावनाओं को ठेस पहुंचे ।



इस्लाम में ज़बरदस्ती नहीं

इस्लाम अपना सिद्धांत स्पष्ट तरीक़े से प्रस्तुत करता है । अल्लाह तआला ने कहा–

आप कह दीजिए कि सत्य तेरे रब की ओर से है, अब जिसका जी जाहे मान ले और जिसका जी चाहे इन्कार कर दे । (सूरा कहफ़ : 29)

हर आदमी को यह अधिकार प्राप्त है कि वह अपनी इच्छानुसार जिस विचारधारा को चाहे अपनाए, आपका काम सत्य बयान कर देना है, मानना न मानना उसका काम है, लेकिन अगर कोई सत्य को नहीं मानता है तो दुनिया में इस आधार पर ऐसे आदमी के साथ बुरा मामला नहीं किया जा सकता । उसे मूल मानव अधिकारों से वंचित नहीं किया जा सकता ।

इस्लाम अपना नियम दूसरों पर ज़बरदस्ती थोपने से मना करता है, अल्लाह तआला कहता है–

धर्म के मामले में कोई ज़बरदस्ती नहीं है ।

(सूरा अल-बक़र : 256)

एक अन्य स्थान पर अल्लाह ने कहा–''यदि तुम्हारा रब चाहता तो धरती में जितने लोग हैं वे सब-के-सब ईमान ले आते, फिर क्या तुम लोगों को विवश करोगे कि वे मोमिन हो जाएं ?''

(सूरा यूनुस : 99)

अच्छा व्यवहार और परस्पर संबंध

सिर्फ़ इतना ही नहीं कि इस्लाम ने ग़ैर-मुसलमानों की भावनाओं की रिआयत की और उन्हें इस्लामी राज्य में पूरा अधिकार दिया, बल्कि मुहम्मद (सल्ल॰) ने इससे आगे बढ़कर मक्का विजय के अवसर पर अपने जानी दुश्मनों के साथ जो क्षमा का मामला क्या दुनिया का पूरा मानव इतिहास वैसी मिसाल पेश करने से आजिज है । क़ुरआन की शिक्षा तो यह है कि–''तुम बुराई को अच्छाई से दूर करो जो अच्छी हो, तुम देखोगे कि तुम्हारा दुश्मन जिगरी दोस्त बन जाएगा ।'' (सूरा फ़ुस्सिलत : 34)

सामान्य मामलों में इस्लाम मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम के बीच अंतर नहीं करता, क़ुरआन में अल्लाह ने कहा–

''अल्लाह तुम्हें इससे नहीं रोकता कि तुम उन लोगों के साथ अच्छा व्यवहार करो और उनके साथ न्याय करो, जिन्होंने तुमसे धर्म के मामले में युद्ध नहीं किया और न तुम्हें

तुम्हारे अपने घरों से निकाला । निस्संदेह अल्लाह न्याय करने वालों को पसन्द करता है ।'' (सूरा अल-मुमतहिना : 8)

प्यारे नबी (सल्ल॰) और आपके साथियों ने व्यावहारिक रूप में उसे बरत कर दिखाया, जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) हिजरत करके मदीना आ गये तो एक साल मक्का के काफ़िर अकाल से पीड़ित हो गये, आप (सल्ल॰) ने क़ुरैश के सरदार अबू सुफ़यान बिन हर्ब और सफ़वान बिन उमैया के पास पांच सौ दिरहम भेजे ताकि वे मक्का के ज़रूरतमंदों और दरिद्रों में वितरित कर दें । हालांकि उस समय ये दोनों मुसलमानों के विरोध में आगे-आगे थे । स्वयं मुहम्मद (सल्ल॰) ने ग़ैर-मुस्लिमों की दावत स्वीकार की है, ग़ैर-मुस्लिमों को खाने पर बुलाया है, उन्हें अपना अतिथि बनाया है, ग़ैर-मुस्लिमों की अयादत की है, बद्र युद्ध के ग़ैर-मुस्लिम क़ैदियों में जो साक्षर थे उन्हें पढ़ाने-लिखाने के लिए रखा है । उसी तरह अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने ग़ैर-मुस्लिमों के साथ व्यापार की है ।

जान, माल और इज़्ज़त की सुरक्षा

इस्लाम ने ग़ैर-मुस्लिमों की जान, माल और इज़्ज़त को वही महत्व दिया है जो मुसलमानों की जान, माल और इज़्ज़त को दी है । मदीना में जब इस्लाम का प्रथम राज्य स्थापित हुआ तो मुहम्मद (सल्ल॰) ने वहां के ग़ैर-मुस्लिमों विशेष रूप में यहूदियों से समझौता किया, उनकी जान, माल और सम्मान की सुरक्षा की गारंटी दी, उनको बराबर का नागरिक बताया, उन्हें धार्मिक और राजनीतिक अधिकार दिये और यह तय पाया कि दोनों पक्ष मिलकर दुश्मनों से मदीना की रक्षा करेंगे । इसके लगभग 52 प्रावधान थे जो मीसाक़े मदीना के नाम से प्रसिद्ध हैं ।

मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया कि उनके ख़ून हमारे ख़ून के समान और उनके माल हमारे माल के समान हैं । इस्लाम की दृष्टि में किसी एक इन्सान की हत्या करना जिसने किसी की जान न ली हो न धरती में फ़साद मचाया हो सारी मानवता की हत्या करने के समान है, चाहे उसका धर्म कुछ भी हो । (क़ुरआन, 5:32) और इस्लाम के अन्तिम संदेष्टा मुहम्मद जी ने कहा : जिसने किसी एक ग़ैर-मुस्लिम की हत्या कर दी जो इस्लामी देश में शान्ति के साथ रहता था तो वह महाप्रलय के दिन स्वर्ग की सुगंध भी न पा सकेगा । (सही बुख़ारी-3166) इससे आप अनुमान लगा सकते हैं कि इस्लाम मानवता की रक्षा पर कितान बल देता है ।

इस्लाम में जिहाद की अनुमति वास्तव में फ़साद और अत्याचार को ख़त्म करने के लिए दी गयी है जिससे समाज में शान्ति पैदा होती और बुराइयां समाप्त होती हैं ।

(क़ुरआन, 22:39)

ग़ैर-मुस्लिमों की सम्पत्ति भी मुसलमानों की सम्पत्ति के समान हैं, अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा–

''जिस किसी ने किसी मुआहिद पर अत्याचार किया, उसका हक़ नहीं दिया, या उसे उसकी शक्ति से ज़्यादा का मुकल्लफ़ किया, या उससे उसकी कोई चीज़ उसकी सहमति के बिना ले ली, तो मैं महाप्रलय के दिन उसका हरीफ़ हूंगा ।'' (सुनन अबू दाऊद-3053) उसी प्रकार यदि कोई मुसलमान किसी ग़ैर-मुस्लिम का माल चोरी कर ले तो इस स्थिति में भी उसका हाथ काट लिया जाएगा ।

(अल-मुग़नी : 12/451)

उसी प्रकार ग़ैर-मुस्लिमों की इज़्ज़त का वही महत्व है जो मुसलमान की इज़्ज़त का है, इसमें मुसलमान और ग़ैर-मुस्लिम में कोई अंतर नहीं ।

न्याय सबके लिए

न्यान के संबंध में इस्लाम मित्र तथा शत्रु, मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम में अंतर नहीं करता । इस्लाम शत्रुओं के साथ भी न्याय को अनिवार्य ठहराता है, अल्लाह ने कहा–

''ऐसा न हो कि किसी गिरोह की शत्रुता तुम्हें इस बात पर उभार दे कि तुम इन्साफ़ करना छोड़ दो । इन्साफ़ करो, यही धर्मपरायणता से अधिक निकट है ।''

(सूरा अल-माइदा : 8)

धार्मिक सहिष्णुता

इस्लाम धार्मिक सहिष्णुता का प्रतिक है, इस्लाम ने दूसरों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाने और उनके भगवानों के प्रति अपशब्द कहने से मना किया है । अल्लाह ने कहा–

''अल्लाह के अलावा जिन देवताओं को ये लोग पुकारते हैं, उन्हें गाली मत दो, कहीं ऐसा न हो कि अज्ञानता के कारण वह अल्लाह को गालियां देने लगें ।''

(सूरा अल-अनआम : 108)

एक ग़ैर-मुस्लिम इस्लामी शासन में अपने धर्म के अनुसार जो चीज़ हलाल समझता है जैसे शराब या सूअर आदि उसका वह इस्तेमाल कर सकता है, लेकिन उसे

खुलेतौर पर इस्तेमाल करने की अनुमति नहीं होगी, एक मुसलमान की पत्नी यदि ईसाई है और वह हर सप्ताह चर्च जाना चाहती है तो पति को चाहिए कि उसे चर्च में जाने की अनुमति दे, लेकिन ईसाई पत्नी अपने बच्चों पर अपना अधिकार नहीं चला सकती ।

उसी तरह अगर उनका कोई केस है तो मुसलमान क़ाज़ी उनकी किताब के अनुसार फ़ैसला करने का मुकल्लफ़ होगा, जैसा कि रिवायत में आता है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने एक यहूदी व्यभिचारी के पक्ष में पत्थरवाह का फ़ैसला तौरात से किया था, हालांकि हमारा ईमान है कि तौरात और इंजील आज अपने अस्ली रूप में शेष नहीं ।

(सही अबू दाऊद : 4446)

धार्मिक सहिष्णुता के कुछ उदाहरण

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के बाद चारों ख़लीफ़ाओं ने भी धार्मिक सहिष्णुता को बरक़रार रखा । उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि॰) के युग की घटना है, जब मुसलमानों ने बैतुल-मक़दिस पर विजय प्राप्त कर लिया तो उमर (रज़ि॰) यरुशलम पहुंचे और एलिया के निवासियों के साथ जो अनुबंध किया, इसके यह शब्द थे :

''यह अनुबंध है जो अल्लाह के दास अमीरुल मोमिनीन उमर ने एलिया के निवासियों को दी, यह अनुबंध जान-माल, गिरजाघर, सलीब, स्वस्थ और बीमार और उन सभी धार्मिक लोगों के लिए है, न उनके गिरजाघर में किसी को रहने दिया जाएगा, न वह गिराए जाएंगे, न उनके परिसर को नुक़सान पहुंचाया जाएगा, न उनके सलीबों और उनके धन में कमी की जाएगी, धर्म के बारे में उन पर कोई ज़बरदस्ती नहीं की जाएगी, न ही उनमें से किसी को नुक़सान पहुंचाया जाएगा ।''

इस्लाम की सहिष्णुता देखिए कि दमिश्क की मस्जिदे कबीर की मरम्मत के लिए वलीद बिन अब्दुल मलिक ने एक चर्च के कुछ भाग को उसमें शामिल कर लिया था, जब उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ख़लीफ़ा हुए तो उन्होंने मस्जिद के इस भाग को तोड़ कर चर्च को वापस कर दिया ।

जब अलेक्जेंड्रिया पर मुसलमानों ने विजय पायी, तो इस अवसर से एक मुस्लिम सैनिक ने ईसा अलैहिस्सलाम की एक छवि की आंख फोड़ दी । इसाईयों ने मिस्र के गवर्नर हज़रत अम्र बिन आस (रज़ि॰) के पास शिकायत की, हज़रत अम्र बिन आस (रज़ि॰) ने स्वयं उनसे पूछा कि आप लोग ही बताएं कि इस अपराध की क्या सज़ा होनी चाहिए, इसका क्या समाधान होना चाहिए, उन्होंने बदले में मांग की कि वैसे ही हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की भी तस्वीर बनाकर लटकाई जाए ताकि हम भी उसकी आंख फोड़ सकें । उमर बिन आस (रज़ि॰) ने कहा : हम मुसलमान अपने नबी की तस्वीर बनाते ही नहीं तो आख़िर यह अनुमति हम तुम्हें कैसे दे सकते हैं, हां ! इसके बदले में मेरी आंखें उपस्थित हैं आप उन्हें फोड़ सकते हो । यह न्यायपूर्ण फ़ैसला सुनकर वह लज्जित हुए, अत: उन्होंने माफ़ कर दिया और बदला नहीं लिया ।

मुसलमानों की यही सहिष्णुता थी कि कितने ग़ैर-मुस्लिम स्कॉलर ने इसे स्वीकार किया : फ्रेंच लेखक गोस्ताफ लोबोन ने कहा : ''लोगों ने अरबों के जैसे सहिष्णुता का व्यवहार करने वाला कोई समुदाय नहीं पाया और न अरबों के धर्म के जैसे किसी अन्य धर्म में वैसी सहिष्णुता देखी गयी ।''

लेकिन बुरा हो शत्रुता तथा गंदी राजनीति का कि कुछ लोग इस्लाम दुश्मनी में जो चाहते हैं अपनी ज़बान से बक देते हैं । मैं चैलेंज के साथ कहता हूं कि जो व्यक्ति भी इस्लाम का विशाल हृदय से अध्ययन करेगा उसकी सत्यता, उदारता तथा धार्मिक सहिष्णुता का समर्थन किये बिना नहीं रह सकता ।

सहिष्णुता का अर्थ अपनी पहचान खोना नहीं

सहिष्णुता का मतलब यह नहीं है कि मुसलमान अपनी पहचान खो दें ? नहीं और बिल्कुल नहीं, धार्मिक सहिष्णुता के नाम पर ग़ैर-मुस्लिमों का तरीक़ा अपनाना हराम है और उनके धार्मिक विश्वास और त्योहारों का समर्थन करना कुफ़्र है, ग़ैर- मुस्लिम को अपने धर्म पर चलने का पूरा अधिकार है, लेकिन मुसलमान अगर उनके विश्वास का समर्थन करें तो ख़ुद उनका इस्लाम ही शेष नहीं रहेगा । इस्लाम एक सार्वभौमिक धर्म है जो किसी सहारे का मोहताज नहीं, मुसलमान जहां भी हों ईमान, इबादत, मामले और नैतिकता में उनके लिए आवश्यक है कि वे इस्लामी शरीयत का अनुसरण करें । सुनन अबूदाऊद की रिवायत के अनुसार अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया : ''जो दूसरों की नक़ल करे, वह हममें से नहीं ।''

(हदीस : अबू-दाऊद : 4031)

छुआछूत के भेदभाव के बिना जनसेवा

● **संपादन प्रभाग**

भारत के एक बादशाह बाबर ने एक राजा को हराकर उसके राज्य पर क़ब्ज़ा कर लिया । राजा का बेटा अपने बाप का प्रतिशोध लेने के लिए बाबर के महल के चारों ओर चक्कर लगा रहा था कि जैसे ही अवसर मिले तो बाबर का काम तमाम कर दे ।

इतने में अचानक शोर उठा और लोग बौखलाहट में इधर-उधर भागने लगे । एक मस्त हाथी छूट गया था । इस राजा के बेटे के निकट ही एक भंगिन झाड़ू लगा रही थी, उसने अपने दुधमुंहे बच्चे को सीने से लगा रखा था । हाथी भागता हुआ भंगिन के निकट आ गया था । भंगिन को चिन्ता थी कि कहीं उसका बच्चा गोद से न गिर जाए । उसके मुख से अनायास ही निकला, "हाय मेरा बच्चा ! है कोई जो मेरे बच्चे को बचाए ?" हर व्यक्ति को अपनी जान प्यारी होती है । बच्चे को बचाने का साहस किसमें होता ?

उस राजा का बेटा कहीं निकट ही खड़ा देख रहा था । वह एक क्षण के लिए आगे बढ़ा कि भंगिन के बच्चे को बचाए, लेकिन फिर यह विचार आते ही कि भंगिन अछूत है, उसको हाथ किस प्रकार लगाएगा, उसके क़दम रुक गये । हाथी और बच्चे के बीच कुछ क़दम की दूरी रह गयी थी और बच्चा मौत के मुंह में नज़र आ रहा था ।

अचानक महल के ऊपर से एक बहादुर हाथ में भाला लिए हुए किसी फ़रिश्ते की तरह कूदा और उसका भाला हाथी के मस्तक में प्रविष्ट हो गया । हाथी पीछे हट गया और यह बहादुर भंगिन के बच्चे को लेकर महल में प्रवेश कर गया ।

यह बहादुर स्वयं शहंशाह बाबर था । राजा के बेटे ने जब यह दृश्य देखा तो इतना प्रभावित हुआ कि तुरन्त दरबार में पहुंचकर उसने अपनी तलवार बादशाह के चरणों में रख दी और बोला, "आप ही इस तलवार से मेरा काम तमाम कर दें ।" बाबर की समझ में न आया कि यह युवक कौन है और ऐसे क्यों कह रहा है । उसने कहा, "मैं तुम्हारी बात नहीं समझा । तुम कौन हो और क्या कह रहे हो ?"

राजकुमार ने अपना परिचय कराया और कहा, "मैं आपसे बदला लेने की घात में था और चाहता था कि किसी प्रकार अवसर मिल जाए और आपकी हत्या कर दूं । लेकिन मैंने आपका मानवता प्रेम और जनसेवा का जो उदाहरण इस समय अपनी आंखों से देखा है, उससे मैं यह सझने पर मजबूर हो गया हूं कि जो व्यक्ति एक भंगिन के बच्चे की जान के मुक़ाबले में अपनी जान को कुछ न समझता हो, वह कितना महान इन्सान है और उसकी जान लेना कितना बड़ा पाप है ? मैं भंगिन के निकट ही खड़ा था, परन्तु छुआछूत की भावना ने मुझे कुछ करने नहीं दिया । मेरे परिवार का अन्त हो चुका है । मेरा राज्य समाप्त हो चुका है । मेरे जीवन का अब कोई सहारा नहीं, इसलिए अब मैं चाहता हूं कि आप मेरा काम तमाम कर दें...।"

बाबर ने राजकुमार को सीने से लगा लिया और कहा कि मैंने तुमको तुम्हारा राज्य वापस कर दिया । जाओ, अपने राज्य की देखभाल करो और मेरी तरह तुम भी छुआछूत के बिना जनसेवा करो । (रवादारी हिन्दुस्तानी समाज में)



इस्लाम, मुसलमान और उदारता

❖ **मुहम्मद अहमद फ़लाही**

इस्लाम का अर्थ है आत्म-समर्पण एवं आज्ञापालन । इस्लाम एक दयालुतापूर्ण जीवन व्यवस्था भी है । वह इन्सानों को गुमराही के अंधियारों से निकालकर वास्तविक पालनहार की आज्ञापालन की सीधी और सच्ची राह पर चलने का आह्वान करता है । इसके लिए अल्लाह ने प्रत्येक काल में अपने सन्देष्टाओं को भेजा और अन्त में मुहम्मद (सल्ल॰) को अपना अन्तिम ईशग्रन्थ क़ुरआन देकर भेजा । साथ ही यह भी फ़रमा दिया कि आप (सल्ल॰) लोगों के लिए सर्वथा दयालुता हैं (देखें क़ुरआन, 21:107), आप (सल्ल॰) नैतिकता के उच्च शिखर पर हैं (देखें क़ुरआन, 68:4) और आप (सल्ल॰) लोगों पर दारोग़ा या ज़ोर-ज़बरदस्ती करने वाले बनाकर नहीं भेजे गये (देखें क़ुरआन, 50:45)। और आप (सल्ल॰) स्वयं जिस समाज में रह रहे थे उसके लोग आपकी ईमानदारी और दूसरों से हमदर्दी की गवाही देते थे । दूसरे शब्दों में कहा जाए तो हज़रत आइशा (रजि॰) के कथनानुसार आप (सल्ल॰) क़ुरआन का सजीव उदाहरण थे ।

क़ुरआन में कई स्थानों पर युद्ध और शान्ति दोनों स्थितियों के नियम बताए गये हैं, ताकि औरतों, बच्चों, बूढ़ों तथा निर्दोष नागरिकों को निशाना न बनना पड़े । शक्ति एवं सत्ता प्राप्त होने की स्थिति में बलात् धर्म परिवर्तन से भी रोका गया है । इसलिए कि इस्लाम और ईमान का संबंध दिल से है । इस संबंध में क़ुरआन में कहा गया है–

"दीन के मामले में कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं है, सही बात ग़लत विचारों से अलग छांट कर रख दी गयी है । अब जो कोई ताग़ूत (महाउद्दंड) का इन्कार करके अल्लाह पर ईमान ले आया, उसने एक ऐसा मज़बूत सहारा थाम लिया जो कभी टूटने वाला नहीं है और अल्लाह सब कुछ सुनने और जानने वाला है ।" (क़ुरआन, 2:256)

सत्य के ध्वजावाहकों को सत्य के प्रचार-प्रसार के लिए जिन कठिन रास्तों से गुज़रना पड़ता है, क़ुरआन ने उन रास्तों में सब्र और धैर्य की नसीहत की है । ऐसे अवसरों पर भावुकता में बहने के बजाय बुद्धि एवं विवेक से काम लेने तथा सद्व्यवहार से काम लेने की नसीहत की है–

"तुम बुराई को उस नेकी से दूर करो जो उत्तम हो, तुम देखोगे कि तुम्हारे साथ जिसकी दुश्मनी थी वह जिगरी दोस्त बन गया है ।" (क़ुरआन, 41:34)

क़ुरआन जहां अपने अनुपालकों को उच्च नैतिक शिक्षा देता है, वहीं उदारता की शिक्षा भी देता है । वह अपने विरोधियों के साथ सद्व्यवहार की शिक्षा देता है ताकि यह समाज अम्न एवं शान्ति से भर जाए । इस्लाम किसी भी ऐसे तरीक़े से बचने की नसीहत करता है जिसकी प्रतिक्रिया स्वरूप समाज में उपद्रव फूट पड़ने की आशंका हो । इसी लिए उसने अपने अनुयायियों को इस बात से भी रोका है कि ग़ैर-मुस्लिम जिन काल्पनिक उपास्यों को पूजते हैं उनको बुरा न कहो और उसका कारण भी बताया–

"ये लोग अल्लाह के सिवा जिनको पुकारते हैं, उन्हें गालियां न दो, कहीं ऐसा न हो कि ये बहुदेववाद से आगे बढ़कर अनभिज्ञता के कारण अल्लाह को गालियां देने लगें ।" (क़ुरआन, 6:108)

इस्लाम में मानवाधिकारों का पूरा ध्यान रखा गया है । हर हाल में न्यायसंगत व्यवहार की शिक्षा दी गयी है । एक जगह कहा गया–

"किसी क़ौम की दुश्मनी तुमको इस बात पर न उभार दे कि तुम अन्याय करने लगो । न्याय हर हाल में करो यह बात ईशपरायणता के अधिक निकट है ।" (क़ुरआन, 5:8)

क़ुरआन के टीकाकार बयान करते हैं कि सहाबा जब धार्मिक मतभेद के कारण ग़रीब बहुदेववादियों की सहायता से बचने लगे तो यह आयत अवतरित हुई–

"ऐ नबी ! लोगों को मार्गदर्शन देने की ज़िम्मेदारी तुम पर नहीं है, मार्गदर्शन तो अल्लाह ही जिसको चाहता है करता है और अल्लाह के मार्ग में जो धन तुम ख़र्च करोगे वह तुम्हारे अपने लिए भला है ।" (क़ुरआन, 2:272)

इस आयत से यह सिद्ध हुआ कि आर्थिक सहायता के पात्र केवल ग़रीब मुसलमान ही नहीं, बल्कि निर्धन बहुदेववादी भी हैं । धर्म का अन्तर इस नेकी को प्राप्त करने में रुकावट नहीं बन सकता । इस प्रकार ग़ैर-मुस्लिमों के दिलों पर अच्छा प्रभाव भी पड़ेगा ।

हज़रत आइशा (रज़ि॰) फ़रमाती हैं कि, "अल्लाह के

रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया कि जिबरील (अलैहि॰) पड़ोसियों के अधिकारों के बारे में इतनी वसीयत करते रहे कि मुझे लगने लगा कि उनको विरासत में भागीदार बना देंगे ।" (बुख़ारी) इस हदीस में मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम का कोई भेद नहीं किया गया है । पड़ोसी के अधिकारों में दोनों आ जाते हैं ।

एक हदीस में आया है कि आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "वह व्यक्ति जन्नत में प्रविष्ट नहीं हो सकता जिसका पड़ोसी उसकी शरारतों से सुरक्षित नहीं ।" (मुस्लिम) एक और उल्लेख में है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "उस सत्ता की क़सम जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है, उस समय तक बन्दा ईमान वाला नहीं हो सकता जब तक अपने भाई और पड़ोसी के लिए वही चीज़ पसन्द न करे, जो अपने लिए पसन्द करता है । और जब तक वह आदमी को केवल ख़ुदा के लिए प्यार न करे ।"

(मुसनद अहमद)

इस्लाम ने अकारण किसी की जान लेने से भी मना किया है । क़ुरआन का आदेश है–"जिसने अकारण किसी की हत्या की उसने मानो सारी मानवता की हत्या कर दी और जिसने किसी को जीवन दान दिया उसने मानो पूरी मानवता को जीवित किया ।" (क़ुरआन, 5:32)

इस्लाम के निकट मुस्लिम एवं ग़ैर-मुस्लिम दोनों का रक्त समान है । दोनों को जीवन-यापन के समान अवसर प्राप्त हैं । केवल इस आधार पर धरती में बिगाड़ फैलाने या रक्त-पात की अनुमति नहीं दी जा सकती कि एक व्यक्ति ग़ैर-मुस्लिम है, बल्कि एक इस्लामी समाज में एक ग़ैर-मुस्लिम को भी उसी प्रकार स्वतंत्रता प्राप्त होगी, जिस प्रकार एक मुस्लिम को होती है । क्योंकि यही क़ुरआन का आदेश है और इसी का आदर्श हमें आप (सल्ल॰) की जीवनी में मिलता है ।

मक्की जीवन के दौर में जब आप (सल्ल॰) और आपके साथी और परिवारजन तंगहाली का जीवन जी रहे थे, उस समय आप (सल्ल॰) की सेवा में एक यहूदी उपस्थित हुआ और निवेदन किया कि अबू जहल उसका धन चुका नहीं रहा है । आप (सल्ल॰) उसी समय यहूदी की सहायता के लिए उठ खड़े हुए और अबू जहल से उसका धन दिलवाया। अबू जहल जो आप (सल्ल॰) का जानी दुश्मन था, उस पर आपका इतना रोब छा गया कि वह आपकी बात टाल न सका और यहूदी को उसका माल वापस कर दिया ।

क़ुरआन जिन बुनियादों पर एक सुसंस्कृत समाज की स्थापना करना चाहता है, उसका पूर्ण आदर्श स्वयं हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने अपने जीवन में प्रस्तुत करके दिखा दिया । आपके बाद आपके ख़ुलफ़ा (उत्तराधिकारियों) और आम सहाबा ने भी अपने जीवन उन्हीं नीतियों पर चलकर व्यतीत किये और एक अच्छे समाज को और अधिक सुदृढ़ और विस्तृत किया । उनके अन्दर बस एक ही तड़प थी कि जिस प्रकार भी संभव हो इन्सानों को जहन्नम की आग से बचाया जाए या कम से कम सिसकती-बिलकती मानवता को अन्याय एवं अत्याचार के ख़ूनी पंजों से मुक्त कराया जाए । अत: जहां उनके क़ाफ़िले यूरोप की ओर जा रहे थे, वहीं उन्होंने भारत की ओर भी कूच किया, जिसके फलस्वरूप भारत में भी इस्लाम का प्रसार हुआ ।

क़ुरआन जहां अपने अनुपालकों को उच्च नैतिक शिक्षा देता है, वहीं उदारता की शिक्षा भी देता है । वह अपने विरोधियों के साथ सद्व्यवहार की शिक्षा देता है ताकि यह समाज अम्न एवं शान्ति से भर जाए । इस्लाम किसी भी ऐसे तरीक़े से बचने की नसीहत करता है जिसकी प्रतिक्रिया स्वरूप समाज में उपद्रव फूट पड़ने की आशंका हो । इसी लिए उसने अपने अनुयायियों को इस बात से भी रोका है कि ग़ैर-मुस्लिम जिन काल्पनिक उपास्यों को पूजते हैं उनको बुरा न कहो और उसका कारण भी बताया

शासन-प्रशासन में मानवाधिकार और दयालुता

❖ डॉ॰ फ़रहत हुसैन

शासन-प्रशासन और क़ानून-व्यवस्था बनाए रखने में सामान्यतया कठोर निर्णय लेने पड़ते हैं, मगर इस्लामी व्यवस्था में यहां भी दयाभाव को प्राथमिकता है । न्यायप्रियता और निष्पक्षता पर बल है, शासन-प्रशासन के पास उपलब्ध शक्ति को ईश्वर की अमानत और ज़िम्मेदारी समझा गया है और मानवाधिकार का हनन न हो इसका पूरा ध्यान रखा गया है । प्रशासनिक व्यवस्था कमज़ोरों, महिलाओं और अनाथ बच्चों का सहारा होती है । इस्लामी शिक्षाएं तथा इतिहास की गवाही प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं । यहां संक्षेप में कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों को प्रस्तुत किया जा रहा है–

न्यायप्रियता

इस्लाम में न्याय को बहुत महत्व दिया गया है और क़ुरआन में जगह-जगह मनुष्य को न्याय करने के आदेश मौजूद हैं । ईश्वर के गुणवाचक नामों में 'आदिल' अर्थात न्यायकर्ता भी है । स्पष्ट है ईश्वर स्वयं न्यायकर्ता है और अपने बन्दों को भी न्याय का आदेश देता है । क़ुरआन की कुछ प्रमुख व महत्वपूर्ण शिक्षाएं इस प्रकार हैं–

''जब निर्णय करो तो उनके बीच न्याय के साथ निर्णय करो । निश्चय ही ईश्वर न्याय करने वालों से प्रेम करता है ।'' (क़ुरआन, 5:42)

''और जब लोगों के बीच फ़ैसला करो, तो न्यायपूर्वक फ़ैसला करो ।'' (क़ुरआन, 4:58)

''ऐ ईमान लाने वालो ! अल्लाह के लिए गवाही देते हुए इन्साफ़ पर मज़बूती के साथ जमे रहो, चाहे वह स्वयं तुम्हारे अपने या माता-पिता और नातेदारों के विरुद्ध ही क्यों न हो । कोई धनवान हो या निर्धन, अल्लाह उन दोनों से अधिक क़रीब है । इसलिए तुम न्याय करने में अपनी इच्छाओं के पीछे मत चलो । अगर तुम हेर-फेर करोगे या कतराओगे तो याद रखो कि ईश्वर तुम्हारे कामों को अच्छी तरह जानता है ।'' (क़ुरआन, 4:135)

''ऐ लोगो जो ईमान लाए हो ! तुम अल्लाह के लिए इन्साफ़ पर मज़बूती से चलने वाले, इन्साफ़ की गवाही देने वाले बनो । देखो, कहीं ऐसा न हो कि किसी विशेष संप्रदाय की शत्रुता तुम्हें न्याय से विरुद्ध कर दे । न्याय करो क्योंकि



यही धर्मपरायणता के अनुकूल है ।'' (क़ुरआन, 5:8)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का आचरण व सद्व्यवहार और उसके बाद इस्लामी ख़लीफ़ाओं का शासनकाल गवाह है कि इस्लाम में निष्पक्ष और बेलाग फ़ैसले किये गये । मानवजाति आज उस न्याय को तरस रही है जब इस्लामी राज्य के ख़लीफ़ा (शासक) हज़रत अली (रज़ि॰), न्यायाधीश की अदालत में मुक़द्दमे के पक्ष के रूप में एक आम आदमी की तरह उपस्थित होते हैं । हज़रत उमर (रज़ि॰) स्वयं अपने बेटे के विरुद्ध फ़ैसला सुनाते हैं और सज़ा देते हैं । आज इन्साफ़ बिक रहा है, उसके दरवाज़े निर्धनों और कमज़ोरों के लिए बन्द हैं । इन्साफ़ में निष्पक्षता का अभाव है और यह बहुत मंहगा है । मुक़द्दमें वर्षों तक चलते हैं ।

अंतिम हज का ऐतिहासिक भाषण

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने अपने आख़िरी हज के अवसर पर अपने सवा लाख अनुयायियों के समक्ष जो महत्वपूर्ण भाषण दिया था वह हदीस और इतिहास की पुस्तकों में अक्षरशः सुरक्षित है । यह मानवाधिकारों का बेहतरीन दस्तावेज़ है जो इन्सानों को इन्सानियत का पाठ पढ़ाता है । प्रकाश की एक ऐसी किरण है जो घोर अंधकार में उतर आयी है । इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह समाज में पूरी तरह लागू हुआ और उस समय हुआ जब मानवाधिकार को कोई जानता भी नहीं था ।

ख़ुद यूरोप में 13वीं शताब्दी से मानवाधिकारों पर सोच-विचार प्रारंभ हुआ और संयुक्त राष्ट्र द्वारा अभी सन 1948 में मानवाधिकार का अंतर्राष्ट्रीय घोषणा-पत्र लागू किया गया । हम बिना किसी व्याख्या के उस भाषण को उद्धृत कर रहे हैं जो आज से 1450 वर्ष पहले हज के

अवसर पर ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने मक्का में दिया था ।

''लोगो ! मेरी बात ध्यान से सुनो, हो सकता है इस वर्ष के बाद इस स्थान पर मैं तुमसे कभी न मिल पाऊं । अज्ञानकाल की समस्त रीतियां मेरे पैर के नीचे हैं (अर्थात निरस्त कर दी गयी हैं), लोगो ! तुम सबका प्रभु एक है और बाप भी एक है । किसी अरब वाले को किसी ग़ैर-अरब पर बड़ाई नहीं, न किसी गोरे को काले पर, बड़ाई केवल परहेज़गारी व ईशपरायणता के आधार पर है ।

हर मुसलमान दूसरे का भाई है, लोगो ! तुम्हारी जान और माल एक-दूसरे पर हराम हैं, जिस प्रकार यह (हज का) दिन है, यह महीना है और यह नगर (मक्का) है । (अर्थात जान-माल को हानि पहुंचाना निषिद्ध है)।

अपराधी अपने अपराध के लिए स्वयं ज़िम्मेदार है, उसके पिता या पुत्र से बदला नहीं लिया जाएगा ।

तुम्हारे ग़ुलाम–तुम जो स्वयं खाओ वही उनको खिलाओ, जो स्वयं पहनो वही उनको पहनाओ ।

अब न्यायाधीश ने हज़रत अली (रज़ि॰) से कहा कि इस्लामी क़ानून के अनुसार आप अपने वाद के पक्ष में दो गवाह पेश करें । हज़रत अली (रज़ि॰) ने अपने सेवक क़म्बर को पेश किया और अपने दोनों बेटे हसन व हुसैन (रज़ि॰) को पेश किया । क़ाज़ी (न्यायाधीश) साहब ने कहा कि क़म्बर की गवाही तो स्वीकार्य है, मगर बेटों की गवाही नहीं मानी जाएगी । आपकी ओर से गवाही अपूर्ण है, इसलिए आपका दावा ख़ारिज किया जाता है । इस तरह इस्लामी राज्य के चौथे शासनाध्यक्ष हज़रत अली (रज़ि॰) मुक़द्दमा हार गये ।

अज्ञानकाल के हत्या के समस्त प्रकरण (जिसमें बदला लेने का चक्र चलता था) निरस्त किये जाते हैं । ब्याज के सभी अनुबंध समाप्त किये जाते हैं, हां अपना मूलधन प्राप्त करने के तुम अधिकारी हो । सबसे पहले मैं अपने ही परिवार के अब्बास-बिन-अब्दुल मुत्तलिब का ब्याज ख़त्म करता हूं ।

ऐ लोगो ! तुम अपनी पत्नियों पर अधिकार रखते हो और वे भी तुम पर अधिकार रखती हैं । तुम्हारी ओर से उनकी ज़िम्मेदारी है कि वे तुम्हारे बिस्तर पर किसी ग़ैर (अन्य पुरुष) को न आने दें, क्योंकि यह तुम्हें सहन नहीं है, और उन पर स्वयं भी अनिवार्य है कि वे अश्लीलता का कोई कार्य न करें । मैं औरतों के बारे में तुम्हें वसीयत करता हूं कि उनके साथ भला व्यवहार करो ।

ऐ लोगो ! मेरे बाद कोई संदेष्टा नहीं और न ही तुम्हारे बाद कोई नयी उम्मत (समुदाय) पैदा होगी, इसलिए अपने प्रभु पालनहार की उपासना करो, पांचों समय की नमाज़ें पढ़ो, रमज़ान के रोज़े रखो, अपने माल में से शुद्ध मन से ज़कात दो, अपने प्रभु के घर का दर्शन (हज) करो, अपने अमीर (इस्लामी शासक) का आज्ञापालन करो, ताकि तुम्हें स्वर्ग प्राप्त हो । यदि कोई नक्टा हब्शी अमीर हो और वह ईश्वर के ग्रंथ (क़ुरआन) के अनुसार चले तो उसकी बात सुनो और आज्ञापालन करो ।

मैं तुम्हारे बीच ऐसी चीज़ छोड़ रहा हूं कि यदि तुम उसे मज़बूती से पकड़े रहोगे तो कभी गुमराह नहीं हो सकते–वह है अल्लाह की किताब (क़ुरआन) और मेरी सुन्नत (हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का सद्व्यवहार जो हदीस के रूप में सुरक्षित है)।''

अंत में निर्देश दिया कि उपस्थित जन इन उपदेशों को उन लोगों तक पहुंचा दें, जो यहां उपस्थित नहीं हैं ।

कुछ इतिहास के झरोखे से

मानवजाति के लिए दयालुता, कृपाशीलता और न्याय व क्षमा का जो आदर्श ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने प्रस्तुत किया वह विशुद्ध एवं पूर्ण है तथा रहती दुनिया तक के लिए अनुकरणीय है । उन्हीं बुनियादों पर जो व्यवस्था आगे चली इतिहास के पन्नों से उसकी कुछ घटनाएं प्रस्तुत करना उचित होगा ।

हज़रत उमर (रज़ि॰) इस्लामी शासन के दूसरे शासनाध्यक्ष थे, जिनका कार्यकाल साढ़े दस वर्ष का है । उनके नेतृत्व

में इस्लामी शासन ईरान, सीरिया, मिस्र तक फैला हुआ था, फिर भी वे बहुत सादा जीवन व्यतीत करते थे । रात को गश्त लगाते और जनता का हाल जानने का प्रयास करते ।

जब राशन पीठ पर लादा

गश्त के दौरान एक रात मदीना से तीन मील की दूरी पर हज़रत उमर (रज़ि॰) ने देखा कि एक महिला भोजन पका रही है और बच्चे रो रहे हैं । निकट पहुंचकर ज्ञात हुआ कि बच्चे भूखे हैं, राशन नहीं है, उनको बहलाने के लिए हांडी चूल्हे पर चढ़ा रखी है कि बच्चे सो जाएं । हज़रत उमर (रज़ि॰) उसी समय वापस आये, सरकारी भंडार से राशन लिया और अपने सेवक असलम से कहा कि यह राशन का बोरा मेरी पीठ पर लादने में मदद करो । सेवक ने कहा कि आप बोझ न उठाएं, यह राशन मैं पहुंचाए देता हूं । उन्होंने तुरंत उत्तर दिया नहीं, प्रलय के दिन मेरा बोझ तुम नहीं उठाओगे । फिर राशन को अपनी पीठ पर लादकर महिला के घर तक पहुंचाया । महिला ने तुरन्त बच्चों के लिए खाना तैयार करके खिलाया । हज़रत उमर (रज़ि॰) को वह पहचानती न थी, उनको धन्यवाद देते हुए कहा–''अल्लाह तुम्हें अच्छा बदला दे, सच तो यह है कि ख़लीफ़ा होने योग्य तुम हो ।'' हज़रत उमर (रज़ि॰) ने तब भी अपनी असलियत नहीं बतायी और कहा कि–''जब तुम मदीना आओगी तो मुझे वहीं पाओगी ।''

जब प्रथम महिला ने नर्स का कर्तव्य निभाया

एक और रात की घटना है । नगर के बाहर एक टेंट लगा है । एक देहाती बद्दू बैठा है । टेंट के अन्दर से महिला के कराहने की आवाज़ आयी । हज़रत उमर (रज़ि॰) ने बद्दू से पूछा तो उसने कहा पत्नी गर्भ से है अब प्रसव पीड़ा हो रही है और यहां सहायता के लिए कोई भी महिला दूर-दूर तक नज़र नहीं आ रही है । हज़रत उमर (रज़ि॰) तुरन्त घर पहुंचे, अपनी पत्नी को साथ लिया और उन्हें टेंट में पहुंचाकर बाहर बैठकर प्रतीक्षा करने लगे । थोड़ी देर में बच्चे के रोने की आवाज़ आयी और हज़रत उमर (रज़ि॰) की पत्नी (रज़ि॰) ने उन्हें संबोधित करते हुए कहा–''अमीरुल-मोमिनीन, अपने दोस्त को बच्चे की पैदाइश की मुबारकबाद दीजिए ।'' 'अमीरुल-मोमिनीन अर्थात इस्लामी शासनाध्यक्ष' यह सुनकर वह देहाती बद्दू सकपका गया कि इस्लामी साम्राज्य का शासक मेरे साथ ज़मीन पर बैठा है और उनकी धर्म-पत्नी प्रसव करा रही हैं ।

जब पहरेदारी की

हज़रत अब्दुर्रहमान-बिन-औफ़ (रज़ि॰) का कथन है कि एक बार रात को हज़रत उमर (रज़ि॰) मेरे पास आये । मैंने कहा आपने क्यों कष्ट किया, मुझे बुलवा लिया होता । हज़रत उमर (रज़ि॰) ने कहा मुझे अभी सूचना मिली कि नगर से बाहर एक क़ाफ़िला पहुंचा है । क़ाफ़िले के लोग थके होंगे, आराम करना चाहेंगे, आओ हम और तुम चलकर पहरा दें । इस तरह दोनों ने रात भर पहरा दिया ।

यह हमदर्दी और दयाभाव और ज़िम्मेदारी के एहसास के चन्द नमूने हैं, जिनसे सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि इस्लाम ने दयाभाव का क्या आदर्श प्रस्तुत किया । अब निष्पक्ष और बेलाग इन्साफ़ का नमूना भी देखिये ।

हज़रत अली (रज़ि॰) और मुक़द्दमा

यह उस समय की सच्ची घटना है जब हज़रत अली (रज़ि॰) इस्लामी राज्य के चौथे शासनाध्यक्ष थे । उनका कवच कहीं गुम हो गया था जो उन्होंने एक यहूदी के पास देखकर पहचान लिया और यहूदी से कवच वापस करने की मांग रखी, मगर यहूदी ने देने से इन्कार कर दिया । हज़रत अली (रज़ि॰) चाहते तो जबरन अपना सामान ले सकते थे, परन्तु उन्होंने क़ानून अपने हाथ में नहीं लिया और न्यायाधीश की अदालत में यहूदी के विरुद्ध दावा प्रस्तुत कर दिया । मुक़द्दमे में वादी की हैसियत में ख़लीफ़ा (इस्लामी शासक) अदालत पहुंचे और प्रतिवादी यहूदी को भी बुलाया गया । हज़रत अली (रज़ि॰) ने न्यायाधीश के सामने अपना पक्ष रखा । फिर यहूदी का बयान लिया गया । उसने कहा कि कवच मेरे क़ब्ज़े में है और यह मेरी सम्पत्ति है ।

अब न्यायाधीश ने हज़रत अली (रज़ि॰) से कहा कि इस्लामी क़ानून के अनुसार आप अपने वाद के पक्ष में दो गवाह पेश करें । हज़रत अली (रज़ि॰) ने अपने सेवक क़म्बर को पेश किया और अपने दोनों बेटे हसन व हुसैन (रज़ि॰) को पेश किया । क़ाज़ी (न्यायाधीश) साहब ने कहा कि क़म्बर की गवाही तो स्वीकार्य है, मगर बेटों की गवाही नहीं मानी जाएगी । आपकी ओर से गवाही अपूर्ण है, इसलिए आपका दावा ख़ारिज किया जाता है । इस तरह इस्लामी राज्य के चौथे शासनाध्यक्ष हज़रत अली (रज़ि॰) मुक़द्दमा हार गये ।

यहूदी यह सब देखकर हैरान था कि शक्तिशाली शासक के सही दावे को मात्र एक गवाही के अपूर्ण रह जाने

पर निरस्त कर दिया गया, जबकि मैं प्रतिवादी दूसरे धर्म से संबंध रखता हूं। इस निष्पक्ष, बेलाग फ़ैसले पर उसके दिल की दुनिया बदल गयी। उसने कवच हज़रत अली (रज़ि॰) की ओर बढ़ाते हुए कहा, ''ऐ मुस्लिमों के अमीर (शासक)! आपका दावा बिल्कुल सच है, यह कवच वास्तव में आपका ही है। इस आदर्श न्याय प्रक्रिया और फ़ैसले के बाद अब मैं इस्लाम धर्म स्वीकार करने को बेचैन हो गया हूं।''

हज़रत अली (रज़ि॰) ने कहा, स्वागत है, ''अब यह कवच तुम्हें मैं भेंट करता हूं और मेरा यह घोड़ा भी तुम्हारे लिए उपहार है।'' (कंज़ुल उम्माल)

युद्ध और दयाभाव

सरसरी तौर पर युद्ध और दयाभाव एक-दूसरे के विपरीत और विरोधाभासी लगते हैं, मगर यह भी हक़ीक़त है कि कभी-कभी अहिंसा की स्थापना के लिए युद्ध की आवश्यकता होती है। युद्ध के बारे में इस्लाम का दृष्टिकोण यह है कि युद्ध और हत्या अस्ल में तो एक बुराई है, जिससे प्रत्येक व्यक्ति को बचना चाहिए, परन्तु जब दुनिया में उससे बड़ी बुराई अर्थात ज़ुल्म, अत्याचार उद्दंडता, उपद्रव और बिगाड़ फैल गया हो और उद्दंड लोगों ने जनमानस की सुख-शान्ति को ख़तरे में डाल दिया हो तो इस बड़ी बुराई को समाप्त करने मात्र के लिए युद्ध की अनुमति है।

इस दृष्टिकोण के अनुसार क्योंकि युद्ध का उद्देश्य विरोधी पक्ष को समाप्त करना या हानि पहुंचाना नहीं, बल्कि सिर्फ़ उसकी दुष्टता को समाप्त करना है, इसलिए इस्लाम यह उसूल व सिद्धांत पेश करता है कि जंग में केवल उतना ही बल प्रयोग हो जितना दुष्टता को समाप्त करने के लिए अपरिहार्य हो और यह बल प्रयोग मात्र उस वर्ग के विरुद्ध हो जिनसे शरारत का ख़तरा हो। शेष सभी वर्ग युद्ध के प्रभाव से बचे रहें। इसलिए इस्लाम इसके लिए नया शब्द 'जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह' अर्थात 'अल्लाह के मार्ग में अत्यधिक प्रयास करना' प्रयुक्त करता है।

स्पष्ट है कि अपरिहार्य परिस्थिति में युद्ध का औचित्य समझ में आता है तथा किसी महान उद्देश्य की पूर्ति के लिए इसकी आवश्यकता से इन्कार भी नहीं किया जा सकता। इस्लाम इस तथ्य को स्वीकारने के उपरांत युद्ध के क्षेत्र में व्याप्त भयावह अतियों को समाप्त करते हुए जो क्रान्तिकारी सुधार प्रस्तुत करता है वही अस्ल में इसके दयालुतापूर्ण प्रणाली होने का संकेत है।

युद्ध संबंधी आचारसंहिता

युद्ध संबंधी आचारसंहिता जो इस्लामी धर्मशास्त्र में विधिवत प्रस्तुत और व्यावहारिक रूप से लागू की गयी है, यहां उसके केवल कुछ बिन्दु अथवा शीर्षक उद्धृत किये जाते हैं–

1. अयुद्ध वर्ग

युद्ध में भाग न लेने वाले इस वर्ग में आते हैं। इस्लामी नियमानुसार ऐसे लोगों को न छेड़ा जाए और उनकी हत्या न की जाए। इस वर्ग में बच्चे, बूढ़े, महिलाएं, बीमार, अंधे, अपंग, यात्री, पुजारी, साधु-संत आदि आते हैं।

2. युद्धरत वर्ग से लड़ने के सिद्धांत

- अनायास आक्रमण न किया जाए (जैसे–सोते समय)।
- शत्रु को आग में जलाने का निषेध।
- बांधकर या कष्ट देकर मारने का निषेध।
- युद्धरत क्षेत्र के आस-पास लूटमार का निषेध।
- फ़सल और खेतों को बर्बाद करने का निषेध।
- शत्रु के मृत शरीर को नुक़्सान पहुंचाने का निषेध।
- क़ैदी की हत्या नहीं की जाएगी।
- राजनयिक (दूत) की हत्या नहीं की जाएगी।
- समझौते के विरुद्ध कार्य नहीं होगा और समझौते के पक्षकारों को प्रताड़ित नहीं किया जाएगा।
- सेना रास्ते में अनियंत्रित होकर नहीं चलेगी, अर्थात आम लोगों की आवाजाही का ध्यान रखा जाएगा।

3. सेना को किसी मुहिम पर भेजते समय 'अनुशासन' एवं इस्लामी युद्ध संबंधी नियमों की हिदायत की जाएगी।

4. युद्ध की कार्यवाही अमीर (शासक) की अगुवाई में उसकी अनुमति से होगी। रणभूमि में अमीर द्वारा नियुक्त सेनापति के आदेशों को मानना अनिवार्य होगा।

यहां यह स्पष्ट करना ज़रूरी है कि उपर्युक्त आचारसंहिता, ज़बानी जमा-ख़र्च नहीं था। इतिहास गवाह है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने इसे स्वयं पूर्णरूपेण लागू किया और इस पर आपके बाद आपके उत्तराधिकारियों ने अमल किया। वर्तमान सभ्य जगत में युद्ध के नाम पर मानवाधिकारों की जो धज्जियां उड़ाई जा चुकी हैं और अब भी जारी हैं उनकी पृष्ठभूमि में इस्लामी सुधार उसके दयालुतापूर्ण धर्म होने का स्पष्ट प्रमाण है।

युद्ध में उदारता की इस्लामी शिक्षाएं

❖ **वारिस हुसैन**

इन्सानी समाज कभी युद्ध से ख़ाली नहीं रहा है । चौदहवीं शताब्दी के प्रसिद्ध विद्वान और इतिहासकार इब्ने ख़लदून अपनी विश्वविख्यात पुस्तक 'मुक़द्दमा' में लिखते हैं कि, ''अल्लाह ने जब से इस संसार की रचना की है तभी से यहां जंगें और लड़ाइयां होती आ रही हैं ।'' वह अपने विचार व्यक्त करते हुए आगे कहते हैं कि, ''युद्ध मानव प्रकृति का एक हिस्सा है और कोई समुदाय और गिरोह इससे बचा हुआ नहीं है ।''

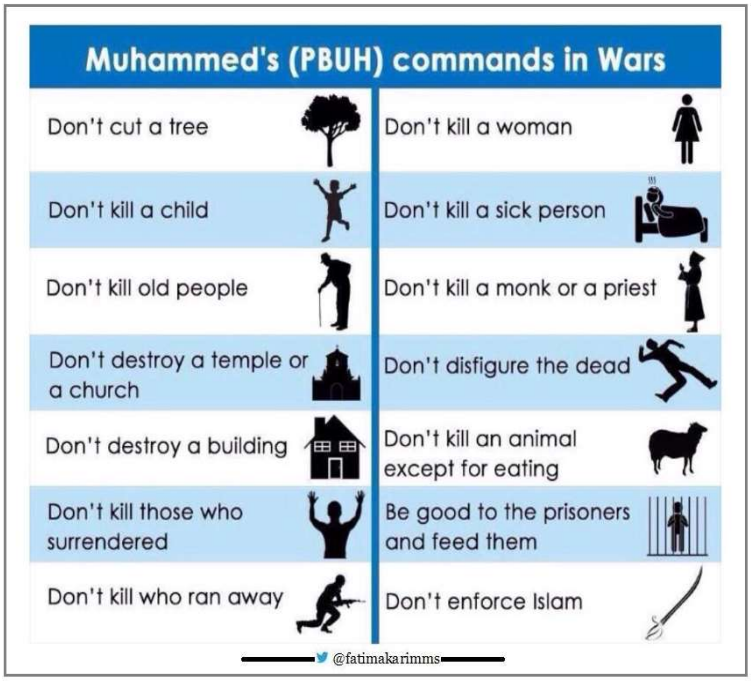

युद्ध क्यों ?

युद्ध क्यों होते हैं ? एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र पर आक्रमण क्यों करता है ? यह और इस प्रकार के बहुत सारे प्रश्न हैं जिनका उत्तर इन्सान ढूंढ़ता रहता है, पर कहीं से कोई संतोषजनक बात सामने नहीं आती । ऑक्सफ़ोर्ड डिक्शनरी के अनुसार युद्ध की परिभाषा इस प्रकार है–

1. सशस्त्र संघर्ष विभिन्न राष्ट्रों के बीच या किसी देश के विभिन्न समूहों के बीच ।

2. विभिन्न लोगों या समूहों के बीच प्रतिस्पर्धा या शत्रुता की स्थिति ।

3. अवांछनीय स्थिति या गतिविधि के ख़िलाफ़ एक निरंतर अभियान ।

उपर्युक्त परिभाषा से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि सिर्फ़ राष्ट्रों के बीच ही नहीं, एक राष्ट्र के भीतर विभिन्न समूहों के बीच संघर्ष या उनके विरुद्ध निरंतर अभियान को भी युद्ध की परिभाषा में शामिल किया जाता है । इस विस्तृत परिभाषा को सामने रखते हुए समाजशास्त्री युद्ध के आठ मुख्य कारण बताते हैं–

(1) आर्थिक लाभ (2) क्षेत्रीय लाभ (3) धर्म (4) राष्ट्रवाद (5) बदला (6) गृह युद्ध (7) क्रांतिकारी युद्ध (8) रक्षात्मक युद्ध

प्राय: देखा यह गया है कि किसी भी युद्ध के पीछे इनमें से मात्र कोई एक ही कारण नहीं होता, बल्कि एक से अधिक कारण होते हैं । कितनी बार तो वास्तविक कारण कभी सामने नहीं आते । अब तक हो चुके दोनों विश्वयुद्ध में राष्ट्रवाद, क्षेत्रीय और आर्थिक लाभ और बदले की भावना के साथ धर्म का रोल भी रहा है और यह कहना ग़लत न होगा कि इन दोनों विश्व युद्धों में करोड़ों इन्सानों के क़त्ल के साथ नैतिकता का क़त्ल भी कर दिया गया था और छल-कपट की सारी सीमाएं तोड़ दी गयीं थीं । यही कुछ अमेरिका द्वारा वियतनाम, इराक़ और अफ़ग़ानिस्तान पर किये गये आक्रमण में भी देखने को मिला ।

इस्लाम और युद्ध

इस्लाम अपने मानने वालों को अत्यंत अनिवार्य कारणों में अंतिम उपाय के रूप में ही युद्ध की अनुमति देता है और उन्हें बाध्य करता है कि वह अल्लाह द्वारा निर्धारित सीमाओं का उल्लंघन करने से हर हाल में बचें । इस्लाम में युद्ध न क्षेत्रीय व आर्थिक लाभ के लिए होता है और न धर्म अथवा राष्ट्रवाद के नाम पर बल्कि उसका उद्देश्य होता है इन्सानों को उत्पीड़ण, भ्रष्टाचार और अन्याय से बचाना और एक ऐसा शांतिप्रिय वातावरण स्थापित करना जिसमें हर व्यक्ति

स्वतंत्रता से अपनी मान्यताओं के अनुसार जीवन व्यतीत कर सके । क़ुरआन में इन आदर्शों को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया है–

''अनुमति दी गयी उन लोगों को जिनके विरुद्ध युद्ध किया जा रहा है, क्योंकि उन पर ज़ुल्म किया गया, और निश्चय ही अल्लाह उनकी सहायता की पूरी सामर्थ्य रखता है । ये वे लोग हैं जो अपने घरों से नाहक़ निकाले गये, केवल इसलिए कि वे कहते हैं कि, ''हमारा रब अल्लाह है ।'' यदि अल्लाह लोगों को एक-दूसरे के द्वारा हटाता न रहता तो मठ और गिरजा और यहूदी प्रार्थना भवन और मस्जिदें, जिनमें अल्लाह का अधिक नाम लिया जाता है, सब ढा दी जातीं । अल्लाह अवश्य उसकी सहायता करेगा, जो उसकी सहायता करेगा, निश्चय ही अल्लाह बड़ा बलवान, प्रभुत्वशाली है ।'' (क़ुरआन, 22:39-40)

''तुम्हें क्या हुआ है कि अल्लाह के मार्ग में और उन कमज़ोर पुरुषों, औरतों और बच्चों के लिए युद्ध न करो, जो प्रार्थनाएं करते हैं कि ''हमारे रब ! तू हमें इस बस्ती से निकाल, जिसके लोग अत्याचारी हैं । और हमारे लिए अपनी ओर से तू कोई समर्थक नियुक्त कर और हमारे लिए अपनी ओर से तू कोई सहायक नियुक्त कर ।'' (क़ुरआन, 4:75)

''धर्म के विषय में कोई ज़बरदस्ती नहीं । सही बात नासमझी की बात से अलग होकर स्पष्ट हो गयी है । तो अब जो कोई बढ़े हुए सरकश को ठुकरा दे और अल्लाह पर ईमान लाए, उसने ऐसा मज़बूत सहारा थाम लिया जो कभी टूटने वाला नहीं । अल्लाह सब कुछ सुनने, जानने वाला है ।'' (क़ुरआन, 2:256)

इतना ही नहीं, इस्लाम ने युद्ध के समय के लिए भी मुसलमानों को इन्सानियत और उदारता का दामन न छोड़ने का आदेश दिया और इसके लिए एक विस्तृत मार्गदर्शन भी प्रदान किया है । हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) सैनिकों को युद्ध के लिए भेजते हुए निम्नलिखित आदेश दिया करते थे ।

1. जंग सिर्फ़ उन्हीं लोगों से की जाएगी जो मुक़ाबले पर होंगे । दूसरे लोगों पर हमला नहीं किया जाएगा ।

जो लोग फ़ौजियों को खाना-पानी और दवा पहुंचा रहे हों उनको नुक़सान नहीं पहुंचाया जाएगा । इनमें डॉक्टर, नर्स आदि शामिल हैं । क़ुरआन का स्पष्ट आदेश है कि–

''और अल्लाह के मार्ग में उन लोगों से लड़ो जो तुमसे लड़ते हैं, किन्तु ज़्यादती न करो । निस्संदेह अल्लाह ज़्यादती करने वालों को पसन्द नहीं करता ।'' (क़ुरआन, 2:190)

मिस्र के सुलतान अल-कामिल ने पांचवीं क्रूसेड में रोमन फ़ौजियों को पराजित करने के बाद उनसे जिस प्रकार से उदारता का व्यवहार किया था, उसको स्वीकार करते हुए उस समय का ईसाई पादरी ओलिवर लिखता है–

''जिन लोगों के माता-पिता, बेटे और बेटियां, भाई-बहन, हमारे हाथों तड़पा-तड़पाकर मारे गये थे, जिनकी ज़मीनों पर हमने क़ब्ज़ा कर लिया था, जिन्हें हमने उनके घरों से नंगा करके निकाल दिया था, उन लोगों ने हमें अपने भोजन से पुनर्जीवित किया जब हम भूख से मर रहे थे, और हम पर नम्रता और कृपा की वर्षा करते रहे, जबकि हम पूरी तरह उनके अधीन हो चुके थे ।''

2. धोखा देने को इस्लाम पसन्द नहीं करता और जंग की हालत में भी इसके विरुद्ध नहीं जाया जा सकता ।

इस्लाम दुश्मनों से भी अच्छा व्यवहार करने की शिक्षा देता है और उनसे किये हुए समझौतों के पूर्णरूप से पालन का आदेश देता है । समझौतों को एकतरफ़ा ख़त्म करना धोखा और ग़द्दारी है और इस्लाम इसे पसंद नहीं करता । हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का कथन है–

''आख़िरत के दिन हर ग़द्दार के पास एक बैनर होगा, जिसके द्वारा वह जाना जाएगा ।'' (बुख़ारी, मुस्लिम)

इस्लाम के दूसरे ख़लीफ़ा हज़रत उमर, जिनके नाम से पूरी दुनिया परिचित है, ने अपनी फ़ौज से जो बात कही थी वह सुनहरे अक्षरों में लिखने योग्य है । उन्होंने कहा था–

''जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है, मैं उसकी क़सम खाकर कहता हूं अगर तुममें से कोई अपने दुश्मन के सामने आसमान की ओर ऊंगली उठाकर यह संकेत देता है कि उसकी जान को कोई ख़तरा नहीं है और फिर उसे मार देता है, तो इसके लिए मैं उसकी जान ले लूंगा ।'

3. किसी भी बच्चे, महिला, बूढ़े या बीमार व्यक्ति को नहीं मारा जा सकता ।

बच्चों, बूढ़े या महिलाएं यदि युद्ध में हिस्सा नहीं ले रहे हैं, तो इस्लाम उनको मारने की अनुमति नहीं देता । इसी प्रकार अंधे, अपाहिज और विक्षिप्त व्यक्ति को भी नहीं मारा जा सकता । क़ुरआन का स्पष्ट आदेश है कि, ''अल्लाह की राह में तुम उन लोगों से लड़ो जो तुमसे लड़ते हों ।''

अपनी फ़ौज को युद्ध पर भेजते हुए हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) यह आदेश दिया करते थे–

''युद्ध के लिए जब भी निकलो अल्लाह के लिए निकलो और जब भी युद्ध करो सिर्फ़ अल्लाह के लिए करो। महिलाओं, बच्चों, शिशुओं और अत्यंत बूढ़ों पर हमला मत करो, युद्ध के मैदान में जो कुछ भी माल हाथ लगे उसमें चोरी मत करो। अच्छा व्यवहार करो, क्योंकि अल्लाह अच्छा व्यवहार और पवित्र रहने वालों को प्यार करता है।

(मुस्लिम)

4. मृत शरीर की विकृति नहीं की जा सकती। इस्लाम का मानना है कि इन्सान का शरीर अल्लाह की अमानत है और इसकी इज़्ज़त की रक्षा हर हाल में होनी चाहिए। मृत्यु पश्चात भी। यही कारण है कि युद्ध में भी मुसलमानों को अपने दुश्मन के शरीर को नुक़सान पहुंचाने यह उसके अंगों को काटने से सख़्ती से रोका गया है। इसी प्रकार शरीर को आग में जलाने से भी रोका गया है चाहे वह दुश्मन का मृत्य शरीर ही क्यों न हो। इसी को आधार बनाकर मुस्लिम विद्वानों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि ऐसे हथियार का इस्तेमाल भी प्रतिबंध की इसी श्रेणी में आता है जिनसे शरीर के जलने का ख़तरा हो।

5. पेड़ों को न तो जलाया या उखाड़ा जाएगा, न फलदार पेड़ों को काटा जाएगा। पुराने समय में भी और आज भी युद्ध की प्रथा यही है कि हर वह कार्य स्वीकार्य है जिससे विजय निश्चित की जा सके। इस्लाम युद्ध को अनैतिक तरीक़े से जीतने को न पसंद करता है, न इसकी अनुमति देता है।

पेड़-पौधे समाज की आवश्यकता हैं और इनसे इन्सानों का भला होता है। यही कारण है कि उनको काटने, जलाने या बर्बाद करने को इस्लाम मना करता है। हज़रत मुहम्मद और उनके बाद भी यह प्रथा बन गयी थी की सेना को युद्ध के लिए भेजते समय दिये जाने वाले निर्देशों में पेड़ों को न काटने या जलाने का निर्देश भी होता था।

6. किसी जानवर या मवेशी का वध नहीं किया जा सकता सिवाय भोजन के लिए।

जानवर भी अल्लाह की ही सृष्टि है और उनका जीवन भी संसार में बड़ा महत्व रखता है। भोजन के रूप में उपयोग किये जाने के अतिरिक्त इस्लाम जानवरों को मारने की अनुमति नहीं देता और तब भी इस शर्त के साथ कि उसे कम से कम तकलीफ़ हो। मुसलमान अल्लाह की अनुमति से ही जानवरों को भोजन के रूप में इस्तेमाल करते हैं और वह भी सिर्फ़ उन जानवरों को जिनकी अनुमति उसने दी है। जानवरों के जीवन की रक्षा का आदेश युद्ध में भी लागू होता है। हज़रत मुहम्मद ने जानवरों को कष्ट देने और अनावश्यक रूप से उन्हें मरने को मना करते हुए कहा है कि–

''जो भी किसी जानवर को मारेगा चाहे वह एक चिड़िया ही क्यों न हो, जबकि उसको इसका अधिकार न हो, अल्लाह उससे इस संबंध में ज़रूर पूछेगा।''

(अहमद, निसाई)

7. मठों के भिक्षुओं को, अथवा पूजा स्थलों पर बैठे लोगों को नहीं मारा जाएगा।

इस्लाम दूसरों के पूजा स्थलों और हर उस स्थान को नुक़सान पहुंचाने से रोकता है जहां किसी न किसी रूप में अल्लाह की इबादत की जाती हो। इसी प्रकार दूसरों की धार्मिक पुस्तकों का अनादर करने को भी इस्लाम सख़्ती से मना करता है। क़ुरआन में आया है कि–

''यदि अल्लाह लोगों को एक-दूसरे के द्वारा हटाता न रहता तो मठ और गिरजा और यहूदी प्रार्थना भवन और मस्जिदें, जिनमें अल्लाह का अधिक नाम लिया जाता है, सब ढा दी जातीं। अल्लाह अवश्य उसकी सहायता करेगा, जो उसकी सहायता करेगा, निश्चय ही अल्लाह बड़ा बलवान, प्रभुत्वशाली है।'' (क़ुरआन, 22:40)

इस पर समस्त विद्वान एकमत हैं कि इस आयात में दूसरे धर्म के धार्मिक स्थलों की रक्षा का आदेश दिया गया है। यह और इसी प्रकार की दूसरी शिक्षाओं का असर है कि लोगों द्वारा लगातार ईश्वरीय पुस्तक क़ुरआन जलाए जाने व मस्जिदों का बार-बार किये गये अनादर के जवाब में मुसलमानों द्वारा उनकी धार्मिक पुस्तकों को जलाने या उनके धार्मिक स्थलों के अनादर की घटनाएं देखने में नहीं आतीं।

8. गांवों और शहरों को नष्ट नहीं किया जाएगा, न खेतों और बाग़ों को ख़राब किया जाएगा।

बदले की भावना से प्रेरित फ़ौजें जब भी किसी शहर में प्रवेश करती हैं तो चारों ओर लूटमार का बाज़ार गर्म कर देती हैं। खेतों और बाग़ों को उजाड़ कर उसमें आग लगा देती हैं और हर तरफ़ तबाही फैलाती हैं। बग़दाद पर अमेरिका का हमला हो या अफ़ग़ानिस्तान पर रूस का। जिस प्रकार से शहरों पर बमबारी की गयी थी वह किसी से छिपा नहीं है। परन्तु इस्लाम इस प्रकार के किसी भी अनैतिक कार्य से अपने मानने वालों को रोकता है और हर

प्रकार के संसाधनों को नष्ट करने से मना करता है ।

9. लोग तुम्हारे साथ अच्छा व्यवहार करें तो उनके साथ तुम भी अच्छा व्यवहार करना । और यदि वह बुरा व्यवहार करें तो उन्हें माफ़ कर देना ।

इस्लाम में युद्ध का उद्देश्य देशों और वहां के संसाधनों पर क़ब्ज़ा करना नहीं है । युद्ध की अनुमति इस्लाम अपरिहार्य स्थिति में अपने और दूसरों के अधिकारों की रक्षा के लिए ही देता । वह लोगों के सरों को नहीं, दिलों को जीतना चाहता है । और यह अच्छे व्यवहार से ही संभव है । क़ुरआन की शिक्षा है कि–

''भलाई और बुराई समान नहीं हैं । तुम (बुरे आचरण की बुराई को) अच्छे से अच्छे आचरण के द्वारा दूर करो । फिर क्या देखोगे कि वही व्यक्ति तुम्हारे और जिसके बीच वैर पड़ा हुआ था, जैसे वह कोई घनिष्ट मित्र है ।''

(क़ुरआन, 41:34)

इसी नीति का असर था कि मुसलमानों ने जिस भी देश में प्रवेश किया, वहां की जनसंख्या के बहुत बड़े हिस्से ने इस्लाम से प्रभावित होकर स्वयं उसे स्वीकार कर लिया । भारत में मुसलमानों की इतनी बड़ी जनसंख्या इसका सबसे बड़ा उदाहरण है ।

10. क़ैदियों को मारा नहीं जाएगा । इस्लाम की शिक्षा है कि पराजित दुश्मन के लोगों को मारा नहीं जाएगा, बल्कि उन्हें क़ैदी बनाया जाएगा । क़ुरआन का आदेश है–

''अत: जब इन्कार करने वालों से तुम्हारी मुठभेड़ हो तो (उनकी) गरदनें मारना है, यहां तक कि जब उन्हें अच्छी तरह कुचल दो तो बंधनों में जकड़ो, फिर बाद में या तो एहसान करो या फ़िदया (अर्थ-दंड) का मामला करो, यहां तक कि युद्ध अपने बोझ उतारकर रख दे । यह भली-भांति समझ लो, यदि अल्लाह चाहे तो स्वयं उनसे निपट ले । किन्तु (उसने यह आदेश इसलिए दिया) ताकि तुम्हारी एक-दूसरे के द्वारा परीक्षा ले । और जो लोग अल्लाह के मार्ग में मारे जाते हैं उनके कर्म वह कदापि अकारथ न करेगा ।''

(क़ुरआन, 47:4)

मुसलमानों ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) द्वारा दिया गया युद्ध के इन अत्यंत उदारवादी आदेशों का पालन करने का भरपूर प्रयत्न किया जिनके उदाहरणों से इतिहास के पन्ने भरे पड़े हैं । उनमें से कुछ उदाहरण यहां प्रस्तुत हैं–

1. मक्का की विजय के अवसर पर पवित्र पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) द्वारा प्रदर्शित गरिमापूर्ण रवैये के लिए इतिहास में कोई समानता नहीं है । उनके 11 वर्षों के विपक्षी और कट्टर दुश्मन, जिन्होंने उन्हें और उनके साथियों को पीड़ा और कष्ट देने में सारी हदें पार कर दी थीं, अपमानित और शर्म से सिर झुकाए उनके सामने खड़े थे, और सख़्त बदला लिए जाने का इन्तिज़ार कर रहे थे । वे सख़्त सज़ा के हक़दार थे और इसी की उन्हें उम्मीद थी, लेकिन पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) दुनिया में बदला लेने के लिए नहीं आये थे । वह तो इन्सानियत को नैतिकता की पराकाष्ठा तक पहुंचाने का उद्देश्य रखते थे । उन्होंने घोषणा की कि वह उनके साथ उसी तरह का व्यवहार करेंगे जिस तरह पूर्व में हज़रत यूसुफ़ (अलैहि॰) ने अपने क्रूर भाइयों के साथ किया था और जिसको क़ुरआन में इन शब्दों में दर्ज किया गया है–

''...इस दिन आप पर कोई आघात (कास्ट) न होने दें– अल्लाह आपको क्षमा करेगा, और वह दया दिखाने वालों में सबसे दयालु है !''

(यूसुफ़ : 92)

यह कहते हुए उन्होंने अपने दुश्मनों को माफ़ कर दिया। इतना ही नहीं आपने उन्हीं में के एक नवजवान को अपने पीछे मक्का शहर का गवर्नर भी नियुक्त किया ।

2. यरुशलम पर जब ईसाइयों ने हमला किया था तो उस शहर की ईंट से ईंट बजा दी थी और चारों ओर लाशों के ढेर लगा दिये थे । पर 1187 में जब सलाहुद्दीन अय्यूबी ने यरुशलम को आज़ाद कराया तो उन्होंने अपने सैनिकों को सख़्त आदेश दिया कि कोई भी बदले की भावना से युद्ध नहीं करेगा । उनके सैनिक इतने अनुशासित थे कि ईसाइयों के हथियार डाल देने के उपरांत न किसी को क़त्ल किया गया, न कोई लूट-मार की गयी । लोगों को बंदी बना लिया गया, लेकिन बाद में फिरौती लेकर उन्हें छोड़ भी दिया गया ।

3. सुल्तान का अपने दुश्मनों के साथ उदारता से पेश आने का दूसरा उदाहरण भी पश्चिमी दुनिया अच्छी तरह जानती है । सलाहुद्दीन ने अपने प्रतिद्वंद्वी, इंग्लैंड के रिचर्ड लायन हार्ट को उस समय चिकित्सकीय मदद दी, जब वह क्रूसेड के दौरान गंभीर रूप से बीमार हो गये थे। सुल्तान सलाहुद्दीन ने अपना निजी डॉक्टर उनके पास भेजा और रिचर्ड के इलाज का व्यक्तिगत रूप से ध्यान रखा जब तक कि वे ठीक नहीं हो गये ।

आदेश हुआ कि मस्जिद गिरा दी जाए...

❖ **ख़ान यासिर**

शीर्षक पढ़कर शायद आपके मस्तिष्क में 1992 का विचार आया हो, लेकिन जिस घटनाक्रम का यहां उल्लेख किया जा रहा है वह 20वीं सदी की नहीं, बल्कि आठवीं सदी की है । यह आदेश दिमिश्क़, जो उस समय ख़िलाफ़त (इस्लामी शासन) की राजधानी था, उसकी सबसे महत्वपूर्ण मस्जिद के संदर्भ में सुनाया गया था । और सबसे बढ़कर यह कि ये राजाज्ञा किसी शिवाजी, किसी राणा प्रताप या किसी रंजीत सिंह की नहीं, बल्कि हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ की थी जो इस्लामी इतिहास में मुहम्मद (सल्ल॰) के चार साथियों (ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन) के बाद सबसे योग्य और विश्वसनीय शासक गुज़रे हैं ।

इस संक्षेप का विस्तार यह है कि दमिश्क की जामा मस्जिद और गिरजाघर संलगित थे । जब जामा मस्जिद में नमाज़ पढ़ने वालों की संख्या अधिक बढ़ गयी तो ख़लीफ़ा अमीर मुआविया ने चाहा कि गिरजाघर को मस्जिद में शामिल कर लें और उसके बदले ईसाइयों को दूसरी ज़मीन दे दें । ईसाइयों ने इस बात को नहीं माना । अमीर मुआविया ख़ामोश हो गये । अपनी हुकूमत के ज़माने में अब्दुल मलिक बिन मरवान ने भी ईसाइयों से निवेदन किया, बड़ा मुआवज़ा पेश किया, लेकिन ईसाई इस क्षतिपूर्ति पर राज़ी न हुए । अब्दुल मलिक भी मजबूर हो गये । ख़याल रहे कि यह उस शासक का हाल था जो उस समय एशिया, अफ़्रीक़ा एवं यूरोप के एक बड़े हिस्से पर शासन कर रहा था ।

वलीद शासन में आये तो समस्या उनके सामने आयी । उन्होंने और बढ़ाकर ईसाइयों को मुआवज़े की पेशकश की । ईसाइयों के तैयार न होने पर मुआवज़े को और बढ़ा दिया । जब वे किसी तरह तैयार न हुए तो वलीद को ग़ुस्सा आ गया और उसने कहा कि यदि ख़ुशी से तैयार न हुए तो गिरजाघर जबरन ले लिया जाएगा । ईसाइयों ने कहा कि जो ऐसा करेगा वह पागल तथा कोढ़ी हो जाएगा । इस पर क्रोधित होकर वलीद ने गिरजाघर को गिराने का आदेश दे दिया कि देखते हैं कौन पागल और कोढ़ी होता है । इस तरह गिरजाघर की ज़मीन को मस्जिद में शामिल कर लिया गया ।

हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ के ज़माने में ईसाई उनके पास अपनी शिकायत लेकर पहुंचे । ख़लीफ़ा को जब उन पर हुए अत्याचार का पता चला तो उन्होंने तुरंत मस्जिद के उस हिस्से को गिरा देने का आदेश दिया जो ईसाइयों के अनुमोदन के बग़ैर मस्जिद में शामिल कर लिया गया था ।

कुछ सवाल न्याय के होते हैं और कुछ आस्था के । ख़लीफ़ा की आस्था मस्जिद में थी । इस्लाम में मस्जिद को अल्लाह का घर कहते हैं । ख़लीफ़ा ईसा मसीह को ईसाइयों की तरह ईश्वर की संतान नहीं मानते थे । गिरजाघर में जो कुछ होता था वह ख़लीफ़ा की आस्था के अनुसार सबसे बड़ा अत्याचार था, क्योंकि क़ुरआन में लिखा है कि एक ईश्वर को छोड़कर उसके भक्तों को ईश्वर समान पूजना सबसे बड़ा ज़ुल्म है ।

लेकिन सवाल जब आस्था बनाम न्याय का आया तो इतिहास ने देखा कि न्याय करते हुए इस्लाम के ख़लीफ़ा ने अल्लाह के घर को ढाने का आदेश देने में तनिक भी संकोच नहीं किया ।



''तुम्हारा पूज्य-प्रभु एक ही
पूज्य प्रभु है, उस करुणामय
और दयावान के सिवा कोई और
पूज्य-प्रभु नहीं है ।''
(क़ुरआन, 2:163)

A WELL WISHER

HYDERABAD

भारत के मुस्लिम बादशाहों की उदारता

❖ मुहम्मद अहदम फ़लाही

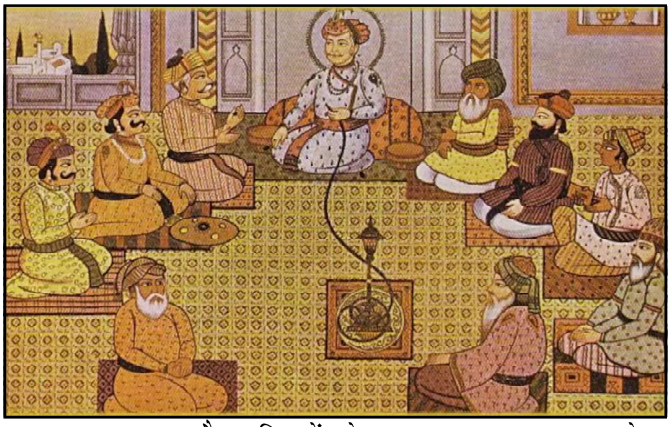

महमूद ग़ज़नवी की उदारता

महमूद ग़ज़नवी भारत के मुस्लिम विजेताओं में मुहम्मद बिन क़ासिम के बाद सबसे प्रमुख नाम है । आम तौर पर उसे एक ख़ूंख़ार मुस्लिम विजेता के नाम से याद किया जाता है । हमारे दुराग्रही इतिहासकार उसे एक अत्यंत हिंसक शासक के रूप में प्रस्तुत करते हैं और यह जताने का प्रयास करते हैं कि इस्लाम आतंकवाद का धर्म है । वह अपने सिवा किसी अन्य धर्म को सहन नहीं करता । अत: उसकी शिक्षाओं का पालन करते हुए महमूद ग़ज़नवी ने भारत में बहुत रक्तपात किया, मन्दिर तोड़े तथा लोगों को इस्लाम स्वीकार करने पर मजबूर किया । हालांकि इन बातों का वास्तविकता से कोई संबंध नहीं है, लेकिन निष्पक्ष विश्लेषक इस प्रकार की बकवास से प्रभावित नहीं होते । ऐसे बहुत से लोग हैं, जिन्होंने ऐतिहासिक तथ्यों तक पहुंचने का प्रयास किया और सच्चाई का पता लगाया ।

कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर सुनीति कुमार चटर्जी ने अपने शोध में कहा है कि महमूद के सिक्कों पर संस्कृत के शब्द पाये जाते हैं । उसके सिक्कों पर एक ओर तो कलिमा 'ला इला-ह इल्लल्लाह मुहम्मदुर रसूलुल्लाह' है और दूसरी ओर उसका अनुवाद संस्कृत में है ।

महमूद ग़ज़नवी की फ़ौज में हिन्दू सरदार और लश्करी भी थे । उन पर उसे पूरा भरोसा था । एक सफल विजेता और शासक के रूप में महमूद ने हिन्दू प्रजा का दिल मोह लेने में कोई क़सर नहीं उठा रखी थी, ग़ज़ना और पंजाब के इलाक़े में हिन्दू बहुल आबादी थी और वे बहुत शांतिपूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे थे । उनके साथ किसी प्रकार का अन्याय एवं अत्याचार न था, उन्हें अपने धर्म का पालन करने की पूरी स्वतंत्रता प्राप्त थी।

वर्तमानकाल के कुछ निष्पक्ष और उदार हृदय इतिहासकारों ने हिन्दुओं के साथ महमूद ग़ज़नवी की उदारता को स्वीकार किया है । ईश्वर टोपा ने लिखा है कि, "वर्तमान समय के एक इतिहासकार का, जो महमूद ग़ज़नवी का आलोचक भी है, ख़याल है कि वह कोई इस्लाम का धर्म प्रचारक न था । अत: ग़ैर-मुस्लिमों को मुसलमान बनाना उसका उद्देश्य नहीं रहा । महमूद गुजरात में लम्बे समय तक रहा, लाहौर में भी रहा, लेकिन उसने किसी ग़ैर-मुस्लिम को मुसलमान नहीं बनाया । उसकी धार्मिक नीति में उदारता की विशेषता थी । उसने किसी भी व्यक्ति को उसके धर्म के कारण मृत्युदंड नहीं दिया । उसने लड़ाई और घेराबन्दी के अवसर पर तो हिन्दुओं की हत्या की, परन्तु किसी और अवसर पर उसके द्वारा हिन्दुओं की हत्या का कोई उल्लेख नहीं पाया जाता । उसके शासनकाल में हिन्दुओं को पूरी धार्मिक स्वतंत्रता प्राप्त थी । उनकी न केवल प्रशासनिक विभागों में नियुक्ति की जाती थी, बल्कि वे सेना में भी नियुक्त किये जाते थे ।" (पॉलिटिक्स इन प्री मुग़ल टाइम्स, पृ॰ 45-46)

हिन्दू इतिहासकारों के ये वक्तव्य इस बात के प्रमाण हैं कि महमूद ग़ज़नवी को जिस प्रकार बदनाम किया जाता है, सच्चाई उसके बिल्कुल विपरीत है ।

शिहाबुद्दीन ग़ौरी की उदारता

ग़ज़नवी शासनकाल के बाद ग़ौरी शासनकाल ने उसकी जगह ले ली । ग़ौरी शासकों ने भी अपने शासनकाल में इस्लामी शिक्षाओं का पूरा ध्यान रखा और अन्याय एवं अत्याचार से अपना दामन बचाए रखा । अत: शिहाबुद्दीन ग़ौरी की तलवार मुल्तान, सियालकोट, भटिंडा आदि में अवश्य चमकी, परन्तु उसकी जीवनी से पता चलता है कि धोखा, छल और अन्याय एवं अत्याचार से वह कोसों दूर था । उसकी जीवनी में एक घटना उल्लेखनीय है नहरवाला यानी अनहलवाड़ा में जीत में असफल होकर वह ग़ज़नी में ठहरा

हुआ था और अपनी पराजय का प्रतिशोध लेने के लिए युद्ध की तैयारियों में व्यस्त था कि किसी ने अर्ज़ी लिख भेजी कि नहरवाला में एक प्रसिद्ध व्यापारी है जिसका नाम दसाला अबहर (ग़ैर-मुस्लिम) है, वह हमेशा लाखों का माल व्यापारिक उद्देश्य से उन क्षेत्रों में भिजवाया करता है । अत: उस समय भी उसका लाखों का माल व्यापार के उद्देश्य से ग़ज़नी में आया पड़ा है । अगर बादशाह चाहे तो इस माल को ज़ब्त करके ख़ज़ाने में भिजवाया जा सकता है । इससे न केवल ख़ज़ाना भरेगा, बल्कि शाही शानो-शौकत भी बढ़ेगी ।

बादशाह शिहाबुद्दीन ग़ौरी ने लिख दिया कि, "दसाला अबहर का यह माल अगर नहरवाला में होता और वहां उस पर क़ब्ज़ा किया जाता तो हमारे लिए हलाल होता, लेकिन ग़ज़नी में उस माल पर क़ब्ज़ा करना हमारे लिए हराम है, क्योंकि वह मेरी शरण में है ।"

अगर ग़ौरी सचमुच लुटेरा होता और ग़ैर-मुस्लिमों की जान-माल तथा मान-सम्मान से खेलना चाहता तो उसे इससे कौन रोक सकता था और वह भी उसके राज्य की सीमाओं में । लेकिन उस मुस्लिम शासक ने भी इस्लामी शिक्षाओं को प्राथमिकता दी, क्योंकि उसका पालन-पोषण उन्हीं शिक्षाओं के साथ हुआ था ।

अलाउद्दीन ख़िलजी

भारत के मुस्लिम शासकों में सुल्तान अलाउद्दीन ख़िलजी पहला व्यक्ति है जिसने पूरे भारत को एक बादशाह के अधीन देखने का स्वप्न देखा, जो सौभाग्य से उसके सामने साकार भी हो गया और काबुल या बलूचिस्तान से श्रीलंका की सीमा तक का क्षेत्र उसके अधीन हो गया । उसके शासनकाल में हिन्दुओं को हर प्रकार की धार्मिक स्वतंत्रता प्राप्त थी और किसी प्रकार की रोक-टोक न थी । वे जनता की हैसियत से अपने मन्दिरों के अधिकारी थे और इस मामले में कोई दख़लअन्दाज़ी नहीं कर सकता था ।

के॰एम॰ पनिक्कर ने अपनी किताब में लिखा है कि अलाउद्दीन ख़िलजी को एक पक्षपाती और दुराग्रही शासक समझा जाता है, लेकिन उसने हिन्दुओं के धार्मिक पेशवाओं का बड़ा मान-सम्मान किया । जैनियों की किताबों से पता चलता है कि अलाउद्दीन ख़िलजी ने आचार्य महासेन को कर्नाटक से अपने दरबार में बुलाया । उससे धार्मिक शास्त्रार्थ किये ।

अलाउद्दीन ख़िलजी ने शराब से संबंधित सज़ाएं लागू कीं । उसका पीना, बनाना और बनाने का सामान रखना क़ानूनी रूप से अपराध था । घूसख़ोरी के विरुद्ध भी सख़्त क़ानून था, व्यभिचार की सख़्त सज़ा थी, चोरी, डाके और हत्या भी अक्षम्य अपराध समझे जाते थे । यही कारण था कि सुल्तान अलाउद्दीन ख़िलजी का सत्ताकाल भी भेदभावरहित उन्नति एवं विकास का काल समझा जाता है ।

मुहम्मद बिन तुग़लक़ की उदारता

प्रसिद्ध पर्यटक इब्ने बतूता पर्यटन पर जब भारत आया तो उस समय सुल्तान मुहम्मद बिन तुग़लक़ यहां का शासक था । इब्ने बतूता ने अपने यात्रा वृत्तांत में लिखा है कि सुल्तान मुहम्मद तुग़लक़ के ख़िलाफ़ एक हिन्दू अमीर ने दावा किया कि सुल्तान ने उसके भाई को अकारण मार डाला है । क़ाज़ी (न्यायाधीश) ने सुल्तान को अपनी अदालत में तलब किया, वह बिना किसी अहं के क़ाज़ी की अदालत में गया और वहां जाकर सलाम और ताज़ीम की (यानी सम्मान में ज़रा-सा सिर को झुकाया)। उसने क़ाज़ी को पहले ही कहला भेजा था कि वह अदालत में आये तो बादशाह के तौर पर उसकी 'ताज़ीम' न की जाए । वह क़ाज़ी के सामने अभियुक्त के रूप में खड़ा हुआ । क़ाज़ी ने आदेश दिया कि सुल्तान मुद्दई (वादी) को ख़ूंबहा लेने के लिए राज़ी करे, वरना क़िसास (ख़ून का बदला ख़ून) का आदेश होगा । सुल्तान ने मुद्दई को राज़ी कर लिया इस प्रकार उसकी जान छूटी ।

सुल्तान की उदारता का एक प्रमाण यह था कि वह हिन्दू और जैन धर्मों से संबंधित भी जानकारी प्राप्त करने में लगा रहा । उन धर्मों के विद्वानों को भी अपनी सभाओं में आमंत्रित करता रहा । पन्द्रहवीं शताब्दी के एक पुर्तगाली लेखक नौनेज़ ने लिखा है कि सुल्तान मुहम्मद बिन तुग़लक़ ने गुजरात के अभियान के समय में एक शिवालय भी बनवाया था ।

प्रोफ़ेसर ईश्वरी प्रसाद ने सुल्तान मुहम्मद तुग़लक़ के काल की समीक्षा करते हुए लिखा है कि सुल्तान मुहम्मद बिन तुग़लक़ ने हिन्दुओं के ख़िलाफ़ कोई अनुचित नीति नहीं अपनायी, बल्कि उसने उसके साथ अच्छा व्यवहार किया और उनको पद प्रदान किये । उसने सती-प्रथा पर भी रोक लगायी, जो हिन्दू नारी के प्रति उसकी सकारात्मक सोच का प्रमाण है ।

अंग्रेज़ी शासनकाल में हिन्दू-मुस्लिम एकता

❖ **मुहम्मद अहमद फ़लाही**

भारत में विदेशी राज्य की स्थापना हिन्दू-मुस्लिम के बीच खाई के आधार पर हुई । अंग्रेज़ों की नीति 'फूट डालो और राज करो' की थी । यह मानसिकता 1842 में उस समय चरम पर पहुंच गयी, जब लॉर्ड एलन ब्रो ने गवर्नर जनरल का पदभार संभाला । यह गवर्नर न केवल हिन्दुओं के लिए अपने दिल में कोमल भावना रखता था, बल्कि उसने मुसलमानों के साथ अपनी नफ़रत को छिपाने का कभी प्रयास भी नहीं किया । उदाहरणार्थ सोमनाथ मंदिर के दरवाज़ों के पुनर्निर्माण के अवसर पर उसने हिन्दू राजाओं को संबोधित करते हुए कहा, "आज अंतत: आठ सौ वर्ष पुराने अपमान का बदला ले लिया गया ।" उसके अनुसार दोनों धर्मों के लोगों के बीच संतुलन बनाए रखने की अति उत्तम नीति यह थी कि मुसलमानों का दिमाग़ ठीक कर दिया जाए । इसी प्रकार लार्ड डलहौज़ी का रवैया भी भारतीय मुसलमानों के साथ विद्वेषपूर्ण रहा । 18 अगस्त 1853 को उसने अपने एक मित्र को जो निजी पत्र लिखा था उसके निम्नलिखित पैराग्राफ़ में उसने खुलकर अपनी मानसिकता का प्रदर्शन किया है–

"अवध का बादशाह पागलपन की ओर बढ़ता दिखायी पड़ता है । मैं चाहता भी यही हूं कि ऐसा ही हो । अपने प्रस्थान से पहले उसे पचा जाना मेरे लिए बड़ी शांति का कारण होगा । दिल्ली का बूढ़ा व्यक्ति अपनी मौत आप मर रहा है । अगर कोर्ट ऑफ़ डायरेक्टर्स की मूर्खता आड़े न आती तो मैं कभी का उस खूसट के साथ ही तैमूर वंश को समाप्त कर चुका होता ।"

(हिन्दुस्तान में मुसलमानों का उरूजो-ज़वाल, पृ॰ 20-21)

इस प्रकार के वक्तव्यों से अंदाज़ा होता है कि अंग्रेज़ कितने अधिक दुराग्रही थे और मुसलमानों के संबंध में कैसी घातक भावनाएं रखते थे । इसके साथ-साथ स्वयं अंग्रेज़ों के शासनकाल में कुछ अंग्रेज़ ऐसे भी थे जो अन्याय के ख़िलाफ़ मुसलमानों के साथ थे और उनका मार्गदर्शन करना अपना कर्तव्य समझते थे । चुनांचे ऐसे अंग्रेज़ों की भी मिसालें इतिहास में मौजूद हैं, जिन्होंने सर सैयद अहमद ख़ां आदि से मिलकर मुसलमानों को उनके पिछड़ेपन से निकालने में बड़ी सहायता की ।

प्रख्यात इतिहासकार अमीर अली लिखते हैं कि, "उन दिनों हिन्दुओं और मुसलमानों के मध्य कोई कटु मतभेद नहीं थे । वे प्रेम और बंधुत्व की भावना के साथ एक-दूसरे से मिलते थे । नमाज़ के समयों में मस्जिदों के आगे बाजा बजाने या बक़र ईद के अवसर पर क़ुरबानी की गायों और बछड़ों के घूमने-फिरने पर होने वाले झगड़ों का कोई नामो-निशान न था । उस समय तक दोनों क़ौमों को एक-दूसरे से अलग करने वाला 'सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व' का मुद्दा छिड़ा नहीं था और उस समय तक दोनों क़ौमों के मतदाताओं को एक संयुक्त चुनावी कार्रवाई के लिए एकत्र नहीं किया गया था । एक क़ौम के सिर में वर्चस्व का भूत नहीं समाया था और दूसरी क़ौम को पराजित हो जाने का डर नहीं सता रहा था । अपने हिन्दू साथियों में से कई मेरे बहुत अच्छे मित्र थे ।" (उपर्युक्त पृ॰ 23)

यह तो अंग्रेज़ों के दिमाग़ों का षड्यंत्र था कि हिन्दुओं और मुसलमानों को लड़ाते रहें, उसके लिए यह प्रोपेगंडा किया गया कि मुसलमानों ने अपने शासनकाल में हिन्दुओं पर बहुत अत्याचार किये । उनके मंदिरों को ढाया और उन्हें ख़ूब लूटा-खसोटा आदि । इस प्रकार की बातों के द्वारा आम हिन्दुओं में नफ़रत की भावनाओं का उभरना स्वाभाविक था । अत: हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच धार्मिक मामलों को लेकर परस्पर कटुता ने बढ़ना आरंभ किया और फिर स्थिति यहां तक पहुंची कि छोटी-छोटी बातों पर सांप्रदायिक तनाव शुरू हुआ और दंगों का सिलसिला भी जारी हो गया ।

सबसे पहला हिन्दू-मुस्लिम दंगा एक उल्लेख के अनुसार 1809 में वाराणसी में हुआ था और दूसरे उल्लेख के अनुसार दिसम्बर 1782 में सिलहट (असम) में हुआ था । 1851 तथा 1874 में मुसलमानों और पारसियों के मध्य भी दंगे हुए । 1886 में इटावा और दिल्ली में भयानक दंगे हुए । फिर तो जैसे इन दंगों का सिलसिला चल पड़ा । अंग्रेज़ों के दौर में होने वाले इन दंगों का मूल उद्देश्य ब्रिटिश शासन का स्थायित्व था । ये सभी दंगे छोटी-छोटी बातों को

लेकर एक गंभीर रूप धारण कर गये और ब्रिटिश सरकार मूकदर्शक बनी देखती रही ।

इन परिस्थितियों से निबटने, परस्पर प्रेम एवं बंधुत्व की भावना को बढ़ाने तथा हिन्दू-मुस्लिम के दिलों को जोड़ने के लिए दोनों संप्रदायों के लोगों ने बहुत प्रयास किये । उन लोगों में एक सर सैयद अहमद ख़ां भी थे, जिन पर यह आरोप लगा कि वे हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच नफ़रत फैलाने का प्रयास कर रहे हैं । उन्होंने कुछ समय तक चुप रहने के बाद इसका जवाब देते हुए लिखा–

"मैं कई बार कह चुका हूं कि भारत एक परिन्दा है, जिसकी हिन्दू और मुसलमान दो आंखें हैं । इस परिन्दे की सुन्दरता इसी पर निर्भर करती है कि इसकी दोनों आंखों में समान रूप से चमक बनी रहे ।"

मुम्बई से संबंध रखने वाले लीडरों में सबसे नुमायां हैसियत निस्सन्देह बदरुद्दीन तय्यबजी की थी । वे बोहरा संप्रदाय से संबंध रखने वाले एक धनाढ्य व्यापारी के पुत्र थे । उनके पिता का व्यापार विदेशों तक में था । इसके अतिरिक्त स्थानीय हिन्दू व्यापारियों के साथ उनके निकट संबंध थे और उभरते हुए हिन्दू बुद्धिजीवियों में वे अत्यंत लोकप्रिय थे । मज़हब का पूरी तरह अनुपालन करने के बावजूद तय्यबजी के परिजनों को अपने हिन्दू पड़ोसियों और दोस्तों के साथ घुल-मिलकर रहने में कोई आपत्ति न थी ।

उन्होंने अपनी क़ौम को यह समझाने में कोई क़सर न छोड़ी कि हिन्दू और मुसलमान इस धरती के लाल हैं । अत: दोनों को सार्वजनिक समस्याओं के लिए संयुक्त रूप से प्रयास करना चाहिए । उनके अनुसार यह बात ने केवल दोनों क़ौमों के लिए बेहतर है, बल्कि अंग्रेज़ों के हित में भी है ।

रहमतुल्लाह मुहम्मद सायानी (1847-1902) भी मुम्बई के ख़ोजा मुसलमान व्यापारी घराने से संबंध रखते थे और अपने विशिष्ट अक़ीदों के सख़्त पाबन्द थे । उनके और तय्यबजी के इन्तिक़ाल पर उन्हें श्रद्धांजलि देते हुए तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष डी॰ई॰ वाचा ने कहा था–

"ये दोनों महाशय उच्च कोटि के धार्मिक मुसलमान थे, जो वैचारिक स्वतंत्रता के अतिरिक्त उच्च सेवाभाव तथा उच्च कोटि के वास्तविक राजनीति बोध जैसे गुणों से विभूषित थे । वे सांप्रदायिक संकीर्णता से पूरी तरह मुक्त थे । अपनी विशाल हृदयता के कारण उन्होंने अपने पिछड़े सहधर्मियों में उदारता की भावना पैदा करने का अनथक प्रयास किया । उन्हें इस बात का पूरा विश्वास था कि भारत की दो महान क़ौमों के राजनैतिक भविष्य की सफलता इसी बात पर निर्भर है कि ये दोनों संयुक्त उद्देश्य की प्राप्ति के लिए परस्पर सहयोग करें ।"

ब्रिटिशकाल में हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रयासों के ये कुछ उदाहरण हैं, वरना ऐसे बहुत से व्यक्तित्व हैं जिन्होंने इस दिशा में विशेष ध्यान दिया तथा अंग्रेज़ों के घोले हुए ज़हर का तोड़ भारतवासियों के सामने पेश किया । उनके ये प्रयास विफल नहीं हुए, बल्कि उनके प्रभाव हमें स्पष्ट रूप से दिखायी पड़ते हैं ।

लिबास का मसला हो या खाने-पीने का, त्योहार हों या शादी-ब्याह की रस्में, मुसलमानों ने और हिन्दुओं ने एक-दूसरे की भावनाओं का ख़याल रखने का प्रयास किया । मुसलमानों ने हिन्दुआनी पगड़ी को अपने लिए पसन्द किया तो हिन्दुओं ने मुसलमानी पोशाक को यहां तक अपना लिया था कि अगर हिन्दू अपना विशेष चिह्न तिलक आदि हटा देते तो उन्हें पहचानना असंभव था । पगड़ी का आम प्रचलन था । सिख उल्लेखों से अन्दाज़ा होता है कि उन्होंने हिन्दू और मुस्लिम लिबासों को मिलाकर बहुत बार इस्तेमाल किया था ।

इस दौर में मुसलमान औरतों की शलवार क़मीज़ को सिख औरतों के अलावा वहां की हिन्दू औरतें भी इस्तेमाल करती हैं । बंगाल, बिहार और बम्बई आदि में साड़ी लगभग सभी संप्रदायों में इस्तेमाल होती हैं ।

शबे-बरात जो 14 शाबान को मनायी जाती है, उसके बारे में दावा किया जाता है कि यह एक इस्लामी परंपरा की याद में मनाया जाता है, परन्तु यह वास्तविकता नहीं है । संभवत: यह हिन्दुओं के त्योहार महाशिवरात्रि की नक़ल है । इस रात में मस्जिदों में विशेष रोशनी का प्रबंध और आतिशबाज़ी करना भी इसी ओर इशारा करता है । ध्यान रहे कि यदि इस सबका संबंध यदि वास्तव में इस्लाम से होता तो शबे-बरात अरब देशों में भी मनायी जाती, लेकिन वहां इसका नामो-निशान न होना भी इसी संभावना को मज़बूत करता है कि इसका सूत्रधार किसी न किसी रूप में हिन्दू परंपराएं ही हैं । इसी प्रकार भारत में प्रचलित शादी-ब्याह की ग़ैर-इस्लामी रस्मों में भी हमें इस मिश्रित संस्कृति की ही झलक नज़र आती है ।

''इस्लाम ही सत्य-धर्म है''

क्या यह कहना उदारता और सहिष्णुता के विरुद्ध नहीं?

❖ मुहम्मद ज़ैनुल आबिदीन मंसूरी

इस्लाम का केवल स्वयं को ही सत्य-धर्म कहना बहुत-सा मानसिक और भावनात्मक समस्याओं और जटिलताओं का कारक रहा है, इससे धार्मिक समुदायों में विद्वेष और दुर्भावना उत्पन्न हुई है । इस विद्वेष के कारण बहुधर्मीय समाजों में अशांति भी पैदा होती रही है । इस 'अशान्ति' के परिप्रेक्ष्य में यह प्रश्न भी उठता रहा है कि इस्लाम का अर्थ जब 'शान्ति' है तो फिर वह इस अशान्ति का कारक कैसे बन जाता है ! अत: स्वयं इस्लाम धर्म के अनुयायियों का कर्तव्य है कि इस असमंजस, भ्रांति और विरोधाभास का समाधान करें ।

धर्म के बारे में प्रचलित अवधारणा

यह सर्वविदित तथ्य है कि संसार में बहुत सारे धर्म प्रचलित रहे हैं । इससे यह निष्कर्ष निकाला गया कि सबके सब 'सत्य-धर्म' हैं । इस निष्कर्ष का तर्क यह दिया जाता है कि :

- सारे धर्म ईश्वर में विश्वास पर आधारित हैं,
- सारे धर्म सकारात्मक मानव-मूल्यों के पक्षधर हैं, और
- सारे धर्म अपने अनुयायियों को एक ही गंतव्य (मंज़िल) पर ले जाते हैं केवल रास्ते अलग-अलग हैं ।

हम इन तीनों वक्तव्यों की संक्षिप्त समीक्षा करते हुए मूल विषय की ओर आगे बढ़ते हैं :

(1) 'ईश्वर में विश्वास' पर आधारित सारे धर्म वस्तुत: हैं ही नहीं क्योंकि कुछ धर्म ईश-निर्मित है, कुछ मानव-निर्मित । ईश-निर्मित धर्मों में भी ईश्वर की परिकल्पना में विरोधाभास भी है और अन्तर्विरोध भी । कहीं ईश्वरत्व को विशुद्ध माना जाता है, कहीं ईश्वरत्व में अनेकानेक बाहरी चीज़ों को साझी-शरीक कर लिया गया है । कहीं ईश्वर सगुण है, कहीं निर्गुण । किसी धर्म में ईश्वर सृष्टि की रचना करके सदा के लिए निष्क्रिय हो गया है, किसी में ईश्वर का ईश्वरत्व सृष्टि को सुनियोजित व अनुशासित रूप से चलाने में हर पल सक्रिय रहता है । कुछ धर्मों की मूल-मान्यता है कि मनुष्य को कभी न कभी (अर्थात मरणोपरांत) अपने आजीवन क्रियाकलापों के लिए ईश्वर के समक्ष उत्तरदायी होना है और तदनुसार पारलौकिक जीवन में उसे सफलता (प्रतिदान-स्वरूप 'स्वर्ग') मिलेगी या असफलता (नरक की यातना), और कुछ धर्मों की मान्यता है कि इहलौकिक जीवन-काल में मनुष्य स्वतंत्र है, स्वच्छंदता के साथ जीवन बिताने के लिए बिल्कुल आज़ाद ।

ये विषमताएं पहले तर्क पर सारे धर्मों के समान रूप से 'सत्य' होने को खंडित कर देती हैं ।

(2) सारे धर्मों के सकारात्मक मूल्यों के पक्षधर होने



की बात बड़ी हद तक सही है, लेकिन थोड़ा विस्तार में जाने से यह वक्तव्य पूरी तरह से सच प्रतीत नहीं होती। प्रेम, दयाभाव, क्षमाशीलता, परोपकार, परसेवा, न्यायशीलता, सदाचार, सच बोलना, निष्पक्षता, उदारता, दूसरों का मान-सम्मान–इत्यादि मूल्यों के पक्षधर होते हुए भी कुछ धर्मों में शराब पीना, जुआ खेलना, पर-स्त्री गमन, धन अर्जित करने में नैतिकता की अनिवार्य शर्त, नारी-शील-रक्षा इत्यादि से संबंधित नकारात्मक मूल्यों की भी मान्यता है ।

ईश्वर और धर्म को न मानने वाले नास्तिक लोगों में भी उपरोक्त सकारात्मक मूल्य पाए जाते हैं । इससे सिद्ध होता है कि मानव मूल्यों का महत्व धर्मों में है लेकिन ये मूल्य किसी धर्म विशेष के सत्य होने का ऐसा कोई मानदंड नहीं है, जिस पर निर्णयात्मक रूप से कहा जा सके कि फ़लां धर्म सत्य है, फ़लां नहीं है, या सारे के सारे सत्य हैं । धर्म मनुष्य की चेतन-स्थिति की वस्तु है, जबकि मानव-मूल्य, उसकी संरचना के मरहले में, सृष्टिकर्ता की ओर से उसके मूल-स्वभाव, अचेतन तथा अंतरात्मा में ही डाल दिया जाता है ।

(3) ''सारे धर्म अपने अनुयायियों को 'एक ही' मंज़िल पर ले जाते हैं'', यह वक्तव्य निरीक्षण का विषय है । वह 'मंज़िल' क्या है, जब तक निश्चित रूप से यह विदित न हो, और सारे धर्मों को स्वीकार्य न हो, उपरोक्त वक्तव्य को सच्चा नहीं कहा जा सकता।

अधिकतर धर्मों में मरणोपरांत मनुष्य या उसकी आत्मा की अंतिम अवस्था या निवास-स्थान इन्सान की 'मंज़िल' कहा जाता है । एक धर्म में तो मरणोपरांत किसी मंज़िल की अवधारणा व मान्यता सिरे से है ही नहीं । उसके निकट सांसारिक भौतिक जीवन में दुखों-संकटों से रहित हो जाना, अर्थात 'निर्वाण' प्राप्त कर लेना ही इन्सान की आख़िरी और अभिष्ट मंज़िल है । अन्य धर्मों में से कुछ के अनुसार आवागमनीय पुन: पुन: जन्म के चक्र से आत्मा का स्वतंत्र हो जाना, अर्थात मोक्ष या मुक्ति प्राप्त कर लेना मनुष्य की आख़िरी मंज़िल है । और कुछ धर्मों की दृष्टि में जन्म केवल एक बार और मृत्यु केवल एक बार के बाद, परलोक में स्वर्ग-प्राप्ति तथा 'नरक से निजात' पा जाना इन्सान की आख़िरी मंज़िल है । जब स्वयं गंतव्य और मंज़िल की अवधारणा और मान्यता में मूलभूत स्तर पर इतने गंभीर अंतर और ऐसी प्रमुख विषमता हो तो फिर इस वक्तव्य का औचित्य ही खंडित हो जाता है कि 'सारे धर्म मनुष्यों को एक ही मंज़िल पर पहुंचाते हैं ।'

सारे धर्मों के सकारात्मक मूल्यों के पक्षधर होने की बात बड़ी हद तक सही है, लेकिन थोड़ा विस्तार में जाने से यह वक्तव्य पूरी तरह से सच प्रतीत नहीं होती। प्रेम, दयाभाव, क्षमाशीलता, परोपकार, परसेवा, न्यायशीलता, सदाचार, सच बोलना, निष्पक्षता, उदारता, दूसरों का मान-सम्मान–इत्यादि मूल्यों के पक्षधर होते हुए भी कुछ धर्मों में शराब पीना, जुआ खेलना, पर-स्त्री गमन, धन अर्जित करने में नैतिकता की अनिवार्य शर्त, नारी-शील-रक्षा इत्यादि से संबंधित नकारात्मक मूल्यों की भी मान्यता है ।

उपरोक्त तीनों वक्तव्य थोड़े से निरीक्षण से ही वास्तविकता के प्रतिकूल सिद्ध हो जाते हैं । इससे यह अवश्यंभावी निष्कर्ष निकलता है कि सत्य की खोज, अर्थात, 'सत्य धर्म' की खोज होनी चाहिए । 'सत्य' में विरोधाभास या अंतर्विरोध नहीं हो सकता, यह 'सत्य' से, मूलरूप से तथा अवश्यत: अपेक्षित है । अत: सत्य-धर्म से भी यही बात अपेक्षित है ।

सत्य-धर्म को कैसा होना चाहिए

बुद्धि, विवेक, निरीक्षण, अनुभूति, चिंतन-मंथन, आदि मानव-गुणों को कार्यरत करके कुछ मानदंड निर्धारित किये जा सकते हैं जिन पर जांच-परख कर इस संतोषजनक निष्कर्ष पर पहुंचा जा सके कि सत्य-धर्म को कैसा होना चाहिए । फिर यह बात तर्कसंगत होगी कि जब सत्य-धर्म का निश्चय व निर्धारण हो जाए तथा तर्कों के आधार पर वह धर्म मात्र स्वयं को ही सत्य-धर्म कहने का आह्वाहक हो तो उस पर अंतर्धमीय सहिष्णुता व उदारता का विरोधी होने का भ्रम-भ्रांति या आक्षेप न लगे । ऐसे मानदंड निम्न हो सकते हैं :

(1) धर्म का ईश-निर्मित होना

ईश्वर सत्य है, सत्य का स्रोत है, मनुष्यों का सृजक है अत: स्वामी, पूज्य, आराध्य, पालक-पोषक है । इन गुणों में कोई भी उसका साझी-शरीक नहीं । सत्य-धर्म ऐसे ईश्वर के 'विशुद्ध ईश्वरत्व' का आह्वाहक व संस्थापक होना चाहिए । ऐसे धर्म का संरक्षक, संयोजक, निर्धारक, तथा संचालक मात्र ईश्वर को ही होना चाहिए । सत्य-धर्म को चाहिए कि मनुष्य तथा समाज की मान्यताओं, धारणाओं, भावनाओं तथा व्यक्तिगत दाम्पत्य, पारिवारिक, सामाजिक व सामूहिक समस्त क्रिया-कलापों को ईशमुखी कर दे ताकि ईश्वर की करुणा, दयाभाव, तथा शांतिप्रियता इन्सानों के बीच प्रवाहित होने लगे । धर्म 'ईश्वर-मनुष्य-सृष्टि' के बीच वांछित व लाभप्रद संबंध की दृढ़ परिकल्पना इन्सानों को दे और उन्हें उस पर कार्यान्वित होने का मार्गदर्शन भी करे, साहस, क्षमता और निष्ठा व इच्छाशक्ति भी प्रदान करे । यह तथ्य सहज रूप से समझ में आता है कि ऐसा ईश-केन्द्रित व ईशमुखी धर्म मानवजाति के लिए कितना बड़ा वरदान होगा, और फिर स्वाभाविक रूप से 'मात्र सत्य-धर्म' कहलाए जाने का अधिकारी ।

(2) धर्म का, जीवन व मृत्यु की 'वास्तविकता' बताना

ब्रह्माण्ड के ज्ञात क्षेत्र में मनुष्य, ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति है जो आत्मा और विवेक के गुणों की धारक है । अत: उसके जीवन का उद्देश्य अन्य जीवधारियों के जीवन उद्देश्य से श्रेष्ठ, उच्च व विशिष्ट होना चाहिए । मनुष्य के जीवन की उत्पत्ति ईश्वर ने की है अत: ईश-निर्मित धर्म ही, सत्य-धर्म के रूप में, इस श्रेष्ठता, उच्चता तथा विशिष्टता की वास्तविकता, बहुपक्षता व व्यापकता की व्याख्या तथा स्पष्टीकरण करने में सक्षम हो सकता है । इसी प्रकार, मृत्यु-पश्चात क्या होगा, इन्सान के ज्ञान से परोक्ष की बात है अत: ईश-निर्मित सत्य-धर्म को (इन्सानी अटकलों व अनुमानों से इतर) निश्चित, भ्रमरहित तथा संतोषजनक रूप से इन्सानों को सहजता के साथ स्वीकार्य हो और इस प्रकार सत्य-धर्म को इन्सानों के आख़िरी मंज़िल का बोध भी कराना चाहिए तथा उस पर दृढ़ विश्वास भी दिलाना चाहिए।

(3) धर्म जातीयता, क्षेत्रीयता, नस्ल, वर्ण, भाषा से उच्च हो

सत्य धर्म का मूलगुण होना चाहिए कि वह इस शाश्वत तथ्य का वैश्वीकरण कर दे कि 'ईश्वर सबका है, सब ईश्वर के हैं'। यही मानवजाति की सबसे बड़ी तथा सबसे मूल्यवान निधि है । सत्य-धर्म को अनिवार्यत: ऐसा होना चाहिए जो समस्त मानवजाति को एक माने और घोषित करे । जन्म के आधार पर, रंग और भाषा, देश, राष्ट्र, जाति, संप्रदाय और नस्ल के आधार पर अलग-अलग उपासनागृह, पूजा-स्थल, धार्मिक मान्यताएं व अवधारणाएं, पूजा-पद्धति, सम्मानित व अपमानित होने के मानदंड बनाकर और इस प्रकार मानवजाति के विशाल ऐक्य (Oneness) को तोड़कर, फाड़कर न रख दे ।

(4) धर्म हर पल मनुष्यों का शुभाकांक्षी व सहायक हो

धर्म को इतना कमज़ोर, शिथिल नहीं होना चाहिए कि कुछ कर्मकांड और कुछ पूजा-उपासना, तक इन्सान के पास आये और मनुष्य के व्यक्तिगत व सामाजिक जीवन के छोटे-बड़े सारे क्षेत्रों में उसे अकेला छोड़ दे । सत्य-धर्म को इस बात में सक्षम एवं कर्मठ होना चाहिए कि सुख और दुख में इन्सानों को संभाले रखे । बड़ी-बड़ी कठिनाइयों में उनका सहायक हो, हर प्रतिकूल परिस्थिति में उन्हें अपने शुभाकांक्षी होने का बोध व विश्वास दिलाए उनको मार्गदर्शन करे, उन्हें उत्तम सिद्धांत, शिक्षाएं, नियम एवं क़ानून प्रदान करे । अत्यंत दुखद और हृदय-विदारक परिस्थिति में उन्हें इतना आत्मविश्वास व आत्म-बल दे कि वे आत्म-हत्या न करें । अर्थात हरपल, हर क्षण, हर अवस्था, हर परिस्थिति में मुनष्य को संभाले रखने और टूट जाने से बचाने का काम करने में जब धर्म सक्षम व सक्रिय हो तो मात्र उसे 'सत्य-धर्म' कहा जाना चाहिए ।

(5) धर्म में अतियां (Extremity) न हों

सत्य-धर्म को व्यावहारिक होना चाहिए । न संसार का परित्याग और दाम्पत्य जीवन से सर्वथा दूर कराए, न सांसारिक व भौतिक भोग-विलास में लीन हो जाने को मनुष्य को छोड़ दे । यह दो अतियां हैं । मानव-प्रकृति के विरुद्ध और मनुष्य व मानवजाति के लिए हानिकारक और कभी-कभी घातक होती हैं । सत्य-धर्म को जीवन-यापन की उच्चतम विधि व प्रणाली बतानी चाहिए और आध्यात्मिक व नैतिक पहलू से सक्रिय व सक्षम भी । मध्यम-मार्ग ही इन्सानी प्रवृत्ति के अनुकूल होता है । प्रवृत्ति दोषयुक्त हो जाने

से अतिवादी जीवनशैली व प्रणाली प्रचलित होती है जिसके दूरगामी, बहुआयामी एवं व्यापक कुप्रभाव मानव-समाज को झेलने पड़ते हैं । सत्य धर्म मात्र वही हो सकता है जो मानवजाति को इस विडम्बना और त्रासदी से बचाए, बचाकर रखे ।

सत्य-धर्म और सहिष्णुता व उदारता

पक्षपात और पूर्वाग्रह मानव-प्रकृति की एक बड़ी कमज़ोरी है । फिर भी पुण्यात्मा-धारक प्रबुद्धजन इस आम कमज़ोरी से ऊपर उठकर जीवन के महत्वपूर्ण व विशेष विषयों पर, निष्पक्ष पूर्वाग्रहरहित होकर सोचते और व्यावहारिक नीति तय करते हैं । ऊपर की पंक्तियों में सत्य-धर्म होने के मानदंड-स्वरूप जो पांच बिंदु वर्णित किये गये, उनके परिप्रेक्ष्य में निस्संदेह व निश्चिंत होकर पूरे आत्म-विश्वास से कहा जा सकता है कि कोई धर्म जो ऐसे उच्च व सकारात्मक पहलुओं को समाहित किये हुए हो, सहिष्णु तथा अनुदार हरगिज़ नहीं हो सकता । निष्पक्षता और अपूर्वाग्रह से निरीक्षण किया जाए तो स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है कि वह धर्म 'इस्लाम' और मात्र इस्लाम है । यह बात सार्वभौमिक शाश्वत सत्य के रूप में सामने आती है और उपरोक्त तर्क से ही यह बात भी सिद्ध हो जाती है कि इस्लाम धर्म इतना सहिष्णु व उदार है कि इसकी इस विशेषता के कारण से 1450 वर्षों से विश्व के कोने-कोने में, ग्लोब के चप्पे-चप्पे पर, हर क़ौम, रंग, नस्ल और भाषा के लोगों को स्वीकार्य होता रहा है । हां, 'असत्य' के प्रति सत्य-धर्म को सहिष्णु और उदार नहीं होना चाहिए, सो इस्लाम ऐसा नहीं है । लेकिन असत्य पर तर्क, प्रमाण तथा समझा-बुझाकर, अनुनय द्वारा वर्चस्व स्थापित करने का आह्वाहक व पक्षधर है । यह अन्याय, दुष्चरित्रता, अनैतिकता, अनेश्वरवाद, अनेकेश्वरवाद, अत्याचार, अशान्ति फैलाने वाले तत्वों व शक्तियों के प्रति सहिष्णु व उदार नहीं है ।

निष्कर्ष...इस्लाम की स्थिति

इस्लाम की सुनिश्चित व स्थायी नीति है कि सत्य तथा सत्य-धर्म का आह्वान किया जाए । जनमानस को समझाया-बुझाया जाए । इस्लाम के मात्र सत्य-धर्म होने के तर्क व प्रमाण दिए जाएं । लोगों की अन्तरात्मा तथा विवेक को मधुर शैली में आवाज़ दी जाए । और इस्लाम के अनुयायियों व प्रचारकों का काम यहीं पर समाप्त हो जाता है । ठीक यही बात इस्लाम के मूल ईशग्रंथ क़ुरआन में भी ग्रंथवाहक पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) से भी ईश्वर ने कई स्थानों पर कही है । किसी से सत्य-धर्म इस्लाम को मनवा लेने तथा उसे स्वीकार कर लेने पर किसी ज़ोर-ज़बरदस्ती की अनुमति ईश्वर ने नहीं दी है । हर मनुष्य का मौलिक अधिकार माना गया है कि धर्म और आस्था ग्रहण करने में वह स्वतंत्र है । सत्य-धर्म को ग्रहण न करने के बाद का मामला व्यक्ति-विशेष और ईश्वर के बीच का मामला बताया गया है और पैग़म्बर समेत किसी मुस्लिम व्यक्ति को ईश्वराधिकार की परिधि में संक्रमण व हस्तक्षेप का अधिकार इस्लाम ने नहीं दिया है । सहिष्णुता और उदारता का इससे बढ़कर मूल्य और क्या हो सकता है ?

धर्मों के अनुयायियों और धार्मिक संप्रदायों के प्रति सद्भाव, दयाभाव, न्यायनिष्ठा, शान्ति, सहयोग, सदाचार तथा प्रेम-व्यवहार की शिक्षाओं और आदेशों से क़ुरआन और हदीस (पैग़म्बर सल्ल०) के कर्मों व कथनों के ब्योरा और संग्रह) के पन्ने भरे हुए हैं । यह वास्तव में इस्लाम के सहिष्णु व उदार होने की पराकाष्ठा है । मुस्लिम समाज में इस्लाम की इस ख़ूबी का उल्लंघन होता हो तो इसका दोष इन्सानों पर आता है, न कि इस्लाम पर और इन्सान कितना ही अच्छा हो जाए, कैसे ही उच्च व उत्तम धर्म का अनुयायी हो, इन्सानी कमज़ोरियों से बिल्कुल ही मुक्त नहीं हो सकता । इस्लाम में, अपने आपमें, असहिष्णुता व अनुदारता के दोष लेशमात्र भी नहीं हैं ।

ANSARI STONE KOTA

Deals in :
ALL TYPES OF SAND STONE
(RED, BLUE, BROWN ETC.)

MACHINE CUT & HAND CUT SAND STONE




KOTA STONE

Address :
RAM NAGAR NEW STONE MANDI
KOTA RAJASTHAN

Mobile : 9829039190, WhatsApp : 9660853702

इस्लाम पर असहिष्णुता का आरोप कितना सच ?

❖ **जुनैद अली**

इस्लाम पर आरोपों-प्रत्यारोपों का सिलसिला कोई नया नहीं है, बल्कि मोटे तौर पर इस्लाम के विरुद्ध दुष्प्रचारों की अनवरत शृंखला देखने को मिलती रहीं हैं जो वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कहीं अधिक तीक्ष्ण होता हुआ प्रतीत होता है । आज समूचे विश्व में इस्लाम को लेकर भ्रांतियां, आशंकाएं एवं अज्ञानताएं हैं और समाज विरोधी दक्षिणपंथी संगठनों द्वारा इस्लामोफ़ोबिया के नाम पर लोगों के मस्तिष्क में डर को स्थापित करने के प्रयास भी बड़े स्तर पर सुनियोजित तरीक़े से चलाए जा रहे हैं । इस्लाम के विरुद्ध चलाए जा रहे नकारात्मक प्रचारों के प्रयासों को इस आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता है कि यह पूरी तरह से निष्प्रभावी रहे हैं बल्कि अलग-अलग क्षेत्रों पर इसके प्रभाव विभिन्न रूपों से पड़े हैं, लेकिन क्या इन प्रभावों की प्रभावशीलता दीर्घकालिक होगी ? इस पर गहरे सवाल हैं, बल्कि इस सवाल को रद्द करना ही उचित होगा क्योंकि कृत्रिमता एक तय मियाद तक ही क़ायम रहती है, लेकिन इसमें कोई दो मत नहीं है कि इस्लाम के विरुद्ध इन कुचेष्टाओं ने विश्व जगत के समक्ष इस्लाम को जानने-समझने की उत्सुकता व जिज्ञासाओं का भी व्यापक स्तर पर सृजन किया है जो इस्लाम की मूल भावनाओं को समझने एवं इस्लाम के प्रति आशंकाओं के निवारण में उत्कृष्ट भूमिका का निर्वहन कर रही है ।

यह स्पष्ट है कि इस्लाम पर दोष मढ़ने की रीति जो सदियों से रहीं थीं उसका स्वरूप वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भी लगभग वहीं है, लेकिन यह सोचनीय पक्ष रहा है कि चौदह सौ वर्षों से इस्लाम के प्रति प्रतिकूल वातावरण होने और निरंतर आक्रमणकारियों की साज़िशों में बढ़ोत्तरी दर्ज होने के बावजूद भी इस्लाम के अनुयायियों की संख्या में वृद्धि हो रही है । इसका आशय यही है कि इस्लाम मानवता के प्रति सहिष्णुता एवं संवेदनशीलता के पक्षों को अपने आपमें समाहित किये हुए है जो लोगों को आकर्षित करता है ।

वास्तविक रूपों में असहिष्णुता समस्त समस्याओं एवं पीड़ाओं का एक व्यवस्थित शब्द है जिसका आशय असहनशीलता है और इस आरोप को इस्लाम पर सुनियोजित तरीक़े से थोपा जाता रहा है, जबकि वास्तविकता ठीक इसके उलट है, क्योंकि इस्लामिक मान्यताएं मानव प्रकृति के अनुकूल हैं जो मानवजाति को श्रेष्ठता की ओर व्यवस्थित रूप से अग्रसर करतीं हैं जिसमें मानवजाति का भविष्य सुरक्षित एवं कल्याण निहित है और उन पक्षों से सचेत करतीं हैं जो उसके अस्तित्व के लिए घातक है ।

हर दौर में इस्लाम के आलोचक तरह-तरह के मिथक प्रचार द्वारा इस्लाम के प्रभावों को कम और छवि को धूमिल करने के प्रयासों में जुटे रहे हैं । अत्यंत संकीर्ण एवं कुत्सित मानसिकता के तहत इस्लाम को हिंसक और आतंकवादियों का धर्म साबित करने का प्रयास किया गया, जबकि वास्तविकता यही है कि समूचे विश्व के मुसलमान आतंकवाद से सबसे अधिक पीड़ित हैं परंतु अंतर्राष्ट्रीय मीडिया ने मुसलमानों के उत्पीड़न को सतह पर लाने के बजाए समूचा दोष मुसलमानों पर ही मढ दिया ताकि दुनिया में आतंकवाद का प्रसार करने वालों की छवि को सुरक्षित रखा जा सके । यदि वर्तमान परिदृश्य में समूचे विश्व की स्थितियों का विश्लेषण किया जाए तो यह लगभग स्पष्ट हो जाता है कि मुसलमानों ने किसी नवीन क्षेत्रों को अपने अधिपत्य में नहीं लिया और न ही कोई ऐसा प्रयास दिखायी पड़ता है, बल्कि सच्चाई यह है कि मौजूदा समय पर मुसलमान ख़ुद अपने अधिकारों एवं आज़ादी के लिए संघर्षरत हैं ।

असामाजिक तत्वों द्वारा तथ्यों को तोड़-मरोड़कर और क़ुरआन व इस्लामिक संदेशों को निज मतानुसार संपादित कर इस्लाम की मौलिक छवियों को बिगाड़ने और इस्लाम के विरुद्ध उत्तेजना को प्रसारित करने के प्रयास निरंतर किये जाते रहें हैं, लेकिन इस्लाम के स्वभाव में शांति, प्रेम, त्याग, सौहार्द, जनकल्याण एवं विश्व कल्याण की भावनाएं निहित

रही हैं । इस्लाम में धार्मिक सहिष्णुता का कितना व्यापक महत्व है इसे क़ुरआन की इस आयत से सहजता से समझा जा सकता है, ''ऐ ईमान वालो ! ऐसे बन जाओ कि अल्लाह (की आज्ञाओं के पालन) के लिए हर समय तैयार रहो, और किसी क़ौम की दुश्मनी तुम्हें इस बात पर आमादा न करे कि तुम अन्याय करो, न्याय से काम लो, यही तरीक़ा है अल्लाह के क़रीब होने का, और अल्लाह से डरो, अल्लाह तुम्हारे काम से पूरी तरह बाख़बर है । इस आयत का अर्थ यह है कि धर्म, सभ्यता, संस्कृति, भाषा या रंग नस्ल में मतभेद रखने वाले हर व्यक्ति के साथ चाहे वह मित्र हो या विरोधी सभी के साथ न्याय का मामला किया जाए, उसके धर्म आदि के कारण उसके साथ कोई भेदभाव न किया जाए, न किसी का अतिवाद या अत्याचार उचित होगा ।

सहिष्णुता से जुड़े निर्देशों को एक अन्य आयत में देखें तो ''और यदि आपका पालनहार चाहता, तो सब लोगों को एक समुदाय बना देता और वे सदा विचार विरोधी रहेंगे ।'' इस आयत का अर्थ यह है कि, हर व्यक्ति के मद्देनज़र यह बात रहनी चाहिए कि विभिन्न क्षेत्रों में जो धार्मिक और वैचारिक मतभेद है वह स्वाभाविक है, इसे समाप्त नहीं किया जा सकता है । इसलिए उदारता का प्रदर्शन करना और दूसरों के धर्म, मान्यताओं, विचार आदि को सहन करने के लिए शक्ति पैदा करनी चाहिए और उनके साथ धार्मिक, राजनीतिक और बौद्धिक सहिष्णुता का मामला रखना चाहिए। इस्लाम विविधता और बहुलता का सम्मान करता है, जो सभी पक्षों के लिए महत्वपूर्ण बात है और इस्लाम धार्मिक आधारों को लेकर किसी को विवश नहीं करता है कि उसका अनुसरण किया जाए ।

इस्लाम विरोधियों की ओर से एक आरोप यह दिया जाता है कि इस्लाम धर्म का प्रसार तलवार के बल पर हुआ, जबकि यथार्थ में उसका कोई सबूत नहीं मिलता, यदि ऐसा होता तो दुनिया के बड़े क्षेत्रों का इस्लामीकरण हो जाता । वास्तविकता यह है कि इस्लाम कृपा, नैतिकता और सहिष्णुता से फैला है, जिसका क़ुरआन स्पष्ट रूप से वर्णन करता है–''धर्म में किसी तरह की ज़बरदस्ती नहीं, क्योंकि मार्गदर्शन के द्वारा भटकाव साबित हो चुका है ।''

(सूरा बक़रा : 256)

इसमें कोई संशय नहीं है कि इस्लाम में सभी प्रकार के हिंसक कृत्यों को निषेधात्मक की श्रेणी में रखा गया है और सीमाएं लांघने वाले अपराधियों के लिए बिना किसी प्रकार के भेदभाव के इस्लाम में कड़े प्रावधान रखें गए हैं । इस्लाम सभी के जीवन को सम्मान देने के साथ शांति एवं सुरक्षा को प्रगाढ़ता प्रदान करने पर बल देता है । विभिन्न धर्मों व उनके अनुयायियों को लेकर इस्लाम का स्पष्ट मत यह रहा है कि मानवीय संवेदनाओं के आधार पर सभी से मज़बूत रिश्तों को क़ायम किया जाए, विषम परिस्थितियों में सहायता प्रदान की जाए और आपसी सौहार्द व संवाद को हर हाल में बहाल रखा जाए ।

इस्लाम पर महिलाओं से जुड़े प्रसंगों को लेकर हर दौर में वैचारिक आक्षेप लगते रहे हैं क़ुरआन की अधिकांशत: आयतें महिला और पुरुष दोनों को संबोधित करते हुए समानता का पाठ पढ़ाती हैं । क़ुरआन का उपदेश दोनों के लिए समान अवसर प्रदान करता है । क़ुरआन कहता है–हमने महिला और पुरुष दोनों को एक समान आत्मा दी है, दोनों की महत्ता एक समान है । यह स्पष्ट है कि इस्लाम महिलाओं एवं पुरुषों दोनों की कार्य पद्धति एवं व्यावहारिक रूपों के संदर्भ में कुछ विशेष सीमाएं

इस्लाम पर महिलाओं से जुड़े प्रसंगों को लेकर हर दौर में वैचारिक आक्षेप लगते रहे हैं क़ुरआन की अधिकांशत: आयतें महिला और पुरुष दोनों को संबोधित करते हुए समानता का पाठ पढ़ाती हैं । क़ुरआन का उपदेश दोनों के लिए समान अवसर प्रदान करता है । क़ुरआन कहता है–हमने महिला और पुरुष दोनों को एक समान आत्मा दी है, दोनों की महत्ता एक समान है ।

निर्धारित करता है ताकि सामाजिक स्तर पर अनैतिक आचरणों एवं बुराइयों को पनपने ही न दिया जाए और समाज को नैतिक मूल्यों पर खड़ा रखा जा सके, लेकिन यह दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति रही है कि कुछ स्वघोषित प्रगतिशील विचारक इस्लाम द्वारा महिलाओं एवं पुरुषों के संबंधों पर खींची गयी मर्यादाशील रेखाओं के संदर्भ में तर्कहीन टिप्पणियां एवं आलोचनात्मक दृष्टिकोणों को बनाए रखते हुए इस्लाम पर बेबुनियाद आरोप लगाते रहे हैं ।

इस्लाम के विरोधियों द्वारा तलाक़, पुनर्विवाह एवं बहुविवाह को लेकर तूफ़ान खड़ा किया जाता रहा, जबकि वास्तविकता यही है कि सभी इस्लामिक आयाम महिलाओं के जीवन पर सख़्ती नहीं बल्कि महिलाओं के जीवन को संपन्न, सुदृढ़ व सुरक्षित बनाने के लिए आवश्यक है । पैग़म्बर साहब की एक हदीस है–अल्लाह ने मुसलमानों को जिन कर्मों को करने के लिए अनुमति दी है, उसमें सबसे अप्रिय तलाक़ ही है । इस हदीस के माध्यम से स्पष्ट है कि जीवन रक्षा के प्रति तलाक़ अपने आपमें एक असाधारण विकल्प है और इसे व्यवहार में तभी लाया जा सकता है जब दाम्पत्य जीवन के सभी विकल्प समाप्त हो चुके हों और भविष्य के प्रति संवेदनशील रहते हुए गहन सोच-विचार कर लिया गया है ।

इसी के साथ इस्लाम महिलाओं को शिक्षा एवं आवश्यकता पड़ने पर रोज़गार के क्षेत्रों में भी पुरूषों के बनिस्बत समान अवसर प्रदान करता है । वहीं ब्रिटेन में अभद्र टिप्पणियों के कारणवश महिला सांसद राजनीति छोड़ने के लिए विवश हैं लेकिन खेदजनक पक्ष यह है कि जहां हिजाब, बुर्क़ा और नक़ाब के लिए हो-हल्ला है वहीं दुनिया महिलाओं के प्रति घटित होने वाले मामलों व उनके प्रति अमर्यादित व्यवहारों पर तीक्ष्ण दृष्टि नहीं रख पाती है ।

इस्लाम पर आर्थिक मामलों को लेकर भी गंभीर आरोप लगते रहे हैं । इस्लामिक मान्यताओं में ब्याज को निषिद्ध घोषित किये जाने के कारणवश पूंजीवाद मुस्लिम धारणाओं के प्रति हमेशा असहज रहा है, जबकि किसानों एवं छोटे व्यवसायों से जुड़े लोगों की आत्महत्याओं के मूल कारण ब्याज आधारित ऋण ही मुख्य रूप से रहे हैं । इस्लाम ब्याज आधारित व्यवसायों को मानव शोषण के रूप में चिह्नित करता है और सामाजिक सुरक्षा के लिए इसे विनाशकारी साबित करता है । इस्लामिक बैंक जिसकी अनुशंसा भारत के पूर्व रिजर्व बैंक के गवर्नर रघुराम राजन ने भी किया था जिसका मूल उद्देश्य अभावग्रस्त लोगों को ब्याज मुक्त ऋण उपलब्ध कराना ही है ताकि लोगों को वित्तीय शोषण से आज़ाद किया जा सके ।

इसमें कोई दो मत नहीं है कि धार्मिक सहिष्णुता को लेकर एक बड़ी चूक मुसलमानों के द्वारा भी होती रही है । राष्ट्रीय, सामाजिक, शिक्षा एवं आर्थिक क्षेत्रों में मुसलमानों के द्वारा जो प्रयास सुनिश्चित करने चाहिए थे उसमें घोर अनियमितताएं एवं लापरवाहियां साफ़तौर से देखने को मिलती हैं । सामाजिक बंधुओं से जो प्रगाढ़ रिश्ते स्थापित करने एवं उनकी आशंकाओं व भ्रांतियों के निवारण के लिए जो पहले होनी चाहिए थी उसकी संख्या औसत से बहुत ही कम प्रतीत होती है । यह भी सही है कि उज्ज्वल चरित्र निर्माण एवं मानव विकास से जुड़ी क़वायदों के प्रयास जो पूर्व के मुसलमानों ने किये थे वह मौजूदा दौर में बहुत कम हो गया है और हमने इस्लाम के एक महत्वपूर्ण आदेश इस्लाम का प्रकाशन और प्रचार-प्रसार बहुत कम कर दिया है ।

वर्तमान परिदृश्य में दुनिया में इस्लाम बहस का बड़ा मुद्दा है । इस्लाम को लेकर चलने वाले विचार-विमर्श में मुख्यत: दो स्थितियां देखने को मिलती हैं । पहली यह है कि मुसलमानों का कुछ वर्ग इस्लामिक मान्यताओं के नाम पर कुछ ऐसे रीति-रिवाजों का अनुसरण कर रहा है जो वास्तव में इस्लामिक मान्यताओं से कोई भी संबंध नहीं रखता है जिसका नतीजा यह हुआ कि दुनिया के लोगों के सामने इस्लाम का मानव हितैषी पक्ष सामने आने के बजाए यह भ्रम की स्थिति को जन्म देता है । दूसरा यह है कि इस्लाम को समझने के लिए किसी पूर्वाग्रह से प्रेरित होते हुए किसी निर्णय पर पहुंचने का प्रयास करना, अधिकतर इस्लाम पर खड़े किये गये आक्षेप इसी आधार पर स्थापित किये गये जिसका वास्तविक स्थितियों से दूर-दूर तक कोई भी लेना-देना था ही नहीं । इस्लाम पर असहिष्णुता का गंभीर आरोप लगते रहे, लेकिन वास्तविकता यही है कि इस्लाम अपने मूल सिद्धान्तों में उदारता और शांति का ही पक्ष रखता है । इस्लाम में क्रोध, कट्टरता, असहिष्णुता तथा हिंसक व्यवहार पूर्णत: वर्जित है । यहां तक कि इस्लाम युद्ध के मैदान में भी सीमाओं का निर्धारण करता है । सही मायनों में इस्लाम शांति और मानवाधिकारों का संरक्षक है ।

अल्लाह के
रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया, ''जो
अल्लाह के डर से रोता है वह दोज़ख़
में नहीं जाएगा, जब तक कि थन में
दूध वापस नहीं आता ।
जिसके पैर अल्लाह के काम में
सने हों, उसे दोज़ख़ की आग
कभी छू नहीं सकती ।''
(तिरमिज़ी)

A WELL WISHER

SAAJ TRADERS

GOA

बुर्क़ा : अनुचित और तर्कहीन विरोध क्यों ?

■ **सुफ़ियान अहमद**

एक विवाद जो अक्सर चलता रहता है वह है हिजाब, नक़ाब या बुर्क़े का । यह एक ऐसा विवाद है जिसके पक्ष एवं विपक्ष दोनों ओर लाखों लोग खड़े रहते हैं । यह विवाद केवल भारत में ही नहीं, बल्कि पूरी दुनिया में है । इस विवाद के कई पहलू हैं, मसलन इस्लाम, धर्म, संस्कृति, महिला अधिकार, पितृसत्ता, मानव-अधिकार, सुरक्षा कारण आदि । बुर्क़ा पहनें या नहीं, इस पर बहस चलती रहती है और यह सुर्ख़ियों में तब आ जाती है जब इसे लेकर कोई घटना घट जाती है या किसी देश में इस पर प्रतिबंध की मांग की जाती है । वैसे यह केवल बुर्क़ा विरोध का मामला नहीं है । प्रतीकों को लेकर जिस प्रकार राजनीति की जा रही है, उसका मामला भी है ।

ऐसे में सवाल उठता है कि आख़िर कौन तय करेगा कि लड़कियों को क्या पहनना चाहिए ? किसी महिला को बुर्क़ा पहनना है या नहीं यह निर्णय उसका व्यक्तिगत है और जब यह निर्णय किसी महिला का व्यक्तिगत है तो उस पर प्रतिबंध लगाना या फिर ज़बरदस्ती करना क्या सही है ? जिन देशों में बुर्क़े पर प्रतिबंध लगाया गया है, वहां महिलाएं पहले से ज़्यादा बुर्क़ा पहनने लगी हैं, क्योंकि उन्हें लगता है कि यह उनकी संस्कृति पर हमला है । फ्रांस, बेल्जियम इसका सबसे अच्छा उदाहरण है । फ्रांस में जब बुर्क़े पर प्रतिबंध लगा तो जिन महिलाओं ने कभी बुर्क़ा नहीं पहना था, वे भी बुर्क़ा पहनकर विरोध में उतर आयीं ।

कुछ महीने पहले ख़बर आयी थी कि उत्तर प्रदेश के फ़िरोज़ाबाद के एक कॉलेज में लड़कियों को बुर्क़ा पहनकर आने से रोका गया ।

दूसरी ओर यह ख़बर भी आयी कि रांची के एक कॉलेज में टॉपर को ग्रेजुएशन सेरेमनी में सिर्फ़ इसलिए डिग्री नहीं दी गयी क्योंकि वह बुर्क़ा पहनकर आयी थी । आये दिन ऐसा होता रहता है जब कोई महिला बुर्क़ा पहनती है, तो कुछ लोग उसकी प्रशंसा करते हैं और उसे संस्कारी बताते हैं, वहीं दूसरी ओर ऐसे लोगों की लाइन लग जाती है जो इसे पितृसत्ता का प्रतीक और महिला ग़ुलामी की निशानी मानते हैं ।

ऐसे काफ़ी लोग हैं जो किसी महिला को बुर्क़े में देखते हैं, तो मान लेते हैं कि यह महिला परिवार में दबी हुई है, शोषित है । उनके हिसाब से धर्म और संस्कृति के दबाव ने उन्हें बुर्क़ा पहनने को बाध्य किया है । यह एक प्रकार की स्वनिर्मित पूर्वधारणा है, जो उन्होंने अपने मन में बना ली



है, लेकिन वे एक बार भी उस महिला से नहीं पूछते कि उसका बुर्क़े पर क्या नज़रिया है । पहनावे के आधार पर किसी को शोषित या शोषक कहना बहुत ही जल्दबाज़ी है ।

भारत में हर किसी के अपने पहनावे हैं, कुछ मान्यताएं हैं । सिख पगड़ी पहनते हैं, तमिलनाडु के लोग लुंगी/धोती लपेटते हैं । दिगम्बर जैन मुनि नंगे रहते हैं, कुम्भ मेला के नागा साधु नंगे रहते हैं, लेकिन इन पर किसी को बहस करते नहीं देखा गया । बहस होगी केवल बुर्क़े पर ।

प्रश्न है कि बात बार-बार बुर्क़े पर ही क्यों आकर रुक जाती है ? जो लोग बुर्क़े पर विवाद करना चाहते हैं, वे ख़ुद अपने परिवार के पहनावे पर कभी बात नहीं करते इन बहसों की नीयत अक्सर ख़राब होती है और इसका उद्देश्य एक समुदाय को नीचा दिखाना होता है । इसका कोई लाभ नहीं है । यह महिलाओं की मुक्ति के लिए भी नहीं है ।

हर समाज का अपना तौर-तरीक़ा होता है । हर तौर-तरीक़े पर सवाल खड़े करने से पहले यह भी सोचना होगा कि इसका विरोध किधर से किया जा रहा है । महिलाएं स्वयं इसका विरोध कर रही हैं या पुरुष ही निर्णय कर रहे हैं । बुर्क़ा पहनना या न पहनना किसी मुस्लिम महिला की व्यक्तिगत स्वतंत्रता का मामला है । वह इसे पहनना चाहती है या नहीं, इस पर उसका निर्णय ही अंतिम होना चाहिए । कोई परिधान पहनना या न पहनना उसकी अपनी मर्ज़ी का विषय है ।

जिस तरह सलवार कमीज़ पहनने वालों को जबरन शॉर्ट स्कर्ट नहीं पहनाया जा सकता, उसी तरह बुर्क़ा पहनने वालों को जबरन उसे उतारने के लिए विवश नहीं किया जा सकता । जिस प्रकार किसी को जबरन बुर्क़ा या घूंघट नहीं पहनाया जा सकता, उसी तरह जबरन उन्हें उतारने के लिए बाध्य भी नहीं किया जा सकता । बुर्क़े पर बहस बेकार का मुद्दा है, यह एक बिल्कुल निजी मामला है । जिसे पसन्द है, वह पहने जिसे नहीं पसन्द वह न पहने, इसमें किसी तरह की रोक लगाने का कोई मामला नहीं बनता । सबको अपनी पसंद के कपड़े पहनने की स्वतंत्रता होनी चाहिए । एक महिला के शरीर पर कैसा कपड़ा होगा, यह तय करने का अधिकार उसी का होना चाहिए । यह किसी के लिए ख़तरा नहीं हो सकता और न ही इससे किसी की स्वतंत्रता को ख़तरा हो सकता है ।



रिश्ते-नाते

(1) अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया, ''रिश्तों को तोड़ने वाला स्वर्ग में नहीं जाएगा ।''

(हदीस : मुस्लिम)

(2) अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया, ''उस क़ौम पर अल्लाह की रहमत (कृपा) नहीं होती जिस (क़ौम) में रिश्ते-नाते तोड़ने वाला मौजूद हो ।''

(हदीस : बैहक़ी)

(3) अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया, ''जो कोई चाहता है कि उसकी रोज़ी (आजीविका) में बढ़ोत्तरी पैदा हो और उसकी उम्र लम्बी हो, वह रिश्तेदारों से अच्छा सुलूक करे ।'' (हदीस : बुख़ारी)

(4) अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया, ''तीन तरह के लोग स्वर्ग में नहीं जा सकेंगे । (1) हमेशा शराब पीने वाला (2) रिश्ते-नाते तोड़ने वाला (3) जादू पर यक़ीन करने वाला । (हदीस : अहमद)

(5) अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया, ''ज़ुल्म (अत्याचार) और रिश्ते-नाते तोड़ने के सिवा कोई गुनाह ऐसा नहीं है जिसके करने वाले को अल्लाह दुनिया में जल्द सज़ा दे, ऐसा करने वाले के लिए क़ियामत के दिन भी (उसके लिए) सज़ा तैयार रखी है ।''

(हदीस : अबू दाऊद)

(6) अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया, ''एक दूसरे के साथ कपट न रखो और न हसद (ईर्ष्या), न एक दूसरे के साथ दुश्मनी करो और न रिश्तों को तोड़ो ! और ऐ अल्लाह के बन्दो, आपस में भाई-भाई बन जाओ !''

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)



'फ़त्वा' और 'काफ़िर' जैसे शब्दों की वास्तविकता

'फ़त्वा' क्या है ?

❖ **मुहम्मद ज़ैनुल आबदीन मंसूरी**

गत कई वर्षों से हमारे देश में मुस्लिम समाज और इस्लाम के संबंध में जिन कुछ शब्दों के बारे में काफ़ी भ्रम पाये जाते रहे हैं उनमें एक शब्द 'फ़त्वा' भी है । लोग अपनी सोच, भावना और मनोस्थिति के अनुकूल तरह-तरह के अर्थों में इसकी व्याख्या करते हैं । कभी-कभी दुर्भावनाएं भी काम करती हैं और कभी-कभी पूर्वाग्रह भी । पिछले कुछ वर्षों से देश के सामान्य वातावरण में इस शब्द की ऐसी नकारात्मक व्याख्या भी की जाती रही है जो इस शब्द को भयावह एवं घृणित परिभाषा में देशवासियों को परोसने का काम कर रही है । इस परिस्थिति में इसकी यथार्थ जानकारी मिलना देशबंधुओं की आवश्यकता भी बन जाती है और उनका सामाजिक व बौद्धिक अधिकार भी । साथ ही, जो लोग इस शब्द पर टिप्पणी करते हैं, या करना चाहते हैं उनका भी यह कर्तव्य बनता है कि इसकी परिभाषा और व्याख्या, इधर-उधर से अनाधिकारिक सूत्रों तथा अविश्वसनीय स्रोतों से हासिल करने के बजाय स्वयं इस्लाम के अनुयायियों में से जानकार तथा विषय का ज्ञान रखने वाले विश्वसनीय स्रोतों से हासिल करें ।

इस्लाम की बहुआयामी जीवन-व्यवस्था

'फ़त्वा' शब्द को समझने के लिए आवश्यक है यह जान लेना कि इस्लाम विश्व के अन्य छोटे-बड़े धर्मों से भिन्न, एक ऐसा उत्कृष्ट धर्म है जो मात्र धारणा, आस्था और पूजा-पद्धति तक सीमित न रहकर एक बहुपक्षीय, बहुआयामी समग्र जीवन-व्यवस्था निर्धारित करके हर जीवन-क्षेत्र में नियम, सिद्धांत, आदेश-निर्देश और क़ानून निश्चित करता है और ईश-ग्रंथ 'क़ुरआन' तथा इस्लाम के पैग़म्बर ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के 'जीवन-आदर्श' (कथन व कर्म) को इसका मूलभूत आधार बनाता है । इसी आधार की व्याख्या व विवरण को 'शरीअत' कहा जाता है । मुस्लिम व्यक्ति और समाज को शरीअत का अनुपालन करना अनिवार्य किया गया है । समाज में शरीअत के सुचारू रूप से कार्यान्वित रहने के लिए अनिवार्य है कि हर काल में, हर भू-भाग में, हर प्रकार की सामाजिक व सांस्कृतिक परिस्थिति में इस्लाम के नियम, आदेश तथा शिक्षाओं का समकालीन (Interpretation) (Explanation) और (Application) करने वाले धर्म-विद् उपलब्ध रहें और यथा-अवसर शरीअत के मौलिक क़ानूनों तथा सीमाओं के अन्दर रहते हुए किसी भी विशेष मामले में जनमानस को मार्गदर्शन प्रदान करें । ये मामले इबादत तथा जीवन के हर क्षेत्र की व्यावहारिकताओं से संबंधित हो सकते हैं । इन तमाम मामलों, कर्म-कांडों तथा क्रियाकलापों में कोई सामान्य व्यक्ति जानना चाहे कि शरीअत का मार्गदर्शन क्या है तो



मुस्लिम समाज में ऐसे आधिकारिक धर्म-विद् लोग, या संस्थाएं अवश्यत: उसे उपलब्ध हों जो यह मार्गदर्शन कर सकें ऐसे धर्म-विद् एवं शरीअत के ज्ञानी व्यक्ति को 'मुफ़्ती' और ऐसे संस्थानों को दार-उल-इफ़्ता (अर्थात वह घर, मकान, केन्द्र, संस्थान जो फ़त्वा जारी करने की औपचारिक योग्यता तथा सर्वमान्य आधिकारिकता रखता हो) कहा जाता है ।

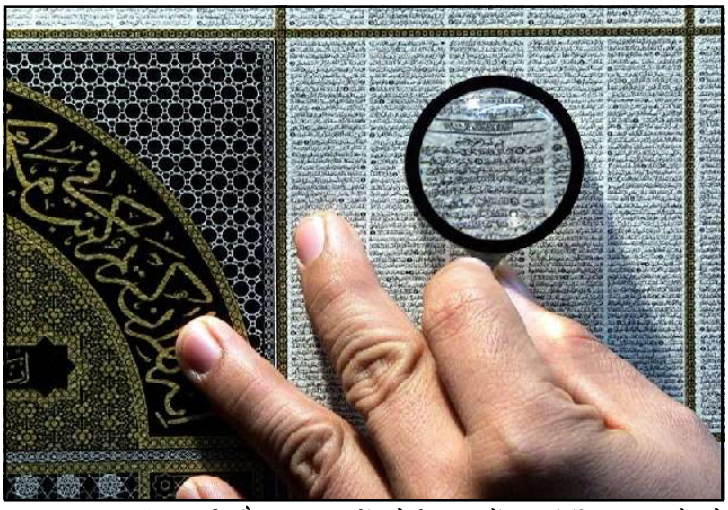

फ़त्वा जारी करने की आधिकारिकता

इफ़्ता, अर्थात 'फ़त्वा जारी करने' का काम हर आम, या बुद्धिजीवी या धर्म-विद् करने के लिए अधिकृत नहीं होता । इसके लिए इस्लामी धर्म-विज्ञान की निर्धारित शिक्षा सफलतापूर्वक प्राप्त कर लेने के बाद 'इफ़्ता' के विशेष पाठ्यक्रम की शिक्षा ग्रहण करनी आवश्यक होती है जिसका धारक मुफ़्ती कहलाता है । ऐसे मुफ़्ती को फ़त्वा जारी करने की अधिकृति प्राप्त होती है ।

जीवन का कोई भी काम ऐसा नहीं है जो इस्लाम के सिद्धांतों, शिक्षाओं तथा आदेशों की परिधि से बाहर जाकर किया जा सके । इनमें से प्राय: अनेक सामान्य गतिविधियों में इस्लाम के आदेशों से मुस्लिम समाज के आम लोग अवगत रहते हैं, इसके लिए अनेकानेक प्रावधान सदैव कार्यान्वित रखे जाते हैं । लेकिन अगर कुछ मामलों में शरीअत के आदेश से कोई व्यक्ति अवगत नहीं है, या उसे कुछ शंका व भ्रम है तो वह 'मुफ़्ती' से संपर्क स्थापित करता है और प्रार्थी होता है कि ऐसे-ऐसे मामलों में कृपया शरीअत के आदेश से अवगत कराएं । यह प्रार्थना लिखित रूप में होती है ।

मुफ़्ती उस विशेष मामले में शरीअत के तत्संबंधित नियमों व सिद्धांतों का गहरा अध्ययन तथा चिंतन-मनन करके अपनी आधिकारिक राय लिखकर, मुहर लगाकर, हस्ताक्षर करके, उसे जारी कर देता है ।

फ़त्वा की वास्तविकता

किसी विशेष मामलों में यह जानने के लिए कि इस्लामी शरीअत का क्या आदेश है, आधिकारिक रूप से शरीअत के जानकार व्यक्ति (मुफ़्ती) या संस्थान (दारुल-इफ़्ता) से संपर्क किया जाता है । वहां से उसे शरीअत के अंतर्गत विश्वसनीय क़ानूनी राय दी जाती है । यह राय 'क़ानूनी फ़ैसला' नहीं होती, इसमें तत्संबंधित मामले से संबंधित व्यक्तियों या पक्षों के नाम एवं पहचान नहीं बयान किये जाते, बल्कि सामान्य भाषा प्रयुक्त की जाती है ।

विदित हो कि क़ानूनी फ़ैसला का अधिकार मुफ़्ती नहीं 'क़ाज़ी' (जज) के पास होता है । वह राय नहीं देता, बल्कि तत्संबंधित व्यक्तियों/पक्षों की सुनवाई करता, साक्ष्यों और सबूतों को देखता है ज़िरह करता है । इस सविस्तार प्रक्रिया से केस को गुज़ारने के बाद फ़ैसला सुनाता है । अत: 'फ़त्वा' और 'क़ानूनी फ़ैसला' के बीच अंतर न जानने के कारण जो भ्रम-भ्रान्ति प्राय: पायी जाती है उसका समाधान अवश्यत: होना चाहिए जो इन पंक्तियों के द्वारा किया गया है ।

फ़त्वा मांगने और फ़त्वा देने का प्रक्रिया

किसी विशेष मामले में शरीअत का मार्गदर्शन चाहने और उसका आदेश जानने के लिए, तत्संबंधित पक्षों का नाम लिए बिना, लिखित आवेदन मुफ़्ती । दारुल-इफ़्ता को दिया जाता है ।

मुफ़्ती शरीअत के सारे संबंधित स्रोतों का अध्ययन करके उनके तत्संबंधित बिन्दुओं के प्रकाश में आधिकारिक रूप से शरीअत का नियम व निर्देश लिखकर, हस्ताक्षर करके, मुहर लगाकर आवेदनकर्ता को दे देता है और आवश्यक बातें अपने रजिस्टर में दर्ज कर लेता है ।

विदित हो कि शरीअत के मूल स्रोत, ईशग्रंथ क़ुरआन और पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) का आदर्श (कथन व कर्म) होते हैं तथा इन दोनों पर आधारित वह विश्वसनीय सामग्री भी जो शरीअत के विद्वानों ने तैयार की है ।

'काफ़िर' अपमानजनक शब्द?

यह आरोप लगाया जाता है कि ''क़ुरआन में 'काफ़िर' शब्द हिन्दुओं के लिए अपमानजनक और गाली समान प्रयुक्त हुआ है । कहा गया है कि इन्हें मारो-काटो । अत: इससे भारतीय समाज में नफ़रत, दुश्मनी, असहिष्णुता की स्थिति पैदा होती है ।'' वास्तव में यदि ऐसा ही होता जैसा कि सन्देह या आपत्ति जतायी जाती है तो विश्व के और प्रमुखत: भारत के अनेक ग़ैर-मुस्लिम विचारकों, विद्वानों और इतिहासकारों ने इस्लाम के बारे में उपरोक्त आपत्ति के विरुद्ध सैकड़ों हज़ारों पृष्ठ लिख न दिये होते । यह आरोप व आक्षेप अधिकतर अज्ञानता और कुछ हद तक ग़लत जानकारी या दुष्प्रचार की वजह से है ।

शब्द 'काफ़िर' का अर्थ

काफ़िर शब्द तीन अरबी मूल अक्षरों 'क-फ़-र' से बना है । क़ुरआन में इस मूल से बने 54 शब्दों में से 51 शब्द [जो 74 अध्यायों (सूरा) की 479 आयतों में 521 बार आये हैं], निम्नलिखित भाव में प्रयुक्त हैं । इन सारे शब्दों का मूल शब्द 'कुफ़्र' है; काफ़िर का अर्थ है 'कुफ़्र करने वाला'। कुफ़्र के कई अर्थ हैं । उदाहरण के रूप में इन्कार करना, छिपा लेना, हटा देना, दूर कर देना, प्रतिकूल कार्य करना, दबा देना, मिटा देना, अवहेलना करना, छोड़ देना आदि । (किसान के, ज़मीन में बीज दबा देने के लिए भी अरबी में 'कुफ़्र' शब्द प्रयुक्त होता है)।

पारिभाषिक अर्थ

इस्लाम (और क़ुरआन) की पारिभाषिक शब्दावली में 'कुफ़्र' शब्द कई अर्थों में प्रयुक्त हुआ है । जैसे : इस्लाम की वास्तविकता समझ लेने के बाद उस पर ईमान लाने के बजाय, इस्लाम का इन्कार कर देना, मन-मस्तिष्क पर 'सत्य' स्पष्ट हो जाने के बाद भी उसे छिपा लेना, दबा देना, तिरस्कृत कर देना । यह शब्द स्वयं मुसलमानों के भेष में, कपटाचारियों (Hypocrites, मुनाफ़िक़ों) के उस कृत के लिए भी प्रयुक्त हुआ है जो इस्लाम की कुछ बातों पर अमल करने और कुछ को छोड़ देने, अल्लाह की आंशिक या पूर्ण अवज्ञा (नाफ़रमानी), ऊपर से ईमान लेकिन अन्दर से ईमान के विरोध आदि के रूप में किया जाए । इस्लाम के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) जो ईश-ग्रंथ क़ुरआन के वाहक हैं, ने स्वयं मुसलमानों के लिए कहा : ''जिसने जान-बूझकर नमाज़ छोड़ दी उसने कुफ़्र किया ।'' क़ुरआन की छह आयतों (8:29, 39:35, 48:5, 64:9, 65:5, 66:8) में अल्लाह ने स्वयं अपने लिए यह शब्द प्रयोग किया है; ''...तो अल्लाह तुमसे तुम्हारी बुराइयों, गुनाहों को दूर कर देगा ।'' एक आयत (2:271) में फ़रमाया, ''...इससे तुम्हारी बुराइयां मिट जाती हैं ।''

उपरोक्त विवरण से यह बात पूर्णत:, निस्संदेह स्पष्ट हो जाती है कि क़ुरआन में 'काफ़िर' शब्द ग़ैर-मुस्लिमों के लिए विशेष होकर उनको अपमानित करने के लिए प्रयुक्त नहीं हुआ है । हिन्दुओं के लिए अपमान या गाली के तौर पर इसके प्रयुक्त न होने की साफ़ दलील यह है कि क़ुरआन के अवतरण काल (610-632 ई॰) में 'हिन्दू' नाम से कोई क़ौम न केवल अरब में, बल्कि भारत में भी पायी ही नहीं जाती थी (यह 'हिन्दू' शब्द बाद की शताब्दियों में बना है, इतिहासकारों ने इसकी पुष्टि की है)।

फिर यह 'काफ़िर' शब्द क़ुरआन में किस हैसियत में आया है ? दरअस्ल यह एक 'पहचान तय करने वाला शब्द' (Word of Identitification) है । यह 'ईमान लाने वाले' (मोमिन/मुस्लिम) व्यक्ति के विपरीत 'ईमान (इस्लाम) का इन्कार कर देने वाले' व्यक्ति के लिए प्रयुक्त हुआ है । उदाहरणत: 'ग्रेजुएट' के विपरीत 'नान-ग्रेजुएट' का शब्द, जो निस्संदेह पहचान (Identity) के लिए है, न कि अपमान के लिए या गाली के तौर पर ।

क़ुरआन की नीति

'काफ़िर' के लिए क़ुरआन में मोटे तौर पर दो क़िस्म की बातें आयी हैं । एक : इस जीवन (वर्तमान इहलौकिक जीवन) के लिए । दो : मृत्यु पश्चात (पारलौकिक) जीवन के लिए । चूंकि क़ुरआन (अर्थात इस्लाम) का सामान्य नियम है कि हर मनुष्य को यह अधिकार प्राप्त है कि वह ईमान (इस्लाम) को चाहे तो स्वीकार कर ले, चाहे अस्वीकार कर दे, 'दीन' (इस्लाम धर्म) में ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं है (2:256), इसलिए काफ़िर के प्रति न्याय, सत्यनिष्ठा, मानवीय मूल्यों तथा पूरे मानवाधिकार व न्यायिक मूल्यों के अनुकूल व्यवहार किया जाएगा । 'काफ़िरों' के बारे में क़ुरआन में जो भी बातें पकड़ने, मारने, क़त्ल करने की आयी है उन्हें पूरे संदर्भ (Context) के साथ पढ़ा जाए तो मालूम होगा कि यह युद्ध से संबंधित आदेश थे । मुसलमानों (और पैग़म्बर मुहम्मद सल्ल॰) को मक्का के काफ़िरों ने

13 वर्ष तक सताया था, प्रताड़ित व अपमानित किया था, दो बार मुसलमानों को मक्का छोड़कर हब्शा (इथोपिया) प्रवास पर मजबूर किया था । पूर्ण सामाजिक बहिष्कार (Social bycot) करके नगर से बाहर एक घाटी में तीन वर्ष तक जीवन-सामग्री से इस तरह वंचित रहकर जीने पर मजबूर कर दिया था कि घास खाने और सूखा चमड़ा उबाल कर उसका पानी पीने की स्थिति आ गयी थी । बच्चे भूख-प्यास से रूंदन करते, बिलखते थे । एकेश्वरवादी धर्म के अनुयायी होने के ''जुर्म'' में पूरी मुस्लिम आबादी को इस हद तक प्रताड़ित करने से भी जी न भरा तो उसे मक्का (जन्म-भूमि), अपना नगर, अपना घर-बार, सामग्री, आजीविका यहां तक कि बीवी-बच्चे, माता-पिता, परिवार भी छोड़कर 450 किलोमीटर दूर मदीना नगर के प्रवास (हिजरत, Migration) पर विवश कर दिया था । इसके बाद भी अपनी फ़ौजें और संयुक्त सेनाएं (अहज़ाब Allied Armies) लेकर मुसलमानों पर बार-बार चढ़ आते थे और पूरे अरब प्रायद्वीप में जगह-जगह इस्लाम और मुसलमानों का अरब से सर्वनाश कर देने के लिए हमलों की तैयारियां जारी रहती थी । तब जाकर अल्लाह ने मुसलमानों को इजाज़त दी कि इनसे युद्ध करो, जहां पाओ...पकड़ो, क़त्ल करो । यह ऐसे काम की इजाज़त या आज्ञा (आदेश) थी जो मानवजाति के पूरे इतिहास में, युद्ध-स्थिति में सदा मान्य रही है । शान्ति-स्थापना के लिए हर सभ्य समाज ने ऐसे युद्ध को मान्यता दी है । इतिहास साक्षी है कि इस्लामी शासनकाल में मुसलमानों ने जितने युद्ध लड़े, वे या तो आत्म-रक्षा के लिए थे या अरब व आस-पास के भूखंडों में शान्ति-स्थापना हेतु आक्रमणरोधक युद्ध (Pre-emptive war) के तौर पर लड़े गये । यथा-अवसर तथा यथा-संभव उन्होंने सदा 'सुलह' को 'युद्ध' पर प्राथमिकता दी । शान्ति-समझौतों को हमेशा वांछनीय विकल्प माना ।

मृत्यु पश्चात जीवन के लिए ईश्वर ने काफ़िरों (सत्य-धर्म के इन्कारियों) के लिए क़ुरआन में अनेक स्थानों पर इन्कार के प्रतिफल-स्वरूप, नरक की चेतावनी दी है । यह बिल्कुल ईश्वर और उसके बन्दों के बीच का मामला है । और ईश्वर, जो अपने तमाम बन्दों का रचयिता, प्रभु-स्वामी, पालक-पोषक (Provider, Sustainer, रब) है वह अपने बन्दों के बारे में, (उनके कर्मानुसार) जो भी फ़ैसला परलौकिक जीवन के लिए करे, इसका उसे अधिकार है, इसमें किसी मुसलमान की कोई भूमिका (Role) नहीं, न ही किसी भी व्यक्ति का आक्षेप (Interference) संभव है ।

काफ़िरों के प्रति व्यवहार

ऐसे 'काफ़िरों' के साथ, जो मुसलमानों (ईमान वालों) से लड़ते नहीं, उन्हें सताते नहीं, उन पर अत्याचार के पहाड़ नहीं तोड़ते, उन्हें उनकी आबादियों, बस्तियों, नगरों से निकालते नहीं, उनके ख़िलाफ़ युद्धरत नहीं होते, कमज़ोरों को दबा-दबाकर उनका जीना अजीरन नहीं करते; इस्लाम ने सौहार्द, प्रेम-व्यवहार, आदर, इन्साफ़ और शान्तिमय रूप से रहने, भले कामों और अच्छाइयों में सहयोग देने, सहयोग लेने, शान्ति-संधि समझौता करने तथा ठीक मुसलमानों ही की तरह उनके मानव-अधिकार देने तथा उनके अधिकारों की रक्षा करने की शिक्षा व आदेश दिया है ।

निष्कर्ष यह है कि 'काफ़िर' शब्द एक गुणवाचक संज्ञा (Qualitative Noun) है; इसका किसी विशेष जाति, नस्ल, क़ौम, क्षेत्रवासी समूह या रंग व वर्ग से कुछ संबंध नहीं । जो भी इस्लाम का इन्कार करे वह पहचान के तौर पर 'इन्कारी' (अर्थात कुफ़्र करने वाला) कहलाता है ।

''ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, जो कुछ धन-सामग्री हमने तुमको प्रदान की है, उसमें से ख़र्च करो इससे पहले की वह दिन आए, जिसमें न ख़रीद-बिक्री होगी, न दोस्ती काम आएगी और न सिफ़ारिश चलेगी ।''
(क़ुरआन, 2:254)

A WELL WISHER
GOA

धरती पर ये विभिन्न धर्म क्यों?

❖ नीलोफ़र शम्सी



> “क़ुरआन और तमाम वे किताबें जो विभिन्न समयों और विभिन्न भाषाओं में अवतरित हुईं । सबकी सब एक ही किताब हैं । एक ही उनका लेखक है और एक ही उनका उद्देश्य है और एक ही ज्ञान है जो उनके द्वारा मानवजाति को प्रदान किया गया ।”

आज के समय में इस्लाम के ख़िलाफ़ विभिन्न संचार माध्यमों के द्वारा मिथ्यारोपों का एक तूफ़ान खड़ा किया गया है जिसमें बार-बार यह समझाने का प्रयास किया जा रहा है कि इस्लाम एक ऐसा धर्म है जो धरती पर मुसलमानों के अतिरिक्त अन्य धर्म वालों को देखना पसन्द नहीं करता । सोशल मीडिया ने, जो आज के दौर में बिल्कुल बेलगाम है, इस आग में और भी घी डालने का प्रयास किया और इस्लाम के ख़िलाफ़ भय एवं आतंक तथा नफ़रत का ऐसा वातावरण पैदा कर दिया है कि इस्लाम या मुस्लिम का नाम सुनते ही लोग सहम जाते हैं और कुछ जाने-बूझे बिना इस्लाम को बुरा-भला कहने लगते हैं ।

इस्लाम विरोधी शक्तियों का यह अभियान जो आरम्भ तो बहुत पहले हुआ था, परन्तु नये संचार माध्यमों उदाहरणार्थ सोशल मीडिया के आ जाने से यह झूठ बहुत तेज़ी से फैलने लगा और अच्छे-ख़ासे लोग विशेषकर युवाओं एक बड़ा वर्ग इस दुष्प्रचार से बुरी तरह प्रभावित हो चुका है ।

इस्लाम विरोधी शक्तियों ने अन्य सभी माध्यमों के साथ-साथ क़ुरआन की विभिन्न आयतों का ग़लत अनुवाद किया । संदर्भ से हटाकर उन आयतों को लोगों के सामने इस ढंग से प्रस्तुत किया कि लोग यह समझ लें कि यह मात्र प्रोपेगंडा नहीं है, बल्कि यह क़ुरआन की मौलिक शिक्षाएं हैं ।

इन्हीं आयतों में से सूरा-5 माइदा की आयत-48 है, जिसको यह कहकर पेश किया जाता है कि अल्लाह चाहता तो सारे संसार के लोगों को एक ही उम्मत बना देता । इसलिए मुसलमान सारे संसार के लोगों को एक ही समुदाय अर्थात मुसलमान बनाने के प्रयास में सारे हथकंडे अपना रहे हैं । हालांकि इस आयत में जो बात कही गयी है वह न केवल यह कि उनके विचारों के ख़िलाफ़ है, बल्कि ग़ैर-मुस्लिमों के साथ अच्छे आपसी संबंधों की ओर मार्गदर्शन करती है । सूरा-5 माइदा की आयत-48 का अनुवाद इस प्रकार है–

“फिर ऐ नबी ! हमने तुम्हारी ओर यह किताब भेजी जो सत्य लेकर आयी है और अल-किताब (मूल किताब) में

से जो कुछ इससे आगे मौजूद है उसकी पुष्टि करने वाली और उसकी रक्षक है । अत: तुम ख़ुदा के अवतरित किये हुए क़ानून के अनुसार लोगों के मामलों का फ़ैसला करो और जो सत्य तुम्हारे पास आया है उससे मुंह मोड़कर उनकी इच्छाओं का पालन न करो । हमने तुम (इन्सानों) में से प्रत्येक के लिए एक शरीअत (धर्म विधान) और एक व्यावहारिक नीति निर्धारित की है । यदि तुम्हारा ख़ुदा चाहता तो तुम सबको एक समुदाय बना सकता था, परन्तु उसने यह इसलिए किया कि जो कुछ उसने तुमको दिया है, उसमें तुम्हारी परीक्षा ले । अत: भलाइयों में एक-दूसरे से आगे बढ़ जाने का प्रयास करो । आख़िरकार तुम सबको ख़ुदा की ओर पलट कर जाना है । फिर वह तुम्हें अस्ल हक़ीक़त बता देगा जिसमें तुम मतभेद करते रहे हो ।"

(अनुवाद मौलाना मौदूदी)

ज़रा ध्यान दीजिए । इस पूरी आयत को पढ़ने के बाद कोई भी इन्सान जो पक्षपात से मुक्त हो, यह अर्थ निकाल सकता है कि कुरआन इस आयत के द्वारा असहिष्णुता और असहनशीलता की शिक्षा दे रहा है । संक्षिप्त रूप से इस आयत से जो अर्थ निकलता है, वह निम्नलिखित है–

(1) कुरआन और तमाम वे किताबें जो विभिन्न समयों और विभिन्न भाषाओं में अवतरित हुईं । सबकी सब एक ही किताब हैं । एक ही उनका लेखक है और एक ही उनका उद्देश्य है और एक ही ज्ञान है जो उनके द्वारा मानवजाति को प्रदान किया गया ।

(2) शरीअत या इस्लामी क़ानून जो विभिन्न परिस्थितियों और विभिन्न समयों में प्रस्तुत किये गये, वे उन क़ौमों या उन समयों की दृष्टि से थे ।

(3) अल्लाह ने जान-बूझकर सबको एक समुदाय नहीं बनाया, हालांकि वह चाहता तो ऐसा कर सकता था । जैसे वृक्ष, सूरज, चांद आदि एक ही क़ानून के पाबन्द हैं ।

(4) उसने ऐसा इसलिए नहीं किया कि वह चाहता था कि इन्सान की परीक्षा ले कि वह भलाई और बुराई में से कौन-सी राह चुनता है ।

(5) अल्लाह ने यह शिक्षा दे दी कि ऐ इन्सानो ! न केवल यह कि तुम भलाई और नेकी का मार्ग अपनाओ, बल्कि भलाई और नेकी में एक-दूसरे से आगे बढ़ने का प्रयास करो कि यही तमाम शरीअतों का मूल उद्देश्य है ।

यह है वह अर्थ जो इस पूरी आयत का मक़सद है । यानी जैसा कि ऊपर कहा गया है कि यह आयत विभिन्न धर्मों के दरमियान उदारता एवं सौहार्द की शिक्षा देती है, न कि असहिष्णुता की।

सत्य की तरफ़दारी

'तबक़ाते अकबरी' इतिहास की एक पुस्तक है जो अकबर के शासनकाल में संकलित की गयी । उसमें लिखा है कि सिकन्दर लोधी ने अपने बचपन में सुना था कि थानेसर में एक तालाब है, हिन्दू उसको शुभ समझते हैं और उसमें स्नान करने को पुण्य कार्य समझते हैं और यह कि वहां एक मन्दिर भी है, जो हिन्दुओं का पूजा स्थल है । सिकन्दर लोधी ने इस्लामी विद्वानों से बुतों के इस घर को ढाने के लिए फ़तवा (धर्मादेश) पूछा । आलिमों (इस्लामी विद्वानों) ने कहा कि "हिन्दुओं के पुराने मन्दिर को आप इस प्रकार नहीं ढा सकते, और न आप हिन्दुओं को तालाब में नहाने से रोक सकते हैं ।" शहज़ादे को यह सुनकर बहुत गुस्सा आया उसने क्रोधित होकर खंजर निकाला और कहा कि "तुम अल्लाह को न मानने वालों का पक्ष लेते हो ?"

यह सुनते ही सबसे बड़े आलिमे दीन अब्दुल्लाह ने पूरी हिम्मत से कहा, "हम अविश्वासियों की नहीं सत्य की तरफ़दारी करते हैं और वही कहते हैं जिसका इस्लाम में निर्देश है । हमको इस्लामी शिक्षाओं और सत्य बात करने से कोई नहीं रोक सकता ।" यह सुनकर सिकन्दर लोधी चुप हो गया । (तबक़ाते अकबरी)

इस्लाम ने सहिष्णुता और सार्वभौमिक स्वीकृति का पाठ पढ़ाया

❖ **नकीबुल हक़**

इस्लाम धर्म जो आदम और हुव्वा से चला आ रहा है, आख़िर में मुहम्मद (सल्ल॰) पर पूर्ण हुआ है । यह धर्म आदि काल से प्रारंभ है और ताक़यामत तक धरती पर रहेगा । आदिकाल से चली आ रही इस परंपरा एवं संस्कृति में, समय-समय पर धर्म में नबी/महात्मा आते रहे और इन्सानों को भटकाव से सफलता के तरफ़ मार्गदर्शन करते रहे और आख़िर में मुहम्मद (सल्ल॰) पर ईश्वर ने अपनी सभी कृपा को पूर्ण करते हुए ताक़यामत तक के लिए प्रेरणा का स्रोत बना दिया ।



अल्लाह ने अपने दिशा-निर्देश दुनिया में अपने विशेष दूतों के माध्यम से दिये हैं जिन्हें पैग़म्बर या रसूल कहा जाता है । अल्लाह ने दुनिया में बहुत से पैग़म्बर पैदा किये जिन्होंने समय-समय पर अपने-अपने समाज में अल्लाह के आज्ञा- पालन की सीख दी । पैग़म्बरों की इस शृंखला की अन्तिम कड़ी हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) हैं । अत: इस्लाम की जीवन प्रणाली हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने निर्धारित की है । आपके ऊपर अल्लाह का आख़िरी कलाम उतरा जो पवित्र क़ुरआन में संकलित है । इसे हज़रत मुहम्मद साहब ने अपने सामने संकलित और क्रमित कराया और हमेशा के लिए सुरक्षित किया । इस क़ुरआन में मुहम्मद साहब का अपना कोई कथन शामिल नहीं है । आपके अपने कथन और कर्मों का विवरण हदीस के नाम से अलग संकलित किया गया है जो आपके साथियों (सहाबियों) ने और उनके बाद आने वाले विशिष्ट आलिमों ने एकत्र किया है और उनकी विश्वसनीयता की छानबीन करके उन्हें प्रकाशित किया है ।

इस्लाम धर्म एक सार्वभौमिक धर्म है, इस्लाम की शिक्षाएं सभी मानवजाति के लिए हैं, इस्लाम केवल एक विशेष वर्ग, संस्कृति और रंग व नस्ल के लोगों को संबोधित नहीं करता बल्कि सभी इन्सानों को संबोधित करता है, वह धर्म दया का धर्म है ।

क्योंकि शब्द इस्लाम का अर्थ ही सुरक्षा (सलामती) है तो इस्लाम जो वहदहू लाशरिक लहु, एक ईश्वर को पूजनीय क़रार देता है वह रहमान और रहीम, बल्कि अरहमूर राहिमीन (सबसे ज़्यादा दया करने वाला) है, इस्लाम का आख़िरी पैग़म्बर जिसको मानता है वह रहमतुल्लिल आलमीन (दुनिया के लिए रहमत) है ।

अर्थात ईश्वर और पैग़म्बर दोनों दया है (अल्लाह रब्बुल आलमीन और रहमतुल्लिल आलमीन को विशेष मुस्लिम

क़ौम का पैग़म्बर समझ लिया है, जबकि अल्लाह सभी ब्रह्माण्ड का प्रभु और पैग़म्बर (सल्ल॰) पूरी मानवता और दुनिया के नबी हैं । महिंद्रा सिंह बेदी ने इस आशय में अपने एतिराज़ का वर्णन किया है–

इश्क़ हो जाए किसी से कोई चारा तो नहीं
सिर्फ़ मुस्लिम का मुहम्मद (सल्ल॰) पर इजारह तो नहीं

इस्लाम एक ऐसा धर्म है जो प्रत्येक मानवता को मात्र एक अल्लाह से सीधा जोड़ता और उन सबको एक माता-पिता की संतान और भाई-भाई होने की कल्पना देता है और यह कहता है कि किसी जगह, विभिन्न धर्मों के मानने वाले रहते हों तो इस्लाम अन्य धर्मों के अनुयायियों के साथ हर तरह से नरम रवैया अपनाया जाए, सहिष्णुता में विश्वास रखा जाए, मतलब यह कि दूसरों के धार्मिक विश्वासों, भावनाओं और संस्कृति का सम्मान किया जाए, इस संबंध में कोई ऐसा काम न किया जाए कि उनकी भावनाओं को ठेस पहुंचे ।

फ्रेंच लेखक गोस्ताफ़ लोबोन ने कहा : ''लोगों ने अरबों के जैसे सहिष्णुता का व्यवहार करने वाला कोई समुदाय नहीं पाया और न अरबों के धर्म के जैसे किसी अन्य धर्म में वैसी सहिष्णुता देखी गयी ।'' जो व्यक्ति भी इस्लाम का विशाल हृदय से अध्ययन करेगा उसकी सत्यता, उदारता तथा धार्मिक सहिष्णुता का समर्थन किये बिना नहीं रह सकता । अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के बाद चारों ख़लीफ़ाओं ने भी धार्मिक सहिष्णुता को बरक़रार रखा । उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि॰) के युग की घटना है ।

जब मुसलमानों ने बैतुल-मक़दिस पर विजय प्राप्त कर लिया तो उमर (रज़ि॰) यरुशलम पहुंचे और एलिया के निवासियों के साथ जो अनुबंध किया, इसके यह शब्द थे : ''यह अनुबंध है जो अल्लाह के दास अमीरुल मोमिनीन उमर ने एलिया के निवासियों को दी, यह अनुबंध जान-माल, गिरजाघर, सलीब, स्वस्थ और बीमार और उन सभी धार्मिक लोगों के लिए है, न उनके गिरजाघर में किसी को रहने दिया जाएगा, न वह गिराए जाएंगे, न उनके परिसर को नुक़सान पहुंचाया जाएगा, न उनके सलीबों और उनके धन में कमी की जाएगी, धर्म के बारे में उन पर कोई ज़बरदस्ती नहीं की जाएगी, न ही उनमें से किसी को नुक़सान पहुंचाया जाएगा ।''

इस्लाम की सहिष्णुता देखिये कि दमिश्क की मस्जिदे



कबीर की मरम्मत के लिए वलीद बिन अब्दुल मलिक ने एक चर्च के कुछ भाग को उसमें शामिल कर लिया था, जब उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह॰) ख़लीफ़ा हुए तो उन्होंने मस्जिद के इस भाग को तोड़ कर चर्च को वापस कर दिया ।

जब अलेक्जेंड्रिया पर मुसलमानों ने विजय पायी, तो इस अवसर से एक मुस्लिम सैनिक ने ईसा अलैहिस्सलाम की एक छवि की आंख फोड़ दी । इसाईयों ने मिस्र के गवर्नर हज़रत अम्र बिन आस (रज़ि॰) के पास शिकायत की, हज़रत अम्र बिन आस (रज़ि॰) ने स्वयं उनसे पूछा कि आप लोग ही बताएं कि इस अपराध की क्या सज़ा होनी चाहिए, इसका क्या समाधान होना चाहिए, उन्होंने बदले में मांग की कि वैसे ही हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की भी तस्वीर बनाकर लटकाई जाए ताकि हम भी उसकी आंख फोड़ सकें ।

उमर बिन आस (रज़ि॰) ने कहा : हम मुसलमान अपने नबी की तस्वीर बनाते ही नहीं तो आख़िर यह अनुमति हम तुम्हें कैसे दे सकते हैं, हां ! इसके बदले में मेरी आंखें उपस्थित हैं आप उन्हें फोड़ सकते हो । यह न्यायपूर्ण फ़ैसला सुनकर वह लज्जित हुए, अत: उन्होंने माफ़ कर दिया और बदला नहीं लिया ।

राष्ट्रपति बुश 2003 में कहा था कि अमेरिका को इस्लाम के प्रति पूरी आस्था और आदर है । अमेरिका में भी बड़ी संख्या में मुसलमान हैं और हम जानते हैं कि इस्लाम सहिष्णुता, स्वतंत्रता और तरक़्क़ी के पूरी तरह अनुकूल है ।



इस्लाम और धार्मिक सहिष्णुता

❖ **शुऐब आलम क़ासिमी**

इस्लाम एक सार्वभौमिक धर्म है, इस्लाम की शिक्षाएं सभी मानवजाति के लिए हैं, इस्लाम केवल एक विशेष वर्ग, संस्कृति और रंग व नस्ल के लोगों को संबोधित नहीं करता, बल्कि सभी इन्सानों को संबोधित करता है, वह धर्म दया का धर्म है । क्योंकि शब्द इस्लाम का अर्थ ही सुरक्षा (सलामती) है तो इस्लाम जो वहदहू ला-शरिक लहु, एक ईश्वर को पूजनीय क़रार देता है वह रहमान और रहीम बल्कि अरहमूर राहिमीन (सबसे ज़्यादा दया करने वाला) है, इस्लाम जिस जाति को पैग़म्बर मानता है वह रहमतुल्लिल आलमीन (दुनिया के लिए रहमत) है । इस्लाम का क़िबला शांति का गहवारा है । इस्लाम का महीना आरंभ सुरक्षा की दुआ के साथ होता है । इस्लाम की इबादत (पूजा) में भी शांति और सुरक्षा की दुआएं है । मुसलमान मरता भी है तो शांति व सलामती और इताअत व फ़रमांबरदारी की मौत मरना चाहता है ।

इसलिए इस्लाम के अर्थ, उसके उद्देश्यों तालीमात, इसकी शुरुआत और आग़ाज़ और प्रकाशन सभी ही शांति और सुरक्षा है, तो उस धर्म से ज़्यादा शांति व सलामती किस धर्म में हो सकती है ।

आलोचकों का प्रोपेगंडा

लेकिन इस्लाम के आलोचक तरह-तरह के प्रोपेगंडे करते हैं और संवेदनहीन आरोपों द्वारा इस्लाम को हिंसक और आतंकवादी धर्म बताते हैं, जबकि मुसलमानों को ज़ालिम व आतंकवादी घोषित करने के लिए संघर्ष करते रहते हैं और दुनिया की नज़रों में इस्लाम की छवि को कलंकित करने की ताबड़तोड़ कोशिश में व्यस्त रहते हैं । वे विभिन्न ऐतिहासिक घटनाओं को तोड़-मरोड़ कर और उन्हें ग़ैर-वाक़ई तरीक़े से पेश करके इस्लामी शिक्षाओं से जोड़ते हैं और यह साबित करते हैं कि इस्लाम में विस्तार और सहिष्णुता नाम की कोई चीज़ नहीं है, बल्कि इस्लाम हिंसा और ख़ूंख़ार पसंद धर्म है ।

अपने संदर्भ से क़ुरान की कुछ आयतों (छंदों) को अपने इरादे के अनुसार कटौती और उनका अर्थ बयान करके अपने हम विचारों में उत्तेजना पैदा करने की कोशिश करते हैं, जबकि वास्तविकता इसके बिल्कुल उलट है ।

क़ुरआन में धार्मिक सहिष्णुता

अल्लाह सर्वशक्तिमान इरशाद फ़रमाता है : ''ऐ ईमान वालो ! ऐसे बन जाओ कि अल्लाह (आज्ञाओं के पालन) के लिए हर समय तैयार रहो, और किसी क़ौम की दुश्मनी तुम्हें इस बात पर आमादा न करे कि तुम अन्याय करो, न्याय से काम लो, यही तरीक़ा है अल्लाह के क़रीब होने का, और अल्लाह से डरो, अल्लाह तुम्हारे काम से पूरी तरह ख़बरदार है । इस आयत के अंदर सहिष्णुता को बतलाया है ।

मतलब यह है कि धर्म, सभ्यता, संस्कृति, भाषा या रंग नस्ल में मतभेद रखने वाले हर व्यक्ति के साथ चाहे वह दोस्त हो या दुश्मन न्याय का मामला किया जाए, उसके धर्म आदि के कारण उसके साथ कोई भेदभाव न किया जाए, न किसी की ज़्यादती या अत्याचार उचित होगा । क़ुरआन में अल्लाह तआला फ़रमाता है–

''यदि तुम्हारा रब चाहता तो सभी मनुष्यों को एक ही तरीक़े का पैरोकार बना देता (लेकिन किसी को जबरन किसी धर्म पर मजबूर करना हिकमत का तक़ाज़ा नहीं है, इसलिए अपने विकल्प अलग तरीक़े अपनाने का मौक़ा दिया गया) और अब वह हमेशा विभिन्न मार्गों पर ही रहेंगे ।''

इस आयत का अर्थ यह है कि, हर व्यक्ति के मद्देनज़र यह बात रहनी चाहिए कि विभिन्न क्षेत्रों में जो धार्मिक और वैचारिक मतभेद है वह स्वाभाविक है, इसे समाप्त नहीं किया जा सकता है । इसलिए उदारता का प्रदर्शन करना और दूसरों के धर्म, मान्यताओं विचार आदि को सहन करने के लिए हौसला पैदा करना चाहिए और उनके साथ धार्मिक, राजनीतिक और बौद्धिक सहिष्णुता का मामला होना चाहिए ।

विरोधियों की तरफ़ से एक आरोप यह दिया जाता है कि इस्लाम धर्म का प्रकाशन तलवार के ज़ोर से हुआ, जबकि उसका कोई सबूत नहीं मिलता, तथ्य यह है कि इस्लाम कृपा, नैतिकता और सहिष्णुता से फैला है । क़ुरआन स्पष्ट नियम वर्णन करता है (सूरा बक़रा, आयत-256) इस्लाम में धर्म के लिए कोई ज़बरदस्ती नही है । हिदायत का रास्ता गुमराही से मुमताज होकर वाजेह हो चुका ।

धार्मिक सहिष्णुता को लेकर एक बड़ी कोताही हमारे द्वारा भी हो रही है, धार्मिक सहिष्णुता वह उज्ज्वल और उदाहरण जो अतीत में मिलता है, मौजूदा दौर में बहुत कम हो गया है-और हमने इस्लाम के एक महत्वपूर्ण आदेश इस्लाम का प्रकाशन और प्रचार-प्रसार बहुत कम कर दिया है और हमने इस्लाम के एक अहम हुक्म दावत-ए-इस्लाम और तब्लीग़े-दीन को बिल्कुल तर्क कर दिया है । अल्लाह रब्बुल्ल आलमीन और रहमतुल्लिल आलमीन को विशेष मुस्लिम क़ौम का प्रभु और पैग़म्बर समझ लिया है, जबकि अल्लाह सभी ब्रह्माण्ड का प्रभु और पैग़म्बर (सल्ल॰) पूरी मानवता और दुनिया के नबी हैं । इस संदेश को आम किया जाए और अन्य क़ौमों को इसकी दावत दी जाए अल्लाह सबके प्रभु और मुहम्मद अरबी (सल्ल॰) सबके नबी और रसूल हैं, तो कुछ दूरियां कम होंगी और आपसी फ़ासले सिमट जाएंगे ।

''आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है सब अल्लाह का है । तुम अपने दिल की बातें चाहे खोल दो, या छिपाओ अल्लाह हर हाल में उनका हिसाब तुमसे ले लेगा । फिर उसे अधिकार है, जिसे चाहे माफ़ कर दे और जिसे चाहे सज़ा दे ।'' (क़ुरआन, 2:284)

A WELL WISHER
KOTA (Raj.)

इबादत की आज़ादी

संकलन : **अबुल फ़हम वहीद अली ख़ां**

मुहम्मद बिन क़ासिम सिंध के इलाक़ों को फ़तह करता हुआ जब ब्रह्मनाबाद तक आ गया और उसे अपने क़ब्ज़े में ले लिया तो उस समय बहुत से मन्दिरों के पुजारी उसके पास आये और कहा, "ऐ मुहम्मद बिन क़ासिम ! हिन्दुओं ने मुसलमान सिपाहियों के डर से मूर्तिपूजा के लिए मन्दिरों में आना कम कर दिया है, जिससे हमारी आय कम हो गयी है ।

मन्दिरों की मरम्मत भी नहीं हुई है, लड़ाई के हंगामों और घेराबन्दी के दिनों में मुस्लिम सेनाओं के पत्थरों से हमारे मन्दिर कहीं-कहीं से टूट गये हैं, आप अपनी ओर से हमारे मन्दिरों को ठीक करा दो और हिन्दुओं को इस बात पर राज़ी करो कि वे मन्दिरों में पुन: आने लगें । आपने किसानों, व्यापारियों और कारीगरों पर बहुत कृपा की है, हम लोग जो मन्दिरों के प्रबंधक हैं, आपकी कृपा से वंचित क्यों रहें ?

मुहम्मद बिन क़ासिम ने कहा तुम्हारे मन्दिरों का प्रबन्ध अलवर से संबंधित है (उस समय तक अलवर क़ब्ज़े में नहीं आया था)। ब्राह्मणों ने कहा कि, "उन मन्दिरों के प्रबंधक हम स्वयं हैं और अब आपकी प्रजा बन चुके हैं । आपने धार्मिक स्वतंत्रता की उद्घोषणा की है । अत: हमारे मन्दिरों का निर्माण तथा हमारी आय में वृद्धि आपको करनी ही पड़ेगी ।"

मुहम्मद बिन क़ासिम इस विषय में अपनी राय से कुछ निर्णय न कर सका उसने तुरन्त हज्जाज बिन यूसुफ़ के पास एलची भेजा और ब्राह्मणों की मांग का विवरण लिखकर सुझाव मांगा । हज्जाज ने लिखा–

"तुम्हारे पत्र से पता चला कि ब्रह्मनाबाद के हिन्दू अपने मन्दिरों के भवनों को ठीक कराना चाहते हैं । चूंकि उन्होंने अधीनस्थ रहना स्वीकार कर लिया है, अत: उनको अपने उपास्यों की उपासना में आज़ादी होनी चाहिए और किसी प्रकार की ज़ोर-ज़बरदस्ती उचित नहीं है ।"

यह पत्र मुहम्मद बिन क़ासिम के पास उस समय पहुंचा जब वह ब्रह्मनाबाद से लोहाना की ओर ब्रह्मनाबाद से कुछ दूरी पर ठहरा हुआ था । इस पत्र के मिलने पर मुहम्मद बिन



क़ासिम ने ब्रह्मनाबाद वापस आकर वहां के तमाम उच्चाधिकारियों को बुलाया और ब्राह्मणों अर्थात पुजारियों के अधिकारों की जांच-पड़ताल की । और यह कि राजा दाहिर के काल में राज्य की ओर से कौन-कौन-सी सुविधाएं ब्राह्मणों को प्राप्त थीं, उनका मालूम किया । उसके बाद उन्होंने नगर में उद्घोषणा करा दी जो लोग अपने बाप-दादा के समय से चली आ रही रस्मों का पालन करना चाहते हैं, उनको उन रस्मों के पालन में पूरी स्वतंत्रता प्राप्त है । कोई व्यक्ति इस पर आपत्ति नहीं कर सकता, जिस प्रकार पहले ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा दी जाती थी, अब भी उसी प्रकार दें और अपने मन्दिरों में पूजा-पाठ करें ।

इन हालात को जानकर हज्जाज बिन यूसुफ़ ने मुहम्मद बिन क़ासिम को बधाई दी और लिखा कि दूरी इतनी अधिक है कि पत्र का उत्तर पहुंचने में बहुत देर हो जाती है और इससे कामों में देरी होती है । अत: अब तुम स्वयं अपनी समझ से न्याय का ध्यान रखते हुए अपने फ़ैसले करो ।

(आईना-ए-हक़ीक़त नुमा, भाग-1, पृ॰-98)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया, ''अल्लाह से अधिक सहनशील और कोई नहीं । लोग उसके पुत्र होने और साथी होने की बात करते हैं, फिर भी वह उनकी रक्षा करता है और उन्हें आजीविका प्रदान करता है ।''

(बुख़ारी, मुस्लिम)

A WELL WISHER

Malerkotla

PUNJAB

गुंडागर्दी अधार्मिकता का परिणाम

भारत में तीन धर्मों ने जन्म लिया और कुछ दूसरे धर्म हमारे समाज का अटूट अंग बन गये । हमारे देशवासी मूल रूप से धार्मिक प्रवृत्ति के हैं । सांप्रदायिकता, जिसका प्रदर्शन हम गत सौ वर्षों से देख रहे हैं, वह विदेशी शासन का उपहार है । सांप्रदायिकता का धर्म से दूर का भी संबंध नहीं, सांप्रदायिकता तो हर समय धार्मिक मूल्यों को नष्ट करने पर तुली रहती है । जिन अतिवादियों द्वारा महिलाओं और बच्चों पर अत्याचार किया जाए उनका भला क्या धर्म हो सकता है । वे न ईश्वर में आस्था रखते हैं, न ही उन्हें परलोक की कोई चिन्ता है । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भौकितवाद और नास्तिकता की जो लहर उठी है, उसने इस प्रकार ही गुंडागर्दी को बढ़ावा दिया है । इस गुंडागर्दी का इलाज केवल धर्म की छत्रछाया में है । आज ज़रूरत इस बात की है कि हिन्दुओं में से ऐसे लोग आगे आएं जो अपने रचयिता और पालनहार के प्रति समर्पित हों, जो श्रेष्ठ मानव मूल्यों का नमूना पेश करके जनता को इधर-उधर भटकने से बचाएं ।

● **तेज बहादुर सप्रू**

मुद्रक एवं प्रकाशक मुहम्मद अहमद द्वारा दावत ट्रस्ट (रजि॰), D-314, दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव, जामिया नगर, नयी दिल्ली-110025 से प्रकाशित एवं भारत ऑफ़सेट प्रेस, 2035, क़ासिम जान स्ट्रीट, बल्लीमारान, दिल्ली-110006 से मुद्रित । फ़ोन : 011-26949430, 09818799223

संपादक : डॉ॰ मुहम्मद अहमद

संस्था की लिखित अनुमति के बिना सम्पूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णत: प्रतिबंधित है ।

KANTI

Current A/c. No. :0990839195

IFS Code : IDIB000J029

Indian Bank, Jamia Millia Islamia branch

New Delhi 110025

कृपया पैसा जमा करने के बाद फोन न. 011-26949430, मोबाइल न. 9818799223 या ई मेल : managerkantidelhi@gmail.com पर अवश्य सूचित करें।

Restockist of

Hindustan Unilever Ltd.

ALBA TRADERS

19, Rathod Layout, Near Noori Masjid
Jafar Nagar Ring Road, Nagpur - 440 013
Mobile No. : 9158428686
E-mail : albatraders@rediffmail.com

Mirza Sharique Baig
M : 9372425965, 9660020163

Babbu
HOTEL

Mominpura Chowk, Nagpur
Ph. 0712-6068333
E-mail : sharikbaig@yahoo.co.in

With Best Compliment From

DR. M. A. PATANKAR

Al-Khaleej Diagnostic Centre









M-2, 2nd Floor, Above SBI Bank
South Extension Part-2, New Delhi-110049
Email : alkhaleejdc@yahoo.com
Tel. No. : 011-26262680-41646577

AL-KABIR POLYTECHNIC
JAMSHEDPUR

A Muslim Minority Vnaided Institution
Recognised by SBTE, Govt. of Jharkhand
& Approved by AICTE Govt. of India

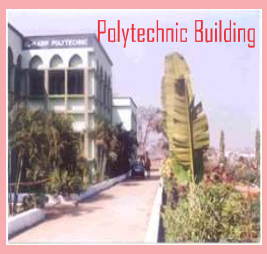

The institute in its academic program imparts three year diploma courses in engineering in following branches.

- Civil Engg.
- Electrical Engg.
- Mechanical Engg.
- Automobile Engg.
- Computer Science & Engg.
- Electronics & Communication Engg.



Laboratories and workshop

★ ★ ★

Kabir Nagar, P.O. Kopali, Via-Mango,
Jamshedpur-831012, Jharkhand
Tel. : 06591-260092, Tele Fax : 06591-260414
E-mail : principal_akpjsr@rediffmail.com
Website : www.al-kabirjsr.com


CROWN
DELTA
Maker your life easy
High Performance Mixer Grinder
750W
365
3 JARS
CROWN
DELTA
Maker your life easy
High Performance Mixer Grinder
750W
365
3 JARS
CROWN
A Quality Product From
CROWN
CROWN
RANGE OF PRODUCTS FANS
CEILING FAN
Table Fan
Tower Fan
NOT FOR COMMERCIAL USE



With Best Compliments from :

MAKING THE
[EXTRA]ORDINARY

LIS (INDIA)
CONSTRUCTION CO. PVT. LTD.

BUILDERS & DEVELOPERS

Regd. office: A/2, Swati Apartment, Juhu Lane, Andheri (W), Mumbai - 400 058
Ph.: 2625 5702-34 Fax: 262 88474 Email: lis.co.in.@gmail.com

”مگر تم تو دنیا کی زندگی کو ترجیح دیتے ہو حالانکہ آخرت بہت بہتر اور پائندہ تر ہے۔“ (الاعلیٰ: ۱۶، ۱۷)

Seahath Canning Company

Seahath Canning Company
Plot No.8,Margoa Industrial Estate
St.Jose de Areal.Post Curtorium
Margo,Goa 403709,INDIA

Tel.:+91-832-2860412/6481562
Email:info@seahath.com I www.seahath.com

Posted on 20-21 December 2019
January 2020
Posted Delhi RMS Delhi-110006
E-mail: kantihindimonthly@yahoo.com
Publishing Date: 18.12.2019
Total pages 116 with Cover

हिन्दी भाषियों की मासिक पत्रिका
क्रान्ति
NEW DELHI-110025

RNI 53372/91
DL(S)-05/3147/2018-2020
LICENSED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
License No. U (SE)-73/2018-2020

VISION 2026
Creating Partnership with the Needy

MAKE A WARM WINTER
FOR POOR & NEEDY



APPEAL FOR
WINTER RELIEF

BLANKET
DISTRIBUTION
PROGRAM 2019-20

DONATE A BLANKET
500 INR

DEPOSIT YOUR CONTRIBUTION

SOCIETY FOR BRIGHT FUTURE

CURRENT A/C NO.
6318812353

BANK
INDIAN BANK
JAMIA MILLIA ISLAMIA, NEW DELHI-25

IFSC
IDIB000J029

(EMAIL US THE DETAIL OF TRANSACTION WITH POSTAL ADDRESS ATACCOUNT@HWFINDIA.ORG OR WHATSAPP 7042892026)

BRINGING HELP and HOPE
SOCIETY FOR BRIGHT FUTURE

SOCIETY FOR BRIGHT FUTURE
E-89, 4th Floor, Hari Kothi Lane, Abul Fazl Enclave, Jamia Nagar, New Delhi - 110025 (India)
Email : info@sbfindia.org, Phone : +91 11 29945999 | Mb : +91 70428 98307 | 70428 98310

vision2026in
www.vision2026.org.in